ISSN No : 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

SAAHAS
Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors

भाग 4 अंक 3 दिसंबर 2024

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

3/2, ड्रमण्ड रोड, (नथानी अस्पताल के सामने), प्रयागराज-211001, (U.P.) दूरभाष-9452254524
वेबसाइट : saahasindia.org, ई-मेल-contact.saahas@gmail.com
Article Submission :– krishiudyandarpan.hi@gmail.com

सम्पादकीय मण्डल

प्रधान संपादक	:	**डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, उद्यान विज्ञान विभाग एवं फल विज्ञान विभाग चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
वरिष्ठ संपादक	:	**डॉ. रोशन लाल राऊत** वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (एम.पी.)
सह सम्पादक गण	:	**डॉ. नीलम राव रंगारे** वैज्ञानिक, संस्था निदेशालय इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, लाभण्डी, रायपुर (छत्तीसगढ़) **डॉ. नंगखाम जेम्स सिंह** पशुचिकित्सक क्षेत्र सहायक,पशुपालन एवं डेयरी विभाग, शुआट्स, (उ.प्र.) **डॉ. खलील खान** मृदा वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर कानपुर देहात, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.) **डॉ. प्रमिला** सहायक अध्यापक-सह-वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग पं. दीन दयाल उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरी, कोठा, बिहार **प्रखर खरे** एम.एस.सी. उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज (उ.प्र.)
पांडुलिपि संपादक	:	**स्निग्धा हल्दर** सहायक संपादक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)
कंटैट लेखक/ स्तंभ लेखक	:	**डॉ. विशाल नाथ पाण्डेय** विशेष कार्य अधिकारी आई.सी.ए.आर., आई.ए.आर.आई, झारखण्ड, हजारीबाग (झारखण्ड)
फोटोग्राफी	:	**स्वप्निल सुभाष स्वामी** वेब एडिटर प्रितेश हलदार
प्रकाशक	:	**एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)**
प्रकाशक	:	**Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors (SAAHAS)**

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

इस पृष्ठ में

- बुंदेलखंड में लिलियम की वैज्ञानिक खेती — 1-5
  आशीष प्रताप सिंह, अमित कनौजिया, अजय कुमार सिंह, अजय कुमार, मेराज खान एवं नीतेश कुमार
- औषधीय गुणों से भरपूर भिंडी का महत्व — 6-8
  रोनक कूड़ी, संतोष चौधरी एवं महेश कुमार पूनिया
- पाईप विधि द्वारा बटन मशरूम का खाद तैयार करना — 9-11
  दयाराम, राम प्रवेश प्रसाद एवं सुधा नन्दिनी
- डाहलियाः जीवंत फूलों की खेती — 12-15
  सुधा पाटिल एवं ध्रुवी प्रजापति
- घरों की छतों पर बागवानीः एक सुन्दर व उपयोगी कला — 16-18
  विवेक कुमार त्रिपाठी, जितेन्द्र चौरसिया एवं रिद्धिमा त्रिपाठी
- उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में खुबानी की सफल बागवानी — 19-22
  गोपाल मणि, ओमवीर सिंह, रत्ना राय, रजनी पंत एवं दीक्षा रावत
- टमाटर की उत्पादन तकनीक — 23-26
  फूलसिंह मरकाम
- कृषि में ब्लॉकचेन तकनीकः पारदर्शिता और ट्रेसबिलिटी की नई दिशा — 27-30
  अंजना गुप्ता एवं आर. एल. राउत
- मशरूम बीज (स्पॉन) उत्पादन, स्वरोजगार एवं आय सृजन का साधन — 31-33
  राम प्रवेश प्रसाद, सुधा नन्दिनी एवं श्यालो कुमारी
- आँवला पाउडरः मानव रोगों से बचाव के उपाय — 34-35
  कु. कुसुम एवं इमामुद्दीन शाह
- सितम्बर माह में बागवानी के प्रमुख कृषि कार्य — 36-39
  पी. सी. चौरसिया, जी. एस. तोमर, ओकेश चंद्राकर, नवनीत राणा, अनुराग
- भू-स्वास्थ्य सुधार हेतु हरी खाद के रूप में ढैंचे का महत्व — 40-41
  प्रदीप कुमार, अमित कुमार एवं उपासना चौधरी

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

- न्यूट्रास्युटिकल्स के रूप में फलों का महत्व 42-46
  अंकित सिंह, शिवराज कुमार वर्मा, शशि बाला एवं योगेश चंद्र पटेल
- सब्जियों में बायोफोर्टिफिकेशन: कुपोषण के खिलाफ एक प्रभावी हथियार 46-48
  रोनक कूड़ी, प्रहलाद सहाय शर्मा, संतोष चौधरी एवं महेश कुमार पूनिया
- फल वृक्षों की सफल सघन बागवाना 49-53
  अन्जू पाल एवं हर्षिता बोरा
- बीजू आम: विविधता एवं संरक्षण 54-58
  प्रमिला, वरूण एवं अनिल कुमार सिंह
- भूजल संचयन और कम पानी की सिंचाई विधियाँ 59-61
  नरेन्द्र कुमार, देवेंद्र सिंह जाखड़, सुनील कुमार, हरदीप कलकल एवं ओम प्रकाश
- वृक्षारोपण हेतु स्थान का चयन, मृदा परीक्षण तथा मृदा व जल संरक्षण के उपाय 62-65
  नकुल राव रंगारे, रोहित कुमार एवं विजय बगारे
- पनीर का फूल: एक परिचय 66-67
  प्रमिला, राम प्रवेश प्रसाद, वरूण एवं अनिल कुमार सिंह
- जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें 68-71
  अमित तोमर
- हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव और अनुकूलन रणनीतियाँ 72-75
  अभय शर्मा, देविना वैद्य, भूपिंदर सिंह ठाकुर, जोगिन्द्र सिंह, विजय भारद्वाज एवं दिशा ठाकुर
- पूर्वी उत्तर प्रदेश में ग्रामीण आजीविका वृद्धि हेतु वृक्षों की भूमिका 76-80
  अनुभा श्रीवास्तव एवं प्रीतम कुमार बर्मन
- कृषि में घ्दऊ स्मार्ट खेती की ओर एक कदम 81-85
  अंजना गुप्ता एवं आर. एल. राउत
- कीवी फल 86-88
  कल्लोल कुमार परामानिक, ए. के. शुक्ला, जीतेन्दर कुमार, संतोष वटपाड़े एवं मधु पटियल

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

ISSN No. 2583-3316

बुंदेलखंड में लिलियम की वैज्ञानिक खेती

आशीष प्रताप सिंह*, अमित कनौजिया, अजय कुमार सिंह, अजय कुमार, मेराज खान एवं नीतेश कुमार

बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: amit_bbt@rediffmail.com

परिचय

लिलियम (*Lilium Sp.*) कन्दीय वर्ग का महत्वपूर्ण पुष्प है। यह लिलियेसी कुल का सदस्य है। इसके फूल अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक, चमकदार तथा विभिन्न रंगों के होते हैं। विभिन्न प्रकार की लिलियों में सबसे अधिक माँग ओरिएन्टल तथा एशियाटिक हाइब्रिड लिली की है। लिलियम के फूल निचले तथा मध्य पहाड़ी छेत्रो में जुलाई से सितम्बर के दौरान प्राप्त किये जा सकते है जबकि ऊँचे पार्वती झेत्रो में फूल अगस्त से अक्टूबर-नवम्बर तक मिलते है। लिलियम के फूल विभिन्न रंगों, आकारों व आकृतियों में पाए जाते है। अन्य व्यवसायिक पुष्पों की अपेक्षा लिलियम के फूल बाजार में उच्च मूल्य प्राप्त करते हैं। घरेलू पुष्प बाजारों में लिलियों में सबसे अधिक एशियाटिक लिली के पुष्प की खपत होती है। लिलियम की खेती बहुत पहले से व्यापारिक तौर पर अमेरिका, नीदरलैण्ड, जापान, इजरायल एवं अन्य देशों में की जाती है। भारत में इसकी खेती का प्रचलन पिछले एक दशक में बहुत ही तेजी से बढ़ा है। विश्व पुष्प बाजार में इसके फूल का स्थान सर्वोच्च कृतीत्व पुष्प में दसवां है। पुष्प उत्पादक लिलियम की खेती से लगातार अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। एशियाटिक लिलियम के दस किस्मों को बाँदा यूनिवर्सिटी ऑफ़ एग्रीकल्चर एंड टेक्नोलॉजी बाँदा उत्तर प्रदेश में लगाया गया जो की बाँदा में प्रायः उच्च तापमान रहता है बावजूद इसके, लिलियम के एक पौधे में अच्छी गुणवत्ता वाले अधिकतम सात पुष्प व न्यूनतम तीन पुष्प प्राप्त हुये। एशियाटिक लिली कट फ्लावर के रूप में उपयोग किया जाता है और गुलदस्ता भी काफी अच्छे बनाये जाते है, जो की काफी आकर्षक होते है।

मौसम एवं जलवायु का चुनाव

एशियाटिक लिली सर्दी ऋतू का फूल है यह सर्दी में लगाया जाता है। अच्छी गुणवत्तायुक्त लिलियम पुष्प एवं कन्द उत्पादन के लिए दिन का तापमान 20-25°C तथा रात का तापमान 10-15°C के बीच होना अच्छा पाया गया है। लिलियम की फसल को उत्तम पुष्प-उत्पादन हेतु लगभग 2000-3000 फुट कैंडल प्रकाश की आवश्यकता पड़ती है। गर्मियों के दिनों में लिलियम को 45-60 प्रतिशत जालीदार जालो के अन्दर उगाया जाता है, ताकि छायादार प्रकाश ही पौधों पर पड़ सके। तापमान के इससे कम या अधिक होने पर भी इसके पुष्प एवं कन्द का उत्पादन किया जा सकता है।

मृदा

लिलियम को कई प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है, लेकिन अच्छे जल निकास वाली भूमि, जिसमे कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अच्छी हो, लिलियम के पुष्प एवं कन्द उत्पादन के लिए जैविक पदार्थों से युक्त बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम पायीं

गई है। मिट्टी का पी एच मान 5.5 से 7.0 के बीच में होने पर परिणाम अच्छे मिलते हैं।

मिट्टी तथा खेत की तैयारी

जिस खेत पर लिलियम पुष्प एवं कन्द उत्पादन करना है, उसकी मिट्टी को अच्छी खुदाई या जुताई द्वारा भुरभुरा तथा खरपतवार रहित कर लेते हैं। कन्द रोपण से 20 से 25 दिनों पहले पूर्ण रूप से सड़ी गोबर की खाद 5 से 8 किलोग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से मिट्टी में डालकर 15 से 20 सेंमी. गहराई तक अच्छी तरह मिला देते हैं। अच्छी तरह तैयार भुरभुरी मिट्टी में 1.0-1.2 मीटर चौड़ी और 20-25 सेंमी. जमीन की सतह से उठी क्यारियाँ बनानी चाहिए।

कन्द प्रवर्धन

लिलियम के पुष्प उत्पादन के लिए बीज/सीड के तौर पर इसके बड़े आकार (कन्द की परिधि 14 सेंमी. या इससे अधिक) के कन्द का प्रयोग किया जाता है। जिसमे मेड से मेड दूरी और पौध से पौध की दूरी 45 x 30, 25 x 30, 15 x 25 सेंटीमीटर रखते है। कन्द का आकार जितना बड़ा होगा, इससे उत्पादित पुष्पों की गुणवत्ता उतनी ही अच्छी होगी लिलियम का कन्द साधारण लहसुन के बल्ब जैसा होता है इस विधि में कन्द को 0.1 प्रतिशत बेविस्टीन के घोल में 30 मिनट तक उपचारित कर छाव में सुखाकर फिर कन्द को खेत में लगाया जाता है।

किस्मों का चुनाव

किस्मों का चयन बहुत सोच समझकर करना चाहिए। इसकी प्रजातियों का चुनाव पुष्प बाजारों में प्रचलित रंगों की माँग, लम्बी पुष्प डण्डी, लम्बी एवं मोटी पुष्प कलियाँ, कृतीत्व पुष्प का लम्बा जीवन काल, रोग मुक्तता, प्रति डण्डी कलियों की अधिक संख्या, पत्तियों में चमक इत्यादि अच्छे गुणों के आधार पर किया जाता है।

भारत की महत्वपूर्ण किस्में

ब्रिंदिसा, पाविया, परानो, ट्रेसर, कोलरेस, अल्बुफ़िर, ब्रेकआउट, नैशविल, ब्रुनेल्लो एवं लेंतेल्ला आदि है।

कन्दों का आकार

लिलियम के कन्द के आकार का पुष्प उत्पादन में बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। यह एक सर्वमान्य बात है कि बड़े आकार के कन्द से लम्बे, मोटे व अधिक कलियों वाले पुष्प डण्डी उत्पन्न होती हैं। लिलियम में एशियाटिक लिलियम के कन्दों का चुनाव इस प्रकार करते हैं:

बुंदेलखंड में उगाई जाने वाली एशियाटिक लिलियम की किस्मे

अल्बुफ़िएर

नैशविल

कोलरेस

ब्रुनेल्लो

परानो

पाविया

लेंतेल्ला

ट्रेसर

ब्रिंदिसी

ब्रेकआउट

कन्द रोपण का समय

लिलियम की खेती के लिए उन्ही कन्दो का प्रयोग करे जो उत्तम गुणवत्ता वाले फूल पैदा कर सके। सामान्य तौर पर हिमाचल प्रदेश में लिलियम एशियाटिक कन्द रोपण मार्च से शुरु होकर फरवरी तक विभिन्न स्थान/जलवायु में विभिन्न समय पर किया जाता है। मैदानी क्षेत्रों में इन्हें अक्टूबर से नवम्बर माह में लगाया जाता है। कन्दों को लगाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि जिन कन्दों की सुषुप्तावस्था खत्म हो गई हो यानी प्रस्फुटित हो गये हों तथा जड़ों का फुटाव हो गया हो उन्हें ही लगाना चाहिए। सर्दियों में कन्द को 10-12 सेंमी. तथा गर्मी के मौसम में 12-15 सेंमी. की गहराई पर लगाना चाहिए।

सिंचाई

लिलियम के पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए फ्लोराइड और लवण रहित गुणवत्ता वाले पानी की आवश्यकता होती है। क्यारी की मिट्टी को रोपण से पहले हल्का सींच देना चाहिए तथा बाद में थोड़ा-थोड़ा समय बाद हल्का पानी देना चाहिए, जिससे जड़ व कन्द को नमी मिलती रहे। मिट्टी की ऊपरी सतह पर तनों में जड़ों का विकास होता है। इसलिए यह आवश्यक है कि उपरी 25-30 सेंमी. सतह में लगातार नमी बनी रहे। खेत में पानी इकट्ठा नहीं होना चाहिए। शुष्क मौसम में एक दिन छोड़कर दूसरे दिन पानी देना चाहिए। क्यारियों में उर्वरक देने के बाद हल्की सिंचाई कर देना चाहिए, जिससे उर्वरक घुल कर पौधों को उपलब्ध होता रहे। बूँद-बूँद सिँचाई लिलियम के लिए उत्तम माना जाता है, क्योंकि ये जलभराव के कारण होने वाली बीमारियों को रोकता है।

खाद एवं उर्वरक

पौध रोपण तथा क्यारी बनाने से पहले मिट्टी का परीक्षण होना चाहिए, जिससे मिट्टी में उपस्थित सभी पोषक तत्वों की मात्रा का पता लग जाए। लिलियम को बहुत कम मात्रा में फॉस्फोरस की आवश्यकता होती है। जिस मिट्टी में पोषक तत्व कम हो, उसमें गोबर की सड़ी खाद लगभग 5-8 कि.ग्रा. प्रति वर्गमीटर एवं नत्रजन 25 ग्राम एवं 5 ग्राम फॉस्फोरस 30 ग्राम पोटाश प्रति वर्ग मीटर की दर से मिलाते हैं। नत्रजन की एक तिहाई, कुल फॉस्फोरस तथा कुल पोटाश की मात्रा क्यारी बनाते समय खेत में डाल देना चाहिए। शेष नत्रजन का 1/3 भाग कन्द रोपण के 40 दिनों तथा शेष 1/3 भाग कन्द रोपण के 80 दिनों बाद क्यारी में डालने से अच्छा परिणाम पाया गया है।

गुड़ाई एवं खरपतवार नियन्त्रण

कन्द रोपण के बाद लिलियम में उर्वरक देने के उपरान्त क्यारियों में हल्की गुड़ाई करके उर्वरक को मिट्टी में मिला देते हैं। ऐसा करने से क्यारियों में मिट्टी ढीली हो जाती है, जिससे जड़ों का अच्छी तरह विकास होता रहता है। खरपतवार को उथली जुताई, मल्चिंग, खरपतवार नाशक रसायन जैसे ग्लाइफोसेट (0.01 प्रतिशत) से खरपतवारो को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है ।

स्टेकिंग या सहारा देना

पौधे को सीधा रखने के लिए सहारे की आवश्यकता होती है। लिलियम के पौधों को सहारा देने के लिए दो परत नायलोन की जाली जब पौधा 10-12 सेंमी. का हो जाए, उस समय लगाते हैं। इन जालियों को पुष्प डण्डियों की लम्बाई बढ़ने के साथ साथ ऊपर उठाते रहना चाहिए।

पुष्प डण्डियों की कटाई

कन्द रोपण के 90 से 110 दिनों बाद एशियाटिक लिली के फूल काटने के लिए तैयार हो जाते हैं। पौधों का साईंज लगभग 50-80 सेंटीमीटर लम्बा होता है, जिसमे औसतन 5-6 कालिया लगती है। लिलियम के फूलो को तोड़ने की एक विशेष अवस्था होती है। जब पहली पुष्प कली में रंग का विकास हो जाए, लेकिन पुष्प कली खिली न हो, ऐसी दशा में एशियाटिक लिली की पुष्प डण्डियों को ज़मीन की सतह से लगभग 8से10 सेंमी. छोड़कर सुबह के समय काट देना चाहिए।

श्रेणीकरण एवं भण्डारण

फूलों को काटने के बाद उन्हें किस बाजार में बेचना है तथा उस बाजार में ग्रेडिंग का आधार क्या है, इस बात को ध्यान में रखते हुए पुष्प डण्डियों का श्रेणीकरण करते हैं। सर्दी के मौसम में 'ए' ग्रेड के एशियाटिक लिली की पुष्प डण्डी की लम्बाई औसत 70सेंमी. से अधिक ही रहती है। गर्मी के मौसम में यह लम्बाई औसत 60सेंमी. के ऊपर रहती है। 'बी' ग्रेड के पुष्प डण्डी की लम्बाई 'ए' ग्रेड की पुष्प डण्डों से थोड़ा हो कम रहता है। लेकिन 'सी' ग्रेड के पुष्प डण्डी की लम्बाई काफी घटती एवं बढ़ती रहती है। औसत 'सी' ग्रेड की पुष्प डण्डी की लम्बाई 35 से 45सेंमी. के बीच में देखने को मिलती है। पौधों के पत्ते जब पीले पड़कर सूखने शुरु हो जाए तब कंदों को खोदना चाहिए। कंदों को खोदने से 10-15 दिन पहले सिचाई रोक देनी चहिये। पौधों को रोगनाशक औषधि कैप्टान 0.2 प्रतिशत के घोल में 30 मिनट तक उपचारित करने के बाद छाया में सुखाकर ठंडी जगहों पर भण्डारण किया जाता है।

उपज

लिलियम का औसतन उपज 10,0000 से 1,25000 स्पाइक प्रति हेक्टेयर तथा कन्द का उत्पादन 1,25000से 1,50,000 प्रति हेक्टेयर है।

कीट पतंग और रोग

लिलियम फसल पर कीट पतंग जैसे एफिड, थ्रिप्स, बल्ब माइट, लीफ स्कोर्च तथा बड़ ब्लास्ट प्रकोप होता रहता है।

क) एफिडः एफिड लिलियम फसल को प्रभावित करने वाला मुख्य कीट है। यह मुख्य रूप से नई पत्तियों के पृष्ठ भाग पर रहते हैं, जिसके कारण फूलों में विकृति आ जाती है। यह पौधों को कमजोर कर देता है। इनकी रोकथाम के लिए रोगोर या मैलाथियान या इन्डोसल्फान का छिड़काव 1.5-2.0 मिली. प्रति लीटर पानी में घोल कर करना चाहिए।

ख) थ्रिप्सः लिलियमी थ्रिप्स देखने में काले रंग का एक प्रकार का रस चूसने वाला कीट होता है। इसके अत्यधिक प्रभाव के कारण पौधों की बढ़वार तथा फूलों पर बुरा असर पड़ता है इससे बचाव के लिए समय-समय पर इन्डोसल्फान या मोनोक्रोटोफॉस या मैलाथियान इत्यादि का छिड़काव 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी के साथ करने से पौधे इनके प्रभाव से मुक्त रहते हैं तथा इसके बल्ब को ज़मीन से निकालने के बाद मैलाथियान 2 मिली. प्रतिलीटर पानी में घोलकर बल्ब को 24 घण्टे तक डुबोकर उपचार करने से थ्रिप्स को खत्म किया जास कता है।

ग) बल्ब माइटः बल्ब माइट देखने में गोल आकृति वाला पीलापन लिए सफेद रंग का कीट है। इसके उपरान्त यह कन्द के ऊपरी परत एवं तनों में छेद करके धीरे-धीरे पौधों को खत्म कर देता है। इनकी रोकथाम लिलियम के कन्द पर सल्फर पाऊडर का डस्टिंग करके किया जा सकता है।

लिलियम में लगने वाले रोग

क) बल्ब व स्केल रॉटः यह बीमारी फ्यूज़ेरियम व क्लिन्डोकरपोन फफूँदियों के कारण उत्पन्न होती है। इस बीमारी से ग्रसित पौधे छोटे रह जाते हैं तथा पत्तियाँ पीले, हरे एवं तने में भूमिगत भाग पर नारंगी व भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, इस बीमारी कन्दों को रोग मुक्त करने के लिए उन्हें 0.2 प्रतिशत कैप्टानव 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन के मिश्रित घोल में एक घण्टे तक डुबो कर रखना चाहिए। खेत के तापमान को जहाँ तक संभव हो, फसल काल के दौरान समय-समय पर पानी देकर ठण्डा रखना चाहिए।

ख) फुट रॉटः यह रोग फाइटोफथोरा नामक फफूँदी के कारण होता है। रोगग्रसित पौधों छोटे रह जाते हैं या फिर अचानक मुरझा जाते हैं। इस बीमारी की रोकथाम के लिए मृदा को रोगाणु रहित करने के पश्चात कन्दों को लगाना चाहिए। 200 ग्राम डाईथेन एम-45 प्रति 100 वर्ग मीटर के हिसाब से मिट्टी को हुँच करने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

फिजिओलोजिकल डिसऑर्डर

क) लीफ स्कोर्चः यह फफूँद के आक्रमण होने पर पत्तियों भूरापन दिखाई देता है, जो पत्तीयो में पिले ऊतक की तरह लहरदार पट्टी प्रतीत होता है, यह पत्ती की मध्य भाग में एक हरे उत्तक की सिमा बनता है। इस फफूँद का एक शाखा अथवा तने के अगले भाग में शुरू होता है। इसके अधिक प्रकोप हो जाने पर पाटिया मुद कर गिर जाती है। यह गर्मी में अधिक फैलता है इस रोग के प्रभाव से बचने के लिए नियमित रूप से खाद्य में पानी देना चाहिए।

ख) बड ब्लास्टः पौधो में पानी काम या अधिक देने से बहुत ज्यादा तनाव होता है तथा अधिक पानी देने से पौधे में जड़ सड़न और फफूँद का संक्रमण हो जाता है, जो पौधों के कलियों और तनो को नष्ट करता है इस प्रक्रिया को बड़ ब्लास्ट कहते है, इससे बचाव के लिए जब मिट्टी की ऊपरी सतह 2 इंच तक सकझ जाए तब पौधे में आवश्यकता अनुसार पानी देना चाहिए और इसके नमी को बरकरार बनाये रखने के लिए पौधे में 2-4 इंच ऑर्गेनिक मल्च डालना चाहिए।

प्रमुख चुनौतियाँ

क) जलवायु और पर्यावरणः लिलियम आमतौर पर ठंडी और शीतोष्ण जलवायु में अच्छी तरह उगता है। बुंदेलखंड झेत्र की जलवायु प्रायः गर्म और सुखी होती है, जिससे लिलियम कली खेती में कठिनाइया आ सकती है। यदि उचित सिचाई और जलवायु नियंत्रण वातावरण प्रदान किया जाए, तो लिलियम के खेती बहुत अच्छी की जा सकती है।

ख) मिट्टी की विशेषताएः लिलियम को अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी की आवश्यकता होती है। बुंदेलखंड में आमतौर पर कठोर और कम जल निकासी वाली मिट्टी होती है।

ग) सिचाई और पानी की उपलब्धताः बुंदेलखंड में जल संकट एक बड़ा मुद्दा है। लिलियम की खेती के लिए नियमित और पर्याप्त सिचाई की आवश्यकता होती है। पानी की उपलब्धता और कुशल प्रबंध इस खेती की सफलता में महात्वपूर्ण भूमिका निभायेगे।

घ) मार्केटिंग और आर्थिक पहलूः लिलियम की खेती के लिए एक मजबूत विपणन योजना की जरुरत होती है। बुंदेलखंड में फूलो की बाजार व्यवस्था और मूल्य निर्धारण पर ध्यान देना

होगा। स्थानी और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में प्रतिस्पर्धा को समझना और ग्राहकों की माँग के आनुसार उत्पादन करना आवश्यक है।

निष्कर्ष

बुंदेलखंड में लिलियम की खेती संभव है, लेकिन इसके लिए विशेष सावधानी और तैयारी की आवश्यसकता होगी। चूकि लिलियम के फूल की विश्व बाजार में माँग है, इसलिए इसकी खेती के लिए जलवायु, मिट्टी, पानी की उपलब्धता और बाजार की स्थिति ध्यान देना आवश्यक है। वर्तमान समय में उत्तर प्रदेश कही भी लिलियम की खेती नहीं की जा रही है, अगर उपरोक्त लेख में उल्लेख की गयी चुनौतियो का समाधान किया जाये और उत्पादकों को इसका प्रशिझण दिया जाये तो लिलियम की खेती आर्थिक लाभकारी साबित हो सकती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

औषधीय गुणों से भरपूर भिंडी का महत्व

रोनक कूड़ी*, संतोष चौधरी एवं महेश कुमार पूनिया
उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान
पत्राचारकर्ता: ronakkuri9782@gmail.com

परिचय

भिंडी (*Abelmoschus esculentus*), जिसे अंग्रेजी में "Okra" के नाम से जाना जाता है। भिंडा एक महत्वपूर्ण सब्जी है जो न केवल पौष्टिक तत्वों से भरपूर है, बल्कि इसके औषधीय गुण भी अत्यधिक लाभकारी हैं। भिंडी का उपयोग विभिन्न चिकित्सा पद्धतियों में किया जाता है, विशेषकर आयुर्वेद और पारंपरिक चिकित्सा में, क्योंकि यह अनेक स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार में सहायक होता है। भिंडी को स्वाद ही नहीं बल्कि सेहत से भी भरपूर माना जाता है। सर्दियों के मौसम में भिंडी खाने के कई फायदे हैं। भिंडी में एंटी अल्सर, एंटी बैक्टीरियल और एंटीफेटिग गुण भी पाए जाते हैं, जो कई मौसमी बीमारियों से बचाने में मदद कर सकते हैं। भिंडी में कैलोरी की मात्रा बहुत कम पाई जाती है, जो वजन को घटाने और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को नियंत्रण करने में मदद करती है। इतना ही नहीं भिंडी में विटामिन ए, पोटैशियम, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, असंतृप्त वसीय अम्ल और बीटा कैरोटीन भी भरपूर मात्रा में होते हैं।

भिंडी के औषधीय गुण

वैसे तो सभी को मालूम है कि भिंडी को स्वाद के लिए सब्जी के रूप में खाया जाता है। लेकिन क्या कभी किसी ने इसे खाते-खाते भिंडी के औषधीय गुण के बारे में सोचा है। यह विटामिन, पोटैशियम, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर और असंतृप्त वसीय अम्ल, लिनोलेनिक और ओलिक एसिड, जैसे अहम पौष्टिक तत्वों से संपन्न होती है। इसमें पॉलीफेनोलिक यौगिक, कैरोटीन, फोलिक एसिड, थियामिन, राइबोफ्लेविन, नियासिन, विटामिन-सी और अमीनो एसिड भी पाए जाते हैं। इसके साथ ही इसमें कार्डियोप्रोटेक्टिव, रीनल प्रोटेक्टिव, न्यूरोप्रोटेक्टिव, एंटी-कैंसर, एनाल्जेसिक, एंटी-अल्सर, एंटी बैक्टीरियल और एंटीफेटिग गुण भी पाए जाते हैं। इसमें पाए जाने वाले ये औषधीय गुण और तत्व सेहत के लिए फायदेमंद हो सकते हैं।

भिंडी के औषधीय महत्व

भिंडी एक हरे रंग का सब्जी है, जिसके अंदर सफ़ेद रंग के गोलाकार चिपचिपे द्रव्य से युक्त अनेक बीज होते है भिंडी के सेवन से बाल व पित रोगो के साथ साथ मल सबंधित परेशानी दूर होती है इसके अतिरिक्त भिंडी के अनेक औषधीय गुण होते है, जिससे निमनलिखित बिन्दुओ में समझा जा सकता हैः

क) मधुमेह

मधुमेह की समस्या एक आम समस्या है, जो रक्त में मौजूद ग्लूकोज स्तर के बढ़ने के कारण होती है। भिंडी का उपयोग इस समस्या को कुछ हद तक कम कर सकता है। भिंडी में एंटी-डायबिटीज और एंटी-हाइपरग्लाइसेमिक गुण पाए जाते हैं, जो रक्त में मौजूद ग्लूकोज के स्तर को कम करने में मदद कर सकते हैं। भिंडी का ग्लाइसेमिक इंडेक्स बेहद कम होता है, जिस वजह से इसका सेवन करने से शरीर में ब्लड शुगर लेवल तेजी से नहीं बढ़ता है। इसके अलावा, इसमें पाया जाने वाला फाइबर रक्त के ग्लूकोज को नियंत्रित करने में फायदेमंद हो सकता है। इसी वजह से मधुमेह से पीड़ित लोगों के लिए भिंडी उत्तम आहार हो सकती है।

ख) पाचन शक्ति के लिए

भिंडी के औषधीय गुण पाचन तंत्र को सुधारने में मदद कर सकते हैं। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित शोध में पाया गया कि भिंडी में फाइबर की अच्छी मात्रा पाई जाती है, और फाइबर पाचन तंत्र के लिए फायदेमंद होता है। फाइबर का सेवन पाचन तंत्र को सुधारने के साथ ही इससे जुड़ी अपच की समस्या को दूर करने में मददगार हो सकता है।

ग) हृदय के लिए स्वास्थ्यवर्धक

हृदय रोग की समस्या को कम करने के लिए भी भिंडी का उपयोग किया जा सकता है। इस विषय पर कई शोध हुए हैं। शोध के अनुसार भिंडी में फाइबर की अच्छी मात्रा पाई जाती है। दरअसल, फाइबर का सेवन सीरम कोलेस्ट्रॉल को कम

भिंडी के पौष्टिक तत्व

भिंडी के गुण उसमें मौजूद पोषक तत्वों के कारण ही प्राप्त होते हैं। यहाँ हम आपको बता रहे हैं भिंडी में कौन-कौन से पोषक तत्व मौजूद होते हैं।

पोषक तत्व	मात्रा प्रति 100 ग्राम	पोषक तत्व	मात्रा प्रति 100 ग्राम
पानी	89-58 ग्राम	पोटेशियम	299 मिलीग्राम
कैलोरी	33 किलरु कैलोरी	सोडियम	7 मिलीग्राम
प्रोटीन	1-93 ग्राम	जिंक	0-58 मिलीग्राम
फैट	0-19 ग्राम	मैगनीज	0-788 मिलीग्राम
कार्बोहाइड्रेट	7-45 ग्राम	कॉपर	0-109 मिलीग्राम
फाइबर	3-2 ग्राम	सेलेनियम	0-7 माइक्रोग्राम
शुगर	1-48 ग्राम	विटामिन-सी	23 मिलीग्राम
कैल्शियम	82 मिलीग्राम	थियामिन	0-2 मिलीग्राम
आयरन	0-62 मिलीग्राम	राइबोफ्लेविन	0-06 मिलीग्राम
मैग्नीशियम	57 मिलीग्राम	नियासिन	1 मिलीग्राम
फास्फोरस	61 मिलीग्राम	विटामिन-बी 6	0-215 मिलीग्राम
पोटेशियम	299 मिलीग्राम	फोलेट	60 माइक्रोग्राम
कोलीन	12-3 मिलीग्राम	विटामिन-के	31-3 माइक्रोग्राम
विटामिन-ए	36 माइक्रोग्राम	फैटी एसिड टोटल सैचुरेटेड	0-026 ग्राम
बीटा कैरोटिन	416 माइक्रोग्राम	फैटी एसिड टोटल मोनोअनसैचुरेटेड	0-017 ग्राम
विटामिन-ई	0-27 माइक्रोग्राम	फैटी एसिड टोटल पोलीअनसैचुरेटेड	0-027 ग्राम

करने में मदद करता है, जिससे कोलेस्ट्रॉल संबंधी हृदय रोग की आशंका कम हो सकती है।

घ) कैंसर की रोकथाम के लिए

कैंसर एक गंभीर बीमारी है, जिससे बचने के उपाय करना बहुत जरूरी है। यहाँ भिंडी फायदेमंद साबित हो सकती है। एक शोध में पाया गया कि भिंडी में मौजूद फाइबर कोलन कैंसर के जोखिम को कुछ हद तक रोकने में मदद कर सकता है। वहीं, एक अन्य शोध में पाया गया कि भिंडी में एंटी-ट्यूमर गुण पाए जाते हैं, जो कि स्तन कैंसर को बढ़ाने वाले सेल्स को रोकने में फायदेमंद हो सकते हैं।

ड़) कब्ज के लिए

भिंडी का सेवन कब्ज के लिए रामबाण का काम कर सकता है। एनसीबीआई की वेबसाइट पर प्रकाशित शोध में पाया गया कि भिंडी में फाइबर की भरपूर मात्रा पाई जाती है, जो आहार को पचा कर कब्ज जैसी समस्या से निजात दिलाने में मदद कर सकता है।

च) आंखों के लिए

अच्छी सेहत के साथ ही भिंडी का उपयोग आंखों की बेहतर रोशनी के लिए भी किया जा सकता है। एक शोध पत्र के अनुसार भिंडी में बीटा कैरोटीन जो शरीर में जाकर विटामिन ए में परिवर्तित हो जाता है, जो कि आंखों की रोशनी को बढ़ाने में फायदेमंद होता हैं। इसके साथ ही भिंडी का उपयोग दृष्टि में सुधार और आंखों से संबंधित कई बीमारियों को दूर करने के लिए भी किया जा सकता है।

छ) वजन कम करने के लिए

बढ़ता हुआ वजन कई बीमारियों का कारण बन सकता है, जिनमें मधुमेह और हृदय की समस्या प्रमुख है। भिंडी का उपयोग वजन को नियंत्रित करने के किया जा सकता है। वैज्ञानिक शोध के अनुसार भिंडी में फाइबर और वसा जैसे पोषक तत्व होते हैं, जो वजन को नियंत्रित करने में मददगार हो सकते हैं। इसके अलावा, शोध में यह जानकारी भी दी गई कि भिंडी में पाया जाने वाला फाइबर मोटापे को कम करने के लिए भी फायदेमंद हो सकता है। इसके अलावा, एक अन्य शोध में पाया गया कि है भिंडी में एंटी-ऑवेसिटी गुण पाया जाता है। यह गुण अतिरिक्त वजन को कम करने के साथ ही मोटापे को नियंत्रित करने में मदद कर सकता है।

ज) रक्तचाप को नियंत्रित करने के लिए

रक्तचाप का बढ़ना भी आज एक आम समस्या हो गई है। इस समस्या को नियंत्रित करने के लिए भिंडी का सेवन एक बेहतर विकल्प हो सकता है। एक वैज्ञानिक अध्ययन में पाया गया कि भिंडी के बीज के अर्क में पाया जाने वाला एंटी हाइपरटेंसिव इफेक्ट बढ़ते रक्तचाप की समस्या को नियंत्रित करने में योगदान दे सकता है।

झ) गर्भावस्था में फायदेमंद

गर्भावस्था के दौरान भी भिंडी का सेवन फायदेमंद हो सकता है। एक शोध पत्र के अनुसार इसमें कई प्रकार के पोषक तत्व पाए जाते हैं, जो गर्भावस्था के लिए जरूरी होते हैं। जैसे कि इसमें पाया जाने वाला विटामिन बी नए कोशिका के निर्माण में फायदेमंद हो सकता है। साथ ही इसका सेवन करने पर स्पाइना बिफिडा (रीढ़ का विकास ठीक से न हो पाना) जैसे जन्म दोष को रोकने में और इसमें मौजूद विटामिन सी बच्चे के विकास में मददगार हो सकता है। भिंडी में फोलेट की भी मात्रा पाई जाती है। फोलेट एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है, जो भ्रूण के मस्तिष्क के विकास को बढ़ा सकता है।

ञ) एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर

ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस शरीर को कई तरीके से नुकसान पहुँचाने का काम कर सकता है, जिसमें कैंसर, गठिया, ऑटोइम्यून विकार और हृदय रोग शामिल हैं। ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस को कुछ हद तक कम करने करने में भिंडी का उपयोग कारगर हो सकता है। दरअसल, एक शोध में जिक्र मिलता है कि सूखी भिंडी के छिलके और बीजों के पाउडर में एंटीऑक्सीडेंट गुण मौजूद होता है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि एंटीऑक्सीडेंट गुणों के लिए भिंडी को इस्तेमाल में लाया जा सकता है।

ट) त्वचा के लिए

सेहत और आंखों के साथ ही भिंडी का उपयोग त्वचा के लिए भी किया जा सकता है। इससे जुड़े एक शोध के अनुसार भिंडी में विटामिन-सी पाया जाता है, जिसमें एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं। यह शरीर के टिश्यू यानी ऊतकों के निर्माण और मरम्मत के लिए मददगार हो सकता है। इसके साथ ही भिंडी का सेवन त्वचा को फिर से जवान बनाने में सहायक हो सकता है। इसमें पाया जाने वाला बीटा कैरोटिन, जो विटामिन ए का रूप होता है, त्वचा की सेहत को बढ़ाने के साथ ही इससे जुड़ी कई समस्याओं को दूर करने में फायदेमंद हो सकता है।

ठ) बालों के लिए भिंडी

बालों के लिए भी भिंडी का उपयोग किया जा सकता है। इससे जुड़े वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार, भिंडी का उपयोग हेयर कंडीशनर के रूप में किया जा सकता है। साथ ही यह स्कैल्प के लिए एक अच्छा मॉइस्चराइजर हो सकती है। इसके अलावा, इसका इस्तेमाल बालों को चमकदार बनाने में मदद कर सकता है। वहीं, एक अन्य शोध में पाया गया कि भिंडी में पाया जाने वाला विटामिन सी बालों को फिर से नया जीवन प्रदान करने में मदद कर सकता हैं।

भिंडी के नुकसान

अगर भिंडी को सीमित मात्रा में लिया जाए, तो भिंडी के फायदे मिल सकते हैं। वहीं, अधिक मात्रा में सेवन करने से भिंडी खाने के नुकसान कुछ इस प्रकार देखने को मिल सकते हैं-

क) त्वचा के घाव

भिंडी से निकलने वाले प्रोटियोलिटिक नामक एंजाइम के संपर्क में आने से त्वचा पर घाव हो सकते हैं। सेंसिटिव त्वचा पर इसका इस्तेमाल करने से पहले पैच टेस्ट जरूर करें।

ख) गुर्दे की पथरी का कारण

भिंडी में ऑक्सालेट्स नामक यौगिक की मात्रा होती है। शरीर में इसकी अधिकता होने से गुर्दे की पथरी हो सकती है। अगर कोई गुर्दे की बीमारी से पीड़ित हैं, तो भिंडी का सेवन करने से पहले अपने चिकित्सक से जरूर परामर्श लें।

ग) पेट की समस्या

बहुत अधिक भिंडी खाने से कुछ लोगों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। भिंडी कार्बोहाइड्रेट में समृद्ध होती है। इसके अधिक सेवन से दस्त, गैस, ऐंठन और आंतों में सूजन जैसी समस्या हो सकती है।

घ) ज्यादा गाढ़ा हो सकता है खून

भिंडी में 'विटामिन-के' पाया जाता है। यह शरीर में खून को गाढ़ा (कोएग्युलेशन) करने का काम करता है।

निष्कर्ष

भिंडी सिर्फ एक सब्जी नहीं बल्कि औषधीय गुणों का भंडार है। इसके नियमित सेवन से न केवल शरीर को आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं, बल्कि यह अनेक बीमारियों से भी सुरक्षा प्रदान करती है। स्वास्थ्य को बनाए रखने और विभिन्न रोगों से बचने के लिए भिंडी का महत्व अत्यधिक है, जिसे हम अपने दैनिक आहार में शामिल कर सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पाईप विधि द्वारा बटन मशरूम का खाद तैयार करना

दयाराम*, राम प्रवेश प्रसाद एवं सुधा नन्दिनी

एडवांस सेंटर ऑफ मशरूम रिसर्च, डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: raudayaram@gmail.com

परिचय

मशरूम जलवायू अनुकूल एक बागवानी फसल है, जो यह बेरोजगारी दूर करने व आय उपार्जन करने का उत्तम स्रोत है यह कुपोषण को दूर करता है। यह फसल पोषक तत्वो से भरपूर कम लागत में कृषि अवशेषो का उपयोग करके अच्छी आय प्राप्त करने के साथ-साथ रोजगार सृजन के अवसर प्रदान करती है। इसके अलावा कुपोषण से मुकाबला करने में मशरूम की प्रमुख भूमिका है। भविष्य की चुनौतियों का सामना करने में मशरूम एक प्रमुख बागवानी फसल हो सकती है।

मैदानी इलाको की जलवायु, मशरूम की सभी प्रजातियों की खेती (ओयस्टर, बटन, स्वेत दूधिया, पैडी स्ट्रा तथा औषधीय मशरूम शिटाके, हेरीशियम या लायंस मेन मशरूम, ऑरीकुलेरिया एवं सीजोफाइलम) के अनुकूल है। क्योंकि यहाँ का न्यूनतम तापक्रम 10 डिग्री तथा अधिकतम तापमान 40 डिग्री पाया जाता है। इसके अलावा आर्द्रता (नमी) न्यूनतम 60 प्रतिशत तथा अधिकतम 100 (बरसात में) प्रतिशत पाया जाता है। ओयस्टर मशरूम के लिये न्यूनतम 20 डिग्री तथा अधिकतम 30 डिग्री तथा 80-85 प्रतिशत आर्द्रता की आवश्यकता पड़ती है। अतः यह तापमान सितम्बर से दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक प्राकृतिक ढ़ंग से उपलब्ध रहता है। आर्द्रता हम कृत्रिम ढ़ंग से बना सकते है तथा पुनः फरवरी से अप्रैल तक यह तापमान उपलब्ध रहता है। इसके अलावा बटन मशरूम की खेती अधिकतम 25 डिग्री तथा न्यूनतम 15 डिग्री (बुवाई से फसल उत्पाद तक) तापमान की आवश्यकता पड़ती है, जो नवम्बर से मार्च के प्रथम सप्ताह तक रहता है, और बटन मशरूम की एक फसल ली जा सकती है। गर्मियों में तापक्रम 38-40 डिग्री अधिकतम पाया जाता है। अतः इस समय मिल्की एवं पैडी स्ट्रॉ मशरूम की खेती की जा सकती है।

सर्दियों में तापमान कम होने कारण ओयस्टर की किंग ओयस्टर एवं शीत ओयस्टर (*प्लुरोटस ऑस्ट्रीयाटस*) प्रजातियाँ भी उगायी जाती है, और बटन मशरूम के अनुकूल वातावरण होने के कारण बटन की खेती करना ज्यादा मुनाफा सौदा होगा। क्योंकि बटन मशरूम की मांग ओयस्टर से अधिक होती है। जबकि ओयस्टर मशरूम कम ठंढ वाले प्रदेशों में ही प्रचलित है। अतः सर्दियों में बटन मशरूम की खेती करना लाभकारी होता है।

खाद तैयार करना

बटन मशरूम की खेती करने के लिये प्रथम चरण में खाद तैयार करना, द्वितीय चरण में बुवाई, तृतीय चरण में केसिंग तथा अंतिम चरण में फसल प्रबन्ध महत्वपूर्ण कार्य है। सभी चरण उत्पादन में महत्वपूर्ण होते है।

खाद तैयार करने की 2 विधियाँ है

अ) लम्बी अवधि की खाद तैयार करनाः यह अधिक समय लगने वाली लेकिन सरल एवं सस्ती विधि से कम्पोस्ट बनाने की विधि है जिसमे 27 दिनों का समय लगता है, इसमें भूसे एवं अन्य मिलाये जाने वाले मिश्रण को 7-8 बार उलट पलट किया जाता है

ब) कम अवधि की खाद तैयार करनाः कम्पोस्ट बनाने की यह उन्नत एवं कम समय यानि की 18-20 दिनों में तैयार करने वाली विधि है इस विधि से तैयार की गई कम्पोस्ट पर मशरुम की उपज भी ज्यादा मिलती है- कम अवधि की खाद

तैयार करने की दो विधियाँ प्रचलित है

क) पास्चूराइजेशन टनेल विधिः इस विधि में पास्चूराइजेशन कक्ष की जरूरत होती हैं। भूसे को दो दिन तक पानी में डालकर फुलाते हैं। तीसरे दिन उपरोक्त सभी सामग्री अच्छी तरह मिलाकर पाँच दिनों तक छोड़ देंते हैं। 6वें दिन प्रथम तथा 9वें दिन द्वितीय पलटाई कर 10वें दिन टनल में रखकर चार दिनों तक टनल (70^0 सेंटीग्रेट) को चला देते हैं। 15-18 वें दिन (चार दिन) ताजा हवा देकर ठण्ढ़ा होने के बाद स्पानिंग करते हैं।

ख) पाईप विधि (शून्य ऊर्जा पालीटनेल विधि): इनमें लम्बी अवधि की खाद तैयार करने में एक माह का समय लगता है तथा मौसमी उत्पादको के लिये (छोटे एवं बड़े उत्पादको) सरल तथा कम लागत की विधि है। इसमें विभिन्न प्रकार की असुविधाओं के कारण आजकल इसका प्रचलन कम हो गया है। क्योंकि आज नियन्त्रित कक्ष की सुविधा तथा सरकार की मदद के कारण उत्पादन में वृद्धि हो रही है। अतः नयी तकनीक तथा लाभ को ध्यान रखते हुए अधिक लागत वाली विधि पास्चूराइजेशन टनेल विधि द्वारा खाद तैयार किया जाता है। परन्तु छोटे किसानों के लिये अधिक खर्चीला होने के कारण लम्बी अवधि की खाद पर निर्भर है। परन्तु पाईप विधि द्वारा खाद छोटे एवं मौसमी किसानों के लिये अधिक लाभकारी पाया गया है।

पाईप विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करना

खाद तैयार करने के लिये निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता पड़ती है।

सामग्रीः गेहूँ का भूसा/धान की कुट्टी-10 कुन्तल, खल्ली-बिनौला/नीम/सरसो-200 कि.ग्रा. या 500 कि.ग्रा. मुर्गी की खाद, चोकर-100 कि.ग्रा., जिप्सम-50 कि.ग्रा., यूरिया-30 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट-100 कि.ग्रा., म्यूरेट आफ पोटाश-20 कि.ग्रा., प्लास्टिक पाईप 12 फीट या बांस की पाईप (20 फीट लम्बा)।

पाईप विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने की विधि मशरूम निदेशालय सोलन द्वारा इजात की गयी परन्तु देश में बिहार के अलावा कही भी (अन्य प्रदेशो में) लोकप्रिय नही हुआ। क्योंकि बिहार में जल जमाव के कारण लम्बी अवधि की खाद बनाने में काफी समस्या आ रही थी तथा कच्चा फर्श एवं असामयिक बरसात सें किसानों के यहाँ बटन मशरूम का उत्पाद सहीं से नहीं हो पा रहा था। अतः सोलन के इस विधि में कुछ परिवर्तन करके उसका प्रयोग पूरे बिहार में किया गया तथा प्रयोग सफल होने पर इस विधि का प्रचार-प्रसार जोरो से किया गया। छोटे किसानों एवं मध्यम किसानों के बीच यह विधि काफी लोकप्रिय है। इस विधि में सर्वप्रथम भूसे को दो दिन तक पानी डालकर फुलाते हैं ताकि भूसा या पुआल मुलायम हो जाये। तीसरे दिन उपरोक्त सभी सामग्री अच्छी तरह मिलाकर छोड़ दें।

0 दिनः भूसे का ढेर बनाते है और इसे 7 फिट चौड़ा, 1 फीट ऊँचा तथा 20 फीट लम्बा ढेर के रूप में फैलाते हैं। तत्पश्चात् छिद्रयुक्त 3 पाइप 4 इंच मोटी 1 फिट की दूरी पर रखते हैं। इस पर पुनः भूसा को फैलाते हैं (लम्बाई भूसे की मात्रा के हिसाब से घटा या बढ़ा सकते है) जो कि 5 फीट चौड़ा तथा 2 फीट ऊँचा होना चाहिए। उस पर 3 फीट चौड़ा तथा 2 फीट भूसा की तह लगाते हैं और बीच में अन्तिम पाइप रखकर बचे भूसे को उस पर रखकर काले रंग के पॉलीथीन से ढंक देते हैं।

1-4 दिनः ढेर को प्रथम तीन दिन तक ढका रहने दें, जिसमे तापक्रम पहले 70-80 डिग्री सेल्सियस के बीच रहना चाहिए।

6 वे दिनः छठे दिन ढेर को तोड़कर प्रथम पलटाई करतें हैं तथा उसी तरह ढेर लगाकर पॉलीथीन से ढंक देते है। छठे से आठवें दिन तक पूरे ढेंर को ढके रहते हैं। इस समय तापक्रम 65-70 डिग्री के बीच रहना चाहिये। नौवे दिन बगल से पॉलीथीन खोल दें तथा 11 वे दिन तक बगल से खुला रखे।

12 वे दिनः 12 वें दिन द्वितीय पलटाई करें तथा ढेर लगाकर पॉलीथीन से ऊपर से ढके तथा बगल से खुला रखें। इस समय खाद का तापक्रम 45-50 डिग्री सेल्सियस व पी. एच. 7.2-7.8 होना चाहिए। 14 वें दिन ढेर को तोड़ दें तथा रात भर ठंढा करके बुवाई 15-17 दिन में बैग या वेड पर 60-65 प्रतिशत नमी में बुवाई करें। स्पॉन की मात्रा एक किलो बीज 100 कि. कम्पोस्ट के लिये आवश्यक है। बुवाई के पश्चात बैग को उत्पादन कक्ष में रखें जँहा तापक्रम 24-25 डिग्री सेल्सियस हो। पन्द्रह दिनों में कवक जाल खाद में पूरी तरह फैल जाता है। तब केसिंग करते है। केसिंग के लिये दो साल पुराना गोबर उत्तम होता है। परन्तु उपलब्धता के आधार पर पुराना गोबर, कोकोपीट, स्पेन्ट (एक साल पुराना) इत्यादि केसिंग हेतु लिया जा सकता है। केसिंग सामग्री में से घास, कंकड़ पत्थर इत्यदि को साफ करके उसका उपचार करें तथा 1-1.5 इंच मोटी केसिंग करें। 5-10 दिन में केसिंग में कवक जाल फैल जायेगा तब उसे तापक्रम 15-20 डिग्री सेल्सियस पर रखते है। इस तापक्रम में 3-5 दिन में पिन हेड निकलना शुरू हो जाता है। जो अगले 5-6 दिन में तोड़ने लायक हो जाता है। इस समय उत्पादन कक्ष में नमी 90-95 प्रतिशत

रहना चाहिए। मशरूम तोड़कर प्रयोग करें या पैक करके बाजार में भेजे। उपज की दृष्टिकोण से इस विधि से खाद बनाने पर पास्चूराइजेशन विधि से तैयार खाद के समतुल्य उपज प्राप्त की जा सकती है। छोटे एवं मध्यम उत्पादकों के लिये यह विधि अत्यन्त सस्ता, सरल एवं सुविधाजनक है।

निष्कर्ष

बटन मशरूम की खेती के लिए खाद तैयार करना सबसे जरूरी होता है। खाद तैयार करने की 2 विधियाँ है। परन्तु मौसमी बटन मशरूम की खेती करने वाले छोटे किसानों के लिये अधिक खर्चीला होने के कारण बटन मशरूम की खेती नही करते या खाद बाहर से खरीदते है। जबकि पाईप विधि द्वारा खाद कम खर्च एवं कम समय में तैयार करके छोटे एवं मौसमी किसान भी बटन

भूसे को दो दिन अच्छी तरह भिगोना

सामग्री अच्छी तरह मिलाना

पाईप लगाना

शून्य दिन चैथा दिन

9वाँ दिन

11 वाँ से 13 वाँ दिन

15-17वाँ दिन

❖❖

ISSN No. 2583-3316

डाहलियाः जीवंत फूलों की खेती

सुधा पाटिल* एवं ध्रुवी प्रजापति

डिपार्टमेंट ऑफ फ्लोरीकल्चर एंड लेंडस्केप आर्किटेक्चर, एसपी कॉलेज ऑफ हार्टिकल्चर, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, गुजरात

पत्राचारकर्ताः drsudhapatil@nau.in

परिचय

डाहलिया (*डहलिया पिनाटा*) दुनिया के अधिकांश बगीचों में पाए जाने वाले लोकप्रिय फूलों में से एक है। इसमें फूलों के पौधों की लगभग 40 प्रजातियाँ शामिल हैं, जो एस्टर परिवार (एस्टेरेसी) से संबंधित हैं और मैक्सिको और मध्य अमेरिका के उच्च ऊँचाई वाले क्षेत्रों में पाई जाती हैं। सफेद, पीले, लाल या बैंगनी जैसे रंगों की एक बहुतायत और आकार में भी बहुते छोटे से लेकर बड़े फलो तक उन्हें बेहद लोकप्रिय बना दिया है। डहलिया का नाम 1791 में एब्बे कैवेनिल्स द्वारा रखा गया था (स्मिथ, 1963)। डहलिया की मूल प्रजातियाँ *डाहलिया इम्पीरियलिस* (लाल रंग के फूलों के साथ सफेद), *डहलिया कोकिनिया* (एकल लाल फूल), *डाहलिया मर्की* (बकाइन और पीले फूल) और *डाहलिया जुआरेज़ी* (लाल रंग के फूल) हैं। इस फसल का व्यावसायिक रूप से केवल कुछ देशों में ही उपयोग किया गया है। नीदरलैंड कंदीय जड़ वाले डाहलिया का सबसे बड़ा उत्पादक है। बड़े पैमाने पर डाहलिया का उत्पादन करने वाले अन्य देश जापान, फ्रांस, दक्षिण अफ्रीका, यू.के., इटली, जर्मनी और यू.एस.ए. हैं।

डाहलिया के उपयोग एवं महत्व

डाहलिया एक बहुमुखी फूल है, जिसका उपयोग भूदृश्य निर्माण में कई तरह से किया जा सकता है। डाहलिया का उपयोग बगीचे के बिस्तरों या पैदल मार्गों के किनारे बॉर्डर, उन्हें किसी प्रमुख स्थान पर रोपित करें, जैसे कि बगीचे के बिस्तर के केंद्र में या पैदल मार्ग के अंत में। इन्हें आँगन, डेक या अन्य बाहरी स्थानों में रंग और रुचि जोड़ने के लिए गमला में लगाया जा सकता है। डाहलिया अपने खिलने और लंबे फूलदान जीवन के कारण कटे हुए फूलों और फूलों की सजावट के लिए एक लोकप्रिय विकल्प हैं।

औषधीय महत्व

डाहलिया के औषधीय और पोषण संबंधी उपयोग भी बताए गए हैं। कंद इन्सुलिन और फ्रुक्टोज से भरपूर होते हैं और इनमें थोड़ी मात्रा में फाइटिन और बेंजोइक एसिड (व्हिटली, 1985) जैसे औषधीय यौगिक होते हैं। डहेलिया फूल के कंद उच्च रक्तचाप को कम कर सकते और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम कर सकते ह। इसमें उच्च फाइबर सामग्री होती है, जो पाचन तंत्र के लिए अच्छी होती है और मोटापा कम करने में मदद करती है (लियाइसलियाना, 2018)।

आकृति विज्ञान और वर्गीकरण

डाहलिया कंदयुक्त जड़ों वाला अर्ध-कठोर बारहमासी पौधा है। डाहलिया अधिकांश बगीचे की मिट्टी में अच्छी तरह से विकसित होते हैं। इनमें पत्ते के ठीक ऊपर एक लंबे कड़े तने पर फूल लगते हैं। इंग्लैंड की नेशनल डाहलिया सोसायटी के वर्गीकरण के अनुसार, सभी किस्मों को 10 समूहों में वर्गीकृत किया गया है।

समूह का वर्गीकरण नीचे दिया गया है

- **एकल फूल वालेः** 8-10 सेमी चौड़ाई वाले फूलों के सिर और पंखुड़ियों की केवल एक पंक्ति होती है।
- **एनीमोन पुष्पितः** फूल दोहरे होते हैं, जिनमें एक या अधिक

पंक्तियाँ होती हैं और फूलों की व्यवस्था के लिए अच्छे होते हैं।

• **कोलेरेटेः** सामान्य पंखुड़ियों की एक पंक्ति और छोटी पंखुड़ियों की एक या अधिक पंक्तियों वाले फूल एवं फूलों की सजावट के लिए बहुत अच्छा है।

• **पियोनी फूलदारः** फूलों में आम तौर पर चपटी पंखुड़ी डिस्क की दो या अधिक पंक्तियाँ होती हैं, जो स्पष्ट होती हैं। ज्यादा लोकप्रिय नहीं।

• **सजावटीः** फूल चौड़े के साथ पूर्णतः दोहरे होते हैं। पंखुड़ियों की युक्तियाँ या तो गोल या नुकीली हो सकती हैं।

• **गेंदः** फूल दोहरे, गोलाकार एवं सर्पिल रूप से व्यवस्थित पुष्पों वाले होते हैं।

• **पोम्पोनः** फूल पूरी तरह से दोहरे, टेबल टेनिस गेंदों की तरह गोलाकार होते हैं।

• **कैक्टसः** फूल पूरी तरह से दोहरे होते हैं और संकीर्ण, नुकीली पंखुड़ियाँ पीछे की ओर मुड़ी होती हैं, जो या तो सीधी या घुमावदार होती हैं।

• **सेमी-कैक्टसः** फूल पूरी तरह से दोहरे होते हैं। ये फूल प्रदर्शनी और उद्यान प्रदर्शन के लिए अच्छे होते हैं।

• **अन्यः** कुछ फूलों की किस्में दूसरे समूह के अंतर्गत आती हैं जिनमें कोई विशिष्ट गुण नहीं होते हैं।

फूल के व्यास के आधार पर वर्गीकरण

जिसमें पाँच वर्ग हैं। **(अ)** बहुत बड़ा (>25 से.मी.), **(ब)** बड़ा (20-25 से.मी.), **(स)** मध्यम (15-20से.मी.), **(द)** छोटा (10-15से.मी.), **(य)** लघु (< 10 से.मी.)।

पौध लगाते समय ध्यान देने योग्य बातें

अ) जलवायु

डाहलिया धूप वाले क्षेत्रों में उगता है। हालाँकि, इसकी खेती अर्ध-छाया में भी की जा सकती है। यह पौधा 75 से 78% की सापेक्ष आर्द्रता और 11 से 13 घंटे तक उच्च वर्षा और कम हवा की क्रिया के साथ 18 और 23 डिग्री सेल्सियस के बीच तापमान पसंद करता है।

ब) रोशनी

डाहलिया के फूल और कंदीकरण पर प्रकाश अवधि और प्रकाश की तीव्रता के प्रभाव की बड़े पैमाने पर जांच की गई है। अधिकांश किस्मों में 12-14 घंटे की दिन अवधि में फूल आते हैं। डहलिया के पौधों को एक खुली और धुप वाली जगह की आवसकता होती है परन्तु इसे तेज हवाओ के संपर्क में आने से बचाना चाहिए।

स) मिट्टी

मिट्टी के संदर्भ में, डाहलिया एक देहाती पौधा है, हालांकि यह सही जल निकासी और पीएच 6 और 8 के बीच, कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों की उच्च सामग्री के साथ सादे मिट्टी को पसंद करता है।

मिट्टी की तैयारी

डाहलिया को गमले और जमीन दोनों में उगाया जा सकता है। एक हेक्टेयर मिट्टी में 10.15 टन गोबर की खाद डालें और मिट्टी को अच्छी तरह मिलाएँ। फसल की उत्पादकता बढ़ाने के लिए समशीतोष्ण क्षेत्र में विशेष रूप से पोल्ट्री खाद के साथ कुछ जैविक खाद भी डालें।

क) जमीन पर खेतीः जमीन को 40 सेमी की गहराई तक खोदकर तैयार की गई क्यारियों पर 15 सेमी गोबर की खाद की परत बिछानी चाहिए और उसके बाद 60 ग्राम सिंगल सुपरफॉस्फेट, 30 ग्राम सल्फेट मिलाना चाहिए।

ख) गमले में खेतीः रेतीली दोमट मिट्टी, गाय की सड़ी हुई खाद और पत्ती के सांचे को समान मात्रा में मिलाकर एक बर्तन के मिश्रण को 100 ग्राम सरसों की खली और चारकोल, 50 ग्राम स्टेरामील और थोड़ी मात्रा में बगीचे के चूने के साथ अच्छी तरह मिलाया जाता है।

रोपण

डाहलिया पहाड़ी इलाकों में गर्मियों के दौरान और मैदानी इलाकों में सर्दियों के दौरान खिलते हैं। अंकुरित कंदों का उपयोग अधिकतर पहाड़ी इलाकों में रोपण के लिए किया जाता है, जबकि जड़ वाले तने की कलमों का उपयोग मैदानी इलाकों में किया जाता है। डाहलिया आमतौर पर मैदानी इलाकों में सितंबर-अक्टूबर में और पहाड़ी इलाकों में अप्रैल-मई में लगाए जाते हैं। डहेलिया की कलम लगाने का समय सितम्बर से नवम्बर तक है।

क) बीजः अंकुरण 8वें या 10वें दिन शुरू होना चाहिए, हालाँकि इसमें 21 दिन तक का समय लग सकता है। एक बार जब छोटे पौधे 5-7 सेमी ऊँचे हो जाते हैं, तो उन्हें नर्सरी के बिस्तरों में प्रत्यारोपित किया जाता है। पौधो की 20 या 22 सेमी ऊँचाई तक पहुँचने पर निश्चित क्षेत्र में प्रत्यारोपित किया जाता है।

ख) कटाईः इसके उत्पादन में अंकुरण को तेजी से प्रेरित करने के लिए कंदीय जड़ों को एक नम सब्सट्रेट में रखा जाता है; फिर अंकुरों को काटकर गमलों में जड़ने के लिए रख दिया जाता है।

ग) कंद विभाजनः सामग्री की स्थिरता के कारण यह प्रसार का सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला रूप या तरीका है। इस विधि की प्रक्रिया शुष्क मौसम की शुरुआत में मिट्टी

से अक्षुण्ण कंदीय जड़ों को निकालने और भंडारण से कुछ दिन पहले उन्हें सुखाने से शुरू होती है। भंडारण 2-10^{o}C होता है।

बुवाई का अंतर

लंबी किस्म के लिए: 75X 75 सेमी

मध्यम किस्म के लिए: 60X 60 सेमी

बौनी किस्म के लिए: 30X 45 सेमी

खाद एवं उर्वरक

नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की उच्च खुराक से विकास और फूल आने में सुधार होता है। 20-30 कि.ग्रा. या 40कि.ग्रा./ हेक्टेयर की दर से नाइट्रोजन और 30-40या 50कि.ग्रा./ हेक्टेयर की दर से P_2O_5का प्रयोग से हम बेहतर उपज प्राप्त कर सकते हैं। गाय के गोबर, खली और सड़ी मछली के प्रयोग से पौधे की वृद्धि में वृद्धि पाई गई। 20ग्राम/वर्ग मीटर यूरिया, 40ग्राम/ वर्ग मीटर डीएपी और 4किलो/ मीटर वर्ग एफवाईएम के प्रयोग से पौधे की ऊँचाई अधिक होती है, शाखाओं की संख्या अधिक होती है और संख्या भी अधिक होती है।

कल्चरल आचरण

क) स्टेकिंगः स्टेकिंग दो चरणों में की जाती है, या तो रोपण के समय या रोपण के बाद जब पौधा 25 से 30 सेमी की ऊँचाई पर होता है। नरम और भारी तनों को सहारा देने के लिए बांस के बेंत या इसी तरह के मजबूत डंडे का उपयोग किया जा सकता है।

ख) पिंचिंगः कंदयुक्त डाहलिया पौधों के मामले में, केवल सबसे मजबूत अंकुर को बरकरार रखा जाता है और अन्य अंकुर हटा दिए जाते हैं।

ग) डिस्बडिंगः अच्छे आकार और गुणवत्ता वाले फूल के उत्पादन के लिए केंद्रीय मुकुट कली को खिलने दिया जाता है, जबकि अन्य को 'मटर' के दाने को अवस्था से हटा दिया जाता है।

घ) डिसकरिंगः डिकरिंग में हमें पौधे से उत्पन्न अतिरिक्त सकर्स को हटाना होता है, जो मुख्य पौधे के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं।

ड़) मल्चिंगः डाहलिया की खेती में यह एक महत्वपूर्ण क्रिया है। चूरा, सूखी घास या पुरानी घास की गीली घास का उपयोग किया जा सकता है। मल्चिंग से मिट्टी का तापमान एक समान रहता है, इससे जल्दी और गुणवत्तापूर्ण फूल आते हैं।

सिंचाई

गमले में उगाए गए पौधों को नियमित रूप से पानी दिया जाता है और खेत में उगाए गए पौधों को तीन से चार दिन के अंतराल पर पानी दिया जाता है। अधिक पानी देने से बचना चाहिए क्योंकि इससे तेजी से लेकिन नरम विकास होता है, जड़ प्रणाली कमजोर होती है और कलियाँ फूट जाती हैं।

कटाई

कटाई या तो सुबह जल्दी या देर शाम को की जाती है, जब वायुमंडलीय तापमान तुलनात्मक रूप से कम होता है और फूलों की पंखुड़ियों में पानी का गाढ़ापन अधिक होता है। लंबे तने वाले डाहलिया के फूल को काटने की सलाह दी जाती है। कटाई के बाद तने के कटे हुए सिरे को लगभग 50 डिग्री सेल्सियस तक गर्म पानी में रखा जाना चाहिए। इसके बाद फूलों को कंडीशनिंग/प्रीकूलिंग के लिए ठंडे और अंधेरे कमरे में रखा जाना चाहिए।

कटाई के बाद की प्रक्रिया

• फूलदान समाधान

कटे हुए डाहलिया फूलों को गीले प्रकार के भंडारण में 4 से 5 डिग्री सेल्सियस पर 3 से 5 दिनों तक संग्रहीत किया जा सकता है। कटे हुए डाहलिया फूलों की लम्बी अवधि तक संगृहीत करने के लिए 10 प्रतिशत सुक्रोज + $AgNo_3$ (50 पीपीएम) के घोल के साथ रखना चाहिए। फूलों के लंबी दूरी के परिवहन के लिए, सभी पत्तियों को हटाने के बाद तनों को पानी में रखना चाहिए।

• कंदों का उठाव एवं भण्डारण

फूल आने के बाद तथा पत्तियाँ पीली हो जाने पर पौधों को जमीन से केवल 15 सेमी तना छोड़कर काट दिया जाता है। फिर कंदयुक्त जड़ों को कांटा कुदाल से निकाला जाता है और छायादार जगह पर 3 से 4 दिनों के लिए सुखाया जाता है। डहेलिया कंदों को आमतौर पर पहाड़ियों में घर के अंदर रखकर संरक्षित किया जाता है। सामान्य भंडारण तापमान 4°C और 7°C के बीच होना चाहिए। उठाने के बाद, कंदों को गर्मियों के दौरान जून में अगले रोपण तक संग्रहीत किया जाता है। भंडारण से पहले कंदों को 0.2 प्रतिशत कैप्टान से 30 मिनट तक उपचारित करना चाहिए।

कीट व रोग नियंत्रण एवं उपचार

अ) कीट

• **एफिडः** एफिड पौधों के समग्र विकास में बाधा डालते हैं और इन्हें 1 प्रतिशत मेटासिड के छिड़काव से नियंत्रित किया जाता है।

• **भृंगः** भृंग फूलों को खाते हैं (सूद और कक्कड़, 1990)।

कार्बारिल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव इस कीट को नियंत्रित करता है।

• **थ्रिप्सः** थ्रिप्स की कई प्रजातियाँ फूलों के रसदार भागों को खाते हैं। थ्रिप्स को 1 प्रतिशत मैलाथियान के छिड़काव से नियंत्रित किया जाता है।

• **यूरोपीय मकई छेदकः** युवा लार्वा अंकुर, फूलों और पत्तियों को नुकसान पहुँचाते हैं जो विकृत हो जाते हैं और भूरे रंग के हो जाते हैं जिसे 1 प्रतिशत डाइक्लोरोवोस द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

ब) रोग

• **खस्ता फफूँदीः** खस्ता फफूँदी (*एरीसिपे चिकोरेसीरम*) पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद या भूरे रंग का पाउडर जैसा द्रव्यमान विकसित करती है। बाविस्टिन, बेनलेट (0.1 प्रतिशत) या वेटेबल सल्फर (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव इस बीमारी को प्रभावी ढंग से नियंत्रित कर सकता है।

• **स्मटः** इस रोग की विशेषता गोलाकार, हल्के हरे रंग के धब्बे का विकास है, जो पत्तियों के दोनों तरफ दिखाई देते हैं। पखवाड़े के अंतराल पर डाइथेन जेड-78 (0.2 प्रतिशत) या डाइथेन एम-45 (0.2 प्रतिशत) का उपयोग करें।

• **मुरझानाः** *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम* एफ. डाहलिया और वर्टिसिलम डाहलिया मुरझाने के लिए जिम्मेदार हैं। पौधे मुरझा जाते हैं और मर जाते हैं।

• **कली एवं फूल का झुलसनाः** बोट्रीटीस सिनेरिया वह कवक है, जो कलियों और फूलों के झुलसने का कारण बनता है। यह कलियों पर पानी से लथपथ धब्बे छोड़ता है और ठंडी, आर्द्र स्थितियों में खिलता है और बढ़ता है। बीमारी के प्रबंधन के लिए ज़िनेब या 0.2% कैप्टान छिड़काव का उपयोग किया जा सकता है।

• **रिंग स्पॉटः** रिंग स्पॉट वायरस युवा पत्तियों पर हल्के नींबू के छल्ले या धब्बों के रूप में पाया जा सकता है। बीमार डाहलिया बौने हो जाते हैं, फूल नहीं आते।

क) जीवाणु रोग

• **क्राउन गॉलः** पौधे के आधार और जड़ों पर असामान्य ऊतकों का निर्माण क्राउन गॉल की एक विशेषता है। पौधों में विकास रुक जाता है और अंकुर धुरीले हो जाते हैं। स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के साथ रूट सॉकिंग से विकास कम हो सकता है।

• **बैक्टीरियोसिसः** *इरविनिया साइटोलिसिस* के कारण होने वाली यह बीमारी सबसे पहले न्यूयॉर्क बॉटनिकल गार्डन में उगाए गए डाहलिया पर दर्ज की गई थी। इस बीमारी के हो जाने पर तने भूरे हो जाते हैं और सड़ जाते हैं। बुवाई से पहले जड़ों को एंटीबायोटिक घोल में डुबाना और फसल चक्र इस बीमारी के लिए एकमात्र नियंत्रण उपाय हैं।

ख) विषाणुजनित रोग

• **मोज़ेकः** यह डाहलिया का सबसे गंभीर वायरस रोग है। पत्तियों पर शिराओं के बंधने और धब्बे पड़ने के लक्षण दिखाई देते हैं। यह वायरस व्यापक मोज़ेक या हल्के पीले धब्बों का कारण बनता है और रस के माध्यम से फैलता है।

• **ककड़ी मोज़ेक वायरस (सी. एम. वी):** यह पत्ते पर मोज़ेक लक्षण पैदा करता है। डाहलिया में डॉट-ब्लॉट संकरण के माध्यम से वायरस का पता लगाया गया है (वांग एट अल., 1988)। रोगवाहकों का नियंत्रण, 15 दिन के अंतराल पर कीटनाशकों का छिड़काव करके किया जाता है।

निष्कर्ष

डाहलिया फूल जो एस्टेरसी परिवार के अंतर्गत आता है। यह 6-8 की पीएच रेंज के साथ 18-23 डिग्री सेंटीग्रेड के इष्टतम तापमान पर विकसित हो रहा है। इसमें 10 अलग-अलग समूह हैं। डाहलिया का उपयोग विभिन्न भूनिर्माण उद्देश्यों के लिए किया जाता है और इसके कुछ चिकित्सीय लाभ भी हैं। विकास के लिए 5 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस/हेक्टेयर मिलाया जा सकता है। प्रसार के लिए कंदीय जड़ों, कंदों और कलमों का उपयोग किया जाता है। मुख्य कार्यों में स्टेकिंग, पिंचिंग शामिल हैं। ताजे फूल को काटने के बाद गर्म पानी में रखना चाहिए। 1 महीने के बाद कंदों की कटाई की जा सकती है, जिसे 4 से 7 डिग्री सेंटीग्रेड पर भंडारित किया जा सकता है। उचित देखभाल से कीट और रोग को ठीक किया जा सकता है।

संदर्भ

• भट्टाचार्जी, एस.के. बागवानी में प्रगति। खंड. 12, भाग 2., 1995

• भट्टाचार्जी, एस.के. और मुखर्जी, टी. पंजाब हॉर्टिकल्चरल जर्नल 21: 226-230, 1981

• स्मिथ, ए.डब्ल्यू. ए गार्डेनर्स बुक ऑफ़ प्लांट नेम्स। न्यूयॉर्क, यू.एस.ए.: हार्पर और रॉय पब्लिशर्स, 1963

• स्वामी विनयानंद 'डहलियास'। इनः भारत में सजावटी बागवानी। नई दिल्ली, भारतः आईसीएआर, 1986

• वांग, डब्ल्यू.सी., ट्रोनचेत, लारोक, एम.एन., डोरियन, एन. और अल्बोनी, जे. एक्टा हॉर्टिकल्चर 234.।421-428, 1988

❖❖

ISSN No. 2583-3316

घरों की छतों पर बागवानीः एक सुन्दर व उपयोगी कला

प्रो. विवेक कुमार त्रिपाठी*, जितेन्द्र चौरसिया एवं रिद्धिमा त्रिपाठी

फल विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर, (उ.प्र.)

पत्राचारकर्ताः drvktripathicsa@gmail.com

परिचय

आवासित घरों में छतों का उपयोग कम ही होता है और शायद ही कभी विभिन्न प्रकार से इसके सदुपयोग के बारे में सोचा जाता है। तेजी से हो रहे शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, भूमि की सीलिंग, इमारतों का निर्माण, चौड़ी सड़कों, कार्यालयों और बाजारों के कारण बड़े शहरों और कस्बों में बागवानी के लिए उपलब्ध भूमि कम होती जा रही है। साथ ही बदलते जलवायु परिस्थितियों के कारण, फलों और सब्जियों की खेती में इस्तेमाल होने वाले कई कीटनाशक और रसायनो से मुक्त मानव स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहे हैं। इन सबसे निजात के लिए छत पर बागवानी की बहुत संभावनाएँ बढ़ती जा रही हैं, जिसके द्वारा हम ताजे फल और सब्जियाँ शहरी वातावरण में भी प्राप्त कर सकते हैं।

घरों/बगलों में उपलब्ध स्थान का उपयोग हम फलों, सब्जियों, मसालों और हर्बल पौधों को उगाने के लिए प्रभावी ढंग से कर सकते हैं। यह स्थान आपके घर की छत, पोर्च, या बालकनी भी हो सकती है। एक अच्छी तरह से नियोजित छत उद्यान पूरे साल फलों और सब्जियों की आपूर्ति सुनिश्चित करता है। छत उद्यान के रखरखाव में शामिल होने से तनाव को भी दूर करने में मदद मिलेगी, जिससे स्वस्थ्य जीवन शैली अपनाई जा सकेगी।

घरों की छत पर बगीचा बनाने से पहले विचार करने योग्य बिंदु

- **बगीचे के लिए छत की उपयुक्तता का आकलनः** इमारत की संरचनात्मक अखंडता की जाँच करें और सुनिश्चित करें कि छत इस बढ़े हुये भार को सहन कर सकती है कि नहीं, क्योंकि मिट्टी और गमले भारी होते हैं और पौधों के बढ़ने के साथ-साथ और भारी होते जाएंगे।
- **छत पर जल निकासी और जल रोधकताः** सिंचाई और

ISSN No. 2583-3316

वर्षा के अतिरिक्त पानी की निकासी के लिए उपयुक्त व्यवस्था करें। जिस छत पर आप साग-सब्जी लगाने की योजना बना रहे हैं, वहाँ पर प्लास्टिक शीट, पॉलीमर कोटिंग आदि का उपयोग करके छत को जल रोधी बनाएँ। छत के लिए लगाई जाने वाली जलरोधक झिल्ली जड़ और सड़न-प्रतिरोधी भी होनी चाहिए।

• **सूरज की रोशनी:** जब किसी भी प्रकार के पौधे की खेती की बात आती है, तो सूरज की रोशनी महत्वपूर्ण होती है क्योंकि प्रयोग की जा रही साइट खुली होनी चाहिए और वहाँ कम से कम 6 से 8 घंटे तक भर पूर धूप रहती हो। छत के बगीचों में उगाई जाने वाले पौधे, सब्जियाँ, फूल और जड़ी-बूटियाँ उपलब्ध धूप की मात्रा से निर्धारित होती हैं।

• **सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता:** पौधों को नियमित रूप से हल्की मात्रा में पानी दिया जाना होता है, इसलिए पौधों को पानी देने के लिए पानी की टंकी और नल का प्रावधान होना चाहिए।

छत पर बगीचे के प्रकार

अ) कंटेनर बागवानी: बागवानी का यह एक कम खर्चीला और अत्यधिक लचीला रूप है, जो मौजूदा छत संरचना में बहुत कम या बिना किसी बदलाव के शहरी सेटिंग्स के लिए विशेष रूप से प्रभावी है। कंटेनरों को प्लास्टिक के ड्रम, बाल्टियों, मिट्टी के बर्तनों, सीमेंट की थैलियों, भंडारण कंटेनर, लकड़ी के बक्सों से लेकर कई तरह की सामग्रियों से बनाया जा सकता है, जो घर में आसानी से उपलब्ध हों। कंटेनर बागवानी उन लोगों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है, जिनके पास छत की वास्तविक संरचना में बदलाव करने के लिए साधन या इच्छाशक्ति की कमी होती है।

ब) ग्रीन रूफ सिस्टम: दूसरे प्रकार के रूफ गार्डन, जिसमें छत को रोपण माध्यम के रूप में उपयोग किया जाता है, इसके लिए अधिक निवेश की आवश्यकता होती है। इसमें विशेष रूप से डिजाइन की गई परतें बगीचे को कठोर छत से अलग करती हैं, जो जल निकासी प्रदान करने के साथ पोषक तत्व भी प्रदान करती हैं। आमतौर पर उथली जड़ वाली सब्जियाँ छत के बगीचों में उगाई जाती हैं और छत के बगीचे के रखरखाव के लिए समय-समय पर परिपक्वता के बाद पौधों को हटा दिया जाता है।

गमले और पौधे

• **मिट्टी के गमले:** यह मिट्टी से बने होते हैं और पौधों के लिए उत्कृष्ट जल निकासी प्रदान करते हैं।

• **प्लास्टिक के गमले:** यह हल्के और किफायती होते हैं और विभिन्न रंगों और आकारों में उपलब्ध होते हैं।

• **सिरेमिक गमले:** यह सजावट के लिए आकर्षक होते हैं, लेकिन अपेक्षाकृत भारी होते हैं।

• **ग्रोबैग्स:** यह गमले कपड़े से बने होते हैं और हल्के होते हैं, जड़ों को अच्छे से फैलने और जल निकासी में मदद करते हैं।

• **हैंगिंग बास्केट:** यह एक लटकने वाली टोकरी होती है, जिसका उपयोग कम जगह में पौधे उगाने के लिए उपयुक्त किया जाता है विशेष रूप से फलों और छोटी सब्जियों के लिया इसका उपयोग करते है

• **उठे हुए बेड:** यह छोटे से उठे हुए खेत होते हैं, जो छत पर बनाए जा सकते हैं। इनमें सब्जियाँ और अन्य पौधे उगाने के लिए अधिक मिट्टी और संरचना मिलती है।

छत पर बगीचे बनाने की योजना

क) ले-आउट: छत पर बगीचे का ले-आउट छत पर बगीचे की स्थापना करते समय पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम है। आप या तो पूरी सतह को मिट्टी से ढक सकते हैं या पौधों को उगाने के लिए गमलों और पौधो का उपयोग कर सकते हैं।

ख) पौधों का चयन: जगह की उपलब्धता के आधार पर, छत पर विभिन्न प्रकार की सब्जियाँ (टमाटर, बैंगन, मिर्च, भिंडी,

ISSN No. 2583-3316

गमलों में रसदार नींबू

गमलों में शिमला मिर्च

लौकी, तोरई, खीरा, बीन्स, पालक, चौलाई, शिमला मिर्च, मूली, गाजर, धनियाँ एवं मेथी, इत्यादि) और फल (आम, अमरूद, नींबू, बारबाडोस चेरी, अनार, पपीता, स्ट्रॉबेरी, रसभरी एवं कमलम (ड्रैगन) फल आदि) उगाए जा सकते हैं। फलों और सब्जियों के अलावा, अपने बगीचे में हर्बल और औषधीय पौधे (तुलसी,लेमनग्रास, एलोवेरा, शतावर, आदि) तथा शोभाकारी पौधे (गुलाब, चंपा, रातरानी, विभिन्न एनुअल, टिकोमा, आदि) भी लगाने के बारे में सोच सकते हैं। बगीचे में पौधों की विविधता एक स्वस्थ्य और विविध आहार में सफलता की गारंटी है। वास्तव में, यह आप को अधिक संख्या में पोषक तत्वों तक पहुँच बनाने में सक्षम करेगा क्योंकि प्रत्येक फल-सब्जी की अलग-अलग विशेषताएँ होती हैं।

ग) मिट्टी की तैयारीः किसी भी खेत की ताजी मिट्टी, जिसमें सही मात्रा में जैविक खाद और वर्मी कम्पोस्ट हो, इस उद्देश्य के लिए अच्छी होती है। घर पर बागवानी के लिए मिट्टी में खाद उर्वरक और कंपोस्ट का मिश्रण मिला देते हैं। ऐसे मिश्रणों को प्राथमिकता दी जाती है, जो बहुत हल्के होते हैं और जिनमें रासायनिक उर्वरक नहीं होते हैं। घर की बनी खाद, वर्मी कम्पोस्ट,को कोपीट आदि आदर्श मिश्रण है क्योंकि यह घर पर फल चक्र को पूरा करने की अनुमति देते हैं।

छत पर सब्जियाँ उगाने के लिए बेकार पड़ी बाल्टियों और टबों का उपयोग

घ) बुवाईः भिंडी, क्लस्टरबीन, करेला, लौकी, गाजर और मूली जैसी सब्जियों के बीज सीधे माध्यम में बोए जाते हैं। बैंगन, टमाटर और मिर्च आदि सब्जियों के बीज से 20-25 दिन पुरानी पौध तैयार कर रोपित किया जाता है। प्रबंधन, जैविक खादों का उपयोग और कीट नियंत्रण के जैविक तरीके अपनाए जा सकते हैं। कीटों के संक्रमण से बचाने के लिए पौधों पर नीम के तेल का छिड़काव किया जा सकता है, ताकि चूसने वाले कीटों को नियंत्रित किया जा सके, जो छत पर बागवानी में एक बड़ी समस्या है। अदरक, लहसुन,नीम की पत्ती और मिर्च आदि को सड़ा कर, पानी में बनाया गया घोल का स्प्रे भी कीट नियंत्रण में बहुत प्रभावी है।

निष्कर्ष

इस प्रकार छत पर बगीचे की डिजाइन और प्रकार, बागवानी और उसके रखरखाव में आपकी रुचि पर निर्भर करता है जिन्हें आप प्राप्त करना चाहते हैं। पौधे इमारतों को इन्सुलेट और छाया प्रदान कर के ठंडा रखने के साथ-साथ शहरी वायु की गुणवत्ता में भी सुधार करते हैं। एक बार जब छत को बागवानी के लिए विकसित कर दिया जाता है, तो यह डिजाइन, मॉडल और आकार की परवाह किए बिना बनी रहती है। छत पर बगीचा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए मन की शांति के साथ परिवार की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को भी पूर्ण कर आनंद देता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में खुबानी की सफल बागवानी

गोपाल मणि[1]*, ओमवीर सिंह[2], रत्ना राय[3], रजनी पंत[4] एवं दीक्षा रावत[5]

[1,2,3एवं5] उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गोविन्द बल्लभ पंत, कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, ऊधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड

[4]विषय वस्तु विशेषज्ञ, (उद्यान) के.वी.के. लोहाघाट, उत्तराखण्ड

पत्राचारकर्ता: gaurgm97@gmail.com

परिचय

खुबानी (*प्रूनस आर्मेनियाका* एल.) एक गुठलीदार फल है, जो भारत के शुष्क शीतोष्ण और मध्य-पहाड़ी क्षेत्रों में उगाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण फल है। खुबानी स्व-परागित फल वृक्ष हैं, जो कि रोजेसी परिवार और प्रूनस जीनस के अन्तर्गत आता है। मुख्यतया खुबानी का उद्गम स्थान चीन माना जाता है जबकि जंगली खुबानी, जिसे जरदालू अथवा चूलू के नाम से जाना जाता है, का उद्गम स्थान भारत माना जाता है। सूखी खुबानी को भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में बादाम, अखरोट और न्योजे की तरह सूखे मेवे के रूप में खाया जाता है। कश्मीर और हिमाचल के कई इलाकों में सूखी खुबानी को किश्त या किष्ट कहते हैं। माना जाता है कि कश्मीर के किशतवा क्षेत्र का नाम इसीलिए पड़ा क्योंकि प्राचीनकाल में यह जगह सूखी खुबानियों के लिए प्रसिद्ध थी। भारत में खुबानी उत्तराखण्ड, शिमला, हिमाचल प्रदेश और उत्तर पूर्वी पहाड़ियों में जंगली रूप के साथ साथ व्यवसायिक रूप में भी पाया जाता है। उत्तराखंड भारत में खुबानी का सबसे बड़ा उत्पादक है, जो 0.282 लाख मीट्रिक टन फल का उत्पादन करता है। उत्तराखंड बागवानी विभाग ने अल्मोड़ा को खुबानी क्षेत्र के रूप में नामित किया है, और अगले पाँच वर्षों में जिले में 130 नई खुबानी प्रसंस्करण इकाइयाँ स्थापित करने के लिए काम कर रहा है (https://timesofindia.indiatimes.com/2021). खुबानी का उपयोग मिठाइयाँ, जैम, नेक्टर, स्क्वैश आदि के रूप में किया जाता है और फलों को सुखाकर डिब्बाबंदी प्रसंस्करण में भी किया जाता है। खुबानी के फल की मीठी गुठली का उपयोग मिष्ठान और कड़वी गुठली का तेल निष्कर्षण में किया जाता है। भारत में व्यवसायिक रूप से खुबानी की खेती बहुत सीमित है। यह कई देशों में दैनिक व्यंजनों के लिए लोकप्रिय फल है। भारत में इसे कई स्थानीय नामों से जाना जाता है, जैसे चूली, चूलू (गढ़वाल/कुमाऊँ), जरदालू, खुबानी, खुमानी (हिंदी), जलधरू पांडु (तेलुगु), सारा परुप्पु, सरक्कराई बादामी (तमिल), जरदालु (कन्नड़), मुट्टा पजम, शीमा पजम (मलयालम), जरदालू (गुजराती), जर्दालू (मराठी)।

चित्र. फलों से आच्छादित खुबानी वृक्ष

ISSN No. 2583-3316

औषधीय एवं पौष्टिक महत्व

खुबानी और इसकी गिरी अथवा गुठली का महत्व विभिन्न औषधीय उपयोगों में देखा गया है, जिनमें एंटीपैरासिटिक, एंटीकैंसर, एंटीएजिंग, एंटीएथेरोस्क्लेरोटिक, एंटीएन्जाइनल, कार्डियोप्रोटेक्टिव, हेपेटोप्रोटेक्टिव, रीनोप्रोटेक्टिव और एंटीऑक्सीडेंट (लाइकोपीन और कैरोटीनॉयड) शामिल हैं। खुबानी में फाइबर की मात्रा अधिक होने के कारण यह आंत को स्वस्थ्य रखने तथा पाचन सुधार में मदद करता है। इसमें सूजनरोधी गुण होता हैं, जो सूजन को कम करता हैं। गैस्ट्रिक अल्सर, गैस्ट्राइटिस और कोलाइटिस जैसी समस्याओं की रोकथाम में मदद करता है। खुबानी अपने एंटीऑक्सीडेंट गुणों के कारण मुक्त कणों द्वारा श्वसन कोशिकाओं में होने वाले नुकसान को रोककर अस्थमा को कम करने में मदद करता है। खुबानी वात दोष को संतुलित रखता है जिससे खुबानी का तेल बालों को स्वस्थ रखने और बालों के झड़ने को रोकने में मदद करता है। उपस्थित एमिग्डालिन घटक तथा विटामिन ए से भरपूर खुबानी, आँखों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है। अन्य फलों की तुलना में खुबानी के फलों में कार्बोहाइड्रेट, विटामिन ''ए'' और नियासिन अधिक मात्रा में पाया जाता है साथ ही यह खनिजों से भरपूर होता है, जिसमें पौटेशियम, अयस्क, मैग्नीशिम और फॉस्फोरस विशेष है। खुबानी विटामिन A, C और E और फाइबर का भी बहुत अच्छा स्रोत है। क्लोरोजेनिक, नियोक्लोरोजेनिक, आइसोक्लोरो-जेनिक, कैफिक, β कौमारिक, पी-कौमारिक और फेरुलिक एसिड डेरिवेटिव जैसे फेनोलिक एसिड खुबानी में मुख्य रूप से पाए जाते हैं।

बागवानी क्रियायें

• उपयुक्त जलवायू और भूमि

सफेद गूदा और मीठी गुठली वाली खुबानी को ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है, जो कि औसतन समुद्र तल से 3000 मीटर ऊँचाई वाले शुष्क समशीतोष्ण क्षेत्रों में उगाया जाता हैं। कड़वी गुठली और पीले गूदे वाले खुबानी को मध्यम गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है जिसे औसतन समुद्र तल से 1000 से 1500 मीटर वाले क्षेत्रों में उगाया जाता है। अधिक ऊँचाई पर दक्षिण पश्चिमी और कम ऊँचाई पर उत्तर पूर्वी भारत खुबानी की खेती हेतु सबसे उपयुक्त हैं। औसत ग्रीष्मकालीन तापमान 16.6 से 32.2°C के बीच विकास और गुणवत्ता वाले फल उत्पादन के लिए उपयुक्त है। खुबानी को विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। हालाँकि, अच्छे कार्बनिक पदार्थ, अच्छी जल निकासी वाली 6.0 से 6.8 पीएच युक्त इसकी वृद्धि और उपज के लिए सर्वोत्तम होती है।

खुबानी की प्रमुख प्रजातियाँ

भारत के विभिन्न क्षेत्रों हेतु खुबानी की उपयुक्त प्रजातियाँ निम्नलिखित है-

अ) मध्य पर्वतीय क्षेत्र हेतुः न्यू कैसल, अर्ली शिप्लै, न्यू लार्ज अर्ली, कैसा, शक्करपारा, मूरपार्क, टर्की, एसटी. एम्ब्रोइस, शिप्लै अर्ली, चौबटिया अलंकार, चौबटिया मधु, चौबटिया केसरी, सीआईटीएच खुबानी-1, 2 एवं 3 इत्यादि उपयुक्त होती है।

ब) उच्च पर्वतीय क्षेत्र हेतुः कैसा, नगेट, रॉयल सफैदा, चार्मगज, एसटी. एम्ब्रोइस, मूरपार्क, नारी एवं हल्मन इत्यादि उपयुक्त होती है। ।

स) शुष्क शीतोष्ण क्षेत्र हेतुः चार्मगज, सफैदा, शक्करपारा, कैसा, हल्मन और नारी इत्यादि उपयुक्त होती है।

प्रवर्धन एवं मूलवृन्त

खुबानी का व्यावसायिक प्रवर्धन टी-बडिंग, टंग ग्राफ्टिंग और चिप बडिंग द्वारा किया जाता है। जंगली खुबानी, प्लम और आडू के बीजू पौधों को मुख्य रूप से मूलवृन्त हेतू उपयोग किया जाता है। मूलवृन्त तैयार करने के लिये पके हुए फलों से बीज एकत्र करने के पश्चात् बीजों की सुबुप्तावस्था तोड़ने के लिए 4 डिग्री सेल्सियस पर 45 दिनों की अवधि के लिए स्तरीकरण की आवश्यकता होती है। स्तरीकरण के बाद, अंकुरण में वृद्धि हेतु बीजों को बुवाई से पहले 24 घंटे की अवधि के लिए 5 पीपीएम काइनेटिन या 500 पीपीएम जिबरेलिक अम्ल के घोल में भिगोना चाहिए। इसके बाद बीज को नर्सरी शैय्या पर 15 से 20 सेमी की दूरी पर बुवाई करनी चाहिए। बुवाई के बाद नर्सरी क्यारियों पर पलवार बिछाकर हल्की सिंचाई करनी चाहिए। बुवाई के एक वर्ष बाद पौधे पेन्सिल योग्य आकार में तैयार हो जाते है, जो कि प्रवर्धन कार्य करने हेतु उपयुक्त होते है। इसके अतिरिक्त क्लोनल रूटस्टॉक्स/ मूलवृन्त हेतु माइरोबालन 29सी, मैरिअन्ना 2624, मैरिअन्ना 7/7, जीएफ 31 और जीएफ 8-1 का उपयोग किया जाता है।

भूमि की तैयारी और पौध रोपण

रोपण से 1 माह पूर्व 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोदकर प्रत्येक गड्ढे को मिट्टी और 60 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद (एफवाईएम), 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट और 10

मिली लीटर क्लोरपाइरीपॉस प्रति लीटर पानी के घोल के मिश्रण से भरा देना चाहिए। खुबानी के पौधे आम तौर पर 6×6 मीटर की दूरी पर लगाए जाते हैं। मिट्टी में नमी संरक्षण एवं खरपतवार नियन्त्रण हेतु पौधों के थालों को 10 से 15 सेमी मोटी घास से ढक देना चाहिए। पौधों को पतझड़ मौसम के दौरान अर्थात दिसंबर के अंत से फरवरी माह तक मुख्य खेतों में लगाया जाता है। पौध रोपण कार्य समतल भूमि पर, नियमित रोपण रूपरेखा/लेआउट प्रणाली जैसे वर्गाकार और त्रिकोणीय विधि द्वारा किया जाता है, जबकि पहाड़ी ढलानों पर, समोच्च प्रणाली आमतौर पर प्रचलित है।

पौधों में प्रशिक्षण कार्य और काट-छाँट

खुबानी के पेड़ों को संशोधित केंद्रिय शाखा और खुले आधार प्रणालियों पर प्रशिक्षित किया जाता है। पौधरोपण के समय एक वर्ष पुराने पौधे को जमीन की सतह से 70 सेमी ऊपर से काटकर बगल से विकसित 4-5 शाखाओं को वृद्धि के लिये छोड़ देना चाहिए। पोधौं को उचित आकार प्रदान करने के लिए कटाई-छँटाई का कार्य सुसुप्त अथवा पतझड के मौसम में करना चाहिए। छँटाई के बाद टहनियों के कटे सिरे पर मशोबरा या चौबटिया पेस्ट लगाना चाहिए।

सिंचाई एवं जल निकास

खुबानी को विशेष रूप से अप्रैल से मई के महीने में फल विकास चरण के दौरान सिंचाई की आवश्यकता होती है। अत्यधिक गर्म और शुष्क अवधि के दौरान, 8-10 दिनों के अंतराल (मई से जून) पर सिंचाई करनी चाहिए। भारी बारिश की स्थिति में उचित जल निकास की व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि खुबानी के वृक्ष जल जमाव के प्रति संवेदनशील होते हैं।

खाद एवं उर्वरक

उर्वरक की आवश्यकता मिट्टी के प्रकार, वृक्ष की उम्र और कृषण क्रियाओं पर निर्भर करती है। सिंचित परिस्थितियों में प्रत्येक परिपक्व खुबानी के वृक्ष (7 वर्ष और उससे अधिक) के लिए 40-45 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद, 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस और 200 ग्राम पोटैशियम का मिश्रण अधिमानित है। गोबर की खाद को दिसंबर से जनवरी के महीने में फॉस्फोरस और पोटास की पूरी खुराक के साथ दिया जाना चाहिए। नाइट्रोजन को 2 विभाजित खुराक में देना चाहिए, जिसमें आधी खुराक फूल आने से 3 सप्ताह पूर्व और शेष आधी खुराक 4 सप्ताह पश्चात् उपलब्ध करानी चाहिए।

फूल, फलन और उपज

फूल आने का समय और अवधि किस्म और मौजूदा मौसम की स्थिति के अनुसार बदलती रहती है। मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में खुबानी में फूल मार्च के महीने में खिलते हैं जबकि अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों में मार्च के अंत और अप्रैल माह में खिलते हैं। सतह के रंग में बदलाव, पूर्ण पुष्पन से लेकर तुडाई तक का समय और फलों में कुल वसीय अम्ल (टी.एस.एस.) को परिपक्वता का सबसे अच्छा सूचकांक माना जाता है। फलों की तुड़ाई सुबह के समय की जानी चाहिए तथा ग्रेडिंग और पैकिंग के दौरान फलों को सीधे सूर्य के संपर्क में आने से बचाना चाहिए। खुबानी के पेड़ 5 साल की उम्र में फल देना शुरू कर देते हैं और 30-35 साल तक आर्थिक उपज देते हैं। खुबानी का पेड लगभग 8-10 वर्ष में पूर्ण फलन की स्थिति में आता है, जिससे लगभग 50-80 किलोग्राम फल प्रति पेड़ प्राप्त होता है।

तुडाई उपरान्त प्रबंधन

पैकिंग से पहले, फलों को फल के आकार के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। फलों को लकड़ी के बक्से या सीएफबी डिब्बों में पैक किया जाता है। फलों को घिसाव (ब्रुशिंग) से बचाने के लिए बक्सों में, नीचे चीड़ के पत्तों को बिछाकर एक गद्देदार परत तैयार की जाती है। खुबानी के फलों को 0°C पर 85-95 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता के साथ 1-2 सप्ताह तक भंडारित किया जा सकता है।

हानिकारक रोग और कीट

खुबानी कई जीवाणु जनित रोगों के प्रति संवेदनशील है, जिसमें जीवाणु कैंकर, ब्लास्ट, जीवाणु स्पॉट और क्राउन गॉल शामिल हैं। यह भूरे रंग की सड़न, अल्टरनेरिया स्पॉट, फल सड़न और चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू) जैसे फफूँद जनित रोगों के प्रति भी संवेदनशील है। इसके अलावा, खुबानी परजीवी नेमाटोड और वायरस के प्रति भी संवेदनशील है। राज्य के मध्य पहाड़ियों के अंतर्गत एपोप्लेक्सी, खुबानी की एक प्रमुख बीमारी है, जो खुबानी को आर्थिक रूप से क्षति पहुँचाता है। इसके अतिरिक्त खुबानी एफिड्स, माइट्स और स्केल से भी प्रभावित होती है, हालांकि, इन्हें पतझड के दौरान कीटनाशकों और खनिज तेल के छिडकाव द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

प्रमुख रोग

क) एपोप्लेक्सी: यह खुबानी का हानिकारक रोग है, जिसे खुबानी डिक्लाईन के नाम से भी जाना जाता है। पेड़ का पूरा

या आंशिक रूप से मुरझा जाना इसका प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग के प्रमुख रोगजनकों में प्यूडोमोनस सिरिंगे और एज्टोस्पोरा एंटा शामिल हैं (रोज्सन्याय 1986, क्रॉपिस 1984)।

रोकथामः रोकथाम हेतु काट-छाँट से पूर्व और बाद में पौधों पर बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करना चाहिए।

ख) बैक्टीरियल गमोसिस (*प्रीडोमेनस स्पीसीज*): यह रोग विश्व भर में फैला हुआ है। यह जड़ों को छोड़कर पौधे के सभी भागों पर हमला करता है। छाल और फलों पर गोलाकार से लेकर लम्बे भीगे हुए गोंद के घाव बन जाते हैं फलस्वरूप प्रभावित फल बिक्री के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं।

रोकथामः आमतौर पर यह देखा गया है कि अच्छी तरह से प्रबंधित पेड़ इस बीमारी से कम प्रभावित होते हैं। मानसून की शुरुआत से पहले 1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी की दर से स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का छिड़काव करने से गमोसिस की घटना कम हो जाती है। इसके अलावा, पत्तियों के गिरने के बाद 3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करना चाहिए।

ग) ब्राउन रॉट और ब्लॉसम ब्लाइट (*मोनिलिनिया लैक्सा*): इनके लक्षण फलों पर छोटे, गोलाकार धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जो बाद में राख युक्त रंग के गुच्छों से ढक जाते हैं। फूल भी प्रभावित होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप फूल मुरझा जाते हैं। खुबानी में यह बीमारी गंभीर होती है और टहनियों तक फैल जाती है जिससे युवा शाखाएँ मुरझा जाती हैं और सड़ जाती हैं।

रोकथामः कटाई से लगभग तीन सप्ताह पहले कैप्टान (0.3 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए। ब्लॉसम विल्ट/ब्लाइट के नियंत्रण के लिए फूल आने पर कार्बनडाजिम (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करें और 7-10 दिनों के बाद दोहराना चाहिए।

प्रमुख कीट

क) प्लम स्केलः यह खुबानी, प्लम और आडू का प्रमुख कीट हैं। पेड़ की वर्तमान वृद्धि पर छोटी गाँठ जैसी बिना कवच स्केल वाली भूरे रंग की मादा देखी जा सकती है। वयस्क मादाएँ अंकुरों से रस चूसती हैं जबकि निम्फ मुख्य रूप से पत्तियों पर पनपते हैं। उनके द्वारा स्रावित रस से चींटियाँ और मक्खियाँ आकर्षित होती हैं जो फलों को नुकसान पँहुचाती है। परिणामस्वरूप खराब गुणवत्ता वाले या छोटे आकार के फल प्राप्त होते हैं।

रोकथामः मोनोक्रोटोफॉस (0.036 प्रतिशत) या मिथाइल डेमेंटन (0.025 प्रतिशत) का कटाई के बाद छिड़काव इस स्केल को नियंत्रित करने में प्रभावी है।

ख) आडू फल मक्खीः आडू फल मक्खियाँ फलों के अंदर अंडे देती हैं और लार्वा गूदे को खाते हैं, जिससे फलों में सड़न क्रिया शुरू हो जाती है और फल खाने के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं। संक्रमित पेड़ों की बेसिन मिट्टी में 2-7 सेमी गहराई पर कोषस्थ कीट धारण (प्यूपेशन) अवस्था पूर्ण होती है।

रोकथामः जब फल हरे से पीले रंग में बदलने लगें तो पत्तियों पर 0.1 प्रतिशत मैलाथियान और 1 प्रतिशत चीनी के घोल का छिड़काव करें अथवा 1 लीटर पानी में 10 मिली मैलाथियान घोल में 25 ग्राम गुड़/चीनी मिलाकर छिड़काव करना चाहिए, जिससे मक्खियाँ नियंत्रण में रहती है।

निष्कर्ष

पहाड़ी क्षेत्रों में खुबानी की खेती किसानों के लिए एक मूल्यवान अवसर प्रदान करती है, क्योंकि यह फल ठंडी जलवायु और खड़ी ढलानों के अनुकूल है। पहाड़ी वातावरण खुबानी के पनपने के लिए आदर्श परिस्थितियाँ प्रदान करता है, जिससे उच्च गुणवत्ता वाली पैदावार सुनिश्चित होती है। हालाँकि, सफल खेती के लिए जल संसाधनों, मिट्टी की उर्वरता और कीट/रोग नियंत्रण के उचित प्रबंधन की आवश्यकता होती है। घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में खुबानी की बढ़ती मांग के साथ, यह खेती एक लाभदायक उद्यम के रूप में काम कर सकती है। टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाकर और स्थानीय जलवायु लाभों का लाभ उठाकर, पहाड़ी क्षेत्रों के किसान खुबानी की खेती के माध्यम से आजीविका में सुधार कर सकते हैं और क्षेत्र के आर्थिक विकास में योगदान दे सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

टमाटर की उत्पादन तकनीक

फूलसिंह मरकाम
उद्यानिकी, कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र, कांकेर, छत्तीसगढ़
पत्राचारकर्ता: markamphoolsingh@gmail.com

परिचय

सोलेनेसी कुल के सब्जियों में टमाटर का प्रमुख स्थान है, जिसका वानस्पतिक नाम *लाइकोपर्सिकन एस्कुलेन्टम* है। भारत के आन्ध्र-प्रदेश, कर्नाटक, उडीसा, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, बिहार, गुजरात, छत्तीसगढ़ एवं मध्यप्रदेश टमाटर उत्पादन में अग्रणी राज्य है। एक अनुमान के अनुसार भारत में टमाटर का क्षेत्रफल 8,65,000 हजार हेक्टेयर तथा उत्पादन 1,68,26,000 मीट्रिक टन होता है। पोषक मूल्य के मान से टमाटर एक बहुत पौष्टिक सब्जी है, जिसमें आवश्यक पोषक तत्व प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज पदार्थ, फाइबर, कैल्शियम, मैग्नीशियम, विटामिन सी एवं विटामिन ए आदि काफी मात्रा में पाये जाते है, जो मानव शरीर के विकास के लिए आवश्यक हैं। ताजे पके हुए टमाटर से विभिन्न प्रकार के प्रसंस्कृत खाद्य् पदार्थ तैयार किये जाते है, जैसे टमाटर सॉस, केचप, चटनी, पियूरी एवं टमाटर क्रस इत्यादि। अनाज वाले फसलों की तुलना में टमाटर की प्रति इकाई क्षेत्र अधिक उत्पादन एवं वर्ष भर बाजार माँग के कारण किसान भाई इसकी व्यवसायिक खेती कर अधिक आर्थिक लाभ कमा सकते हैं।

टमाटर की उन्नत किस्में

व्यावसायिक रूप से उगाये जाने वाले टमाटर के उन्नत एवं संकर किस्में निम्नानुसार है

उन्नतशील कस्में: पूसा अर्ली ड्वार्फ, स्वीट 72, पूसा गौरव, पंजाब छुहारा, पुसा शीतल, पूसा उपहार, अर्का विशाल, नवीन, सी.ओ.-1, सी.ओ-2 आदि प्रमुख किस्में है।

संकर किस्में: लक्ष्मी, निधि, अविनाश-2, मंगला, रूपाली, रश्मि, अर्का रक्षक, एन एस-815 आदि प्रमुख संकर किस्में है।

जलवायु: टमाटर उष्ण जलवायु वाली फसल है। इसके बीज के अंकुरण के लिये 25 डिग्री सेन्टीगेट तापमान उचित पाया गया है। टमाटर के उचित बढ़वार एवं उपज के लिये औसतन 14 से 24 डिग्री सेन्टीगेट तापमान की आवश्यकता पड़ती है। रात का तापमान 15 डिग्री सेन्टीग्रेड से 20 डिग्री सेन्टीग्रेड रहने पर अधिकतम फल लगते है। न्यूनतम तापमान 13 डिग्री सेन्टीग्रेड से कम होने पर तथा 38 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान होने पर फलों के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। पौधों की अच्छी वृद्धि एवं गुणवत्तायुक्त फल के लिए धूप की आवश्यकता होती है। इसलिए इसे खुले स्थानों में उगाना चाहिए।

भूमि का चुनाव: इसकी व्यवसायिक खेती के लिए खुले जगह का चयन करें। टमाटर की खेती उन सभी प्रकार की मुदाओं में सफलता पूर्वक की जा सकती है, जिसकी जल धारण क्षमता एवं जल निकास उचित हो एवं मृदा में पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक पदार्थ हो इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम होती है। इसकी खेती के लिए 6-7 पी.एच. मान वाली बलुई दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है।

खेत की तैयारी: खेत की एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें तथा उसके उपरांत 3-4 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर/रोटावेटर से करें। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य चलाये ताकि मिट्टी भूरभूरा हो सके। आखिरी जुताई के पहले 250-300 क्विंटल अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में फैला दें।

बुवाई का समय एवं बीज दर: अधिक पैदावार हेतु टमाटर की बुवाई सितम्बर के अंत से नवम्बर तक कर सकते है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए उन्नतशील किस्मों हेतु 400-500 ग्राम बीज तथा संकर किस्मों हेतु 150-200 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचारः नर्सरी में बीज बोने से पहले बीज का उपचार थाइरम या अन्य फफूँदनाशक दवा (2.5 ग्राम/किलो बीज) से किया जाता है।

नर्सरी तैयार करना

टमाटर की नर्सरी तैयार करने के लिए ऐसे स्थान का चयन करें, जहां खुला धूप पड़ता हो, भूमि उपजाऊ हो तथा सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो। टमाटर की नर्सरी के लिए दो तरह की, ऊपर उठी हुयी क्यारियाँ एवं समतल क्यारियाँ बनायी जाती है तथा गर्मी के मौसम में पौधे तैयार करने हेतु समतल क्यारियाँ बनाते हैं और अन्य मौसम जैसे वर्षा एवं ठंड के लिये ऊपर उठी हुई क्यारियाँ बनानी चाहिए। एक हेक्टेयर में रोपाई के लिये 3X1 मीटर आकार के लगभग 10 क्यारी तैयार करें, जो सतह से 12-15 सेमी उठी हुई हो। प्रत्येक क्यारी में 7-10 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर खाद मिला दें तथा समतल करके पंक्तियों में लगभग 2 सेमी की गहराई पर उपचारित बीज की बुवाई करें और फव्वारें; हजारा से पानी दें। प्रारम्भ में पानी प्रत्येक दिन सुबह-शाम दें, बाद में आवश्यकतानुसार 1-2 दिन के अन्तराल में देना चाहिए।

नींदानाशक का प्रयोग

टमाटर में निम्नलिखित नींदानाशकों में से किसी एक का प्रयोग कर सकते है फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन) 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या मेरीटेन्जीन (सेन्कोर) 0.25-0.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या एलैक्लोर (लासो) 2.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर। इन नींदानाशको को रोपाई के एक दिन पूर्व खेत में छिड़काव करें। ध्यान में रखें कि नींदानाशक का उपयोग करते समय खेत में थोड़ी नमी उपलब्ध हो एवं इन नींदानाशकों को दतारी से खेत में मिलाना बहुत आवश्यक है अन्यथा वांछित परिणाम नहीं मिलता है।

पौधां की रोपाई एवं दूरी

बीज बुवाई के 20-25 दिन बाद जब पौध की ऊँचाई 12-15 से.मी. के हो, तब पौधां को तैयार खेत में रोपाई करना चाहिये। इसकी उचित पैदावार के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 75-90 सेन्टीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 45-60 सेन्टीमीटर होनी चाहिये। पौधो की रोपाई दोपहर के बाद या जब बादल छाये हुए हो, तब करनी चाहिये।

खाद एवं उर्वरकः टमाटर के लिये 250-300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अच्छी सडी हुई गोबर खाद की आवश्यकता होती है। टमाटर के अधिक उत्पादन हेतु ओपन पोलिनेटेड जातियों के लिये औसतन 100 किलो नत्रजन, 60 किलो स्फुर एवं 60 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। संकर जातियों के लिये 213 किलो नत्रजन, 240 किलो स्फुर एवं 250 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

सिंचाई

मिट्टी के प्रकार एवं मौसम के अनुसार टमाटर में सामान्यतः रबी मौसम में 7-11 दिनों के अंतराल पर तथा जायद के दिनों में 4-5 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

निंराई-गुड़ाई

टमाटर की फसल रोपाई के 30-45 दिन बाद फसल की बढ़वार की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण होते है। इन दिनों में ही खरपतवार इतनी तेजी से बढ़ते है कि कई खेत में फसल की अपेक्षा खरपतवार ही दिखाई देते है। इसलिये इस अवधि में निंराई-गुड़ाई करना अत्यंत आवश्यक है, शुरू के 45 दिनों में 1-2 बार निंराई-गुड़ाई अवश्य करें। इसके बाद गुड़ाई की आवश्यकता नहीं होती।

पादप वृद्धि नियामकों का प्रयोग

टमाटर में फूल-फल आते समय निम्नलिखित पादप नियामकों का छिड़काव करने पर फलों की संख्या प्रति पौधा अधिक होती है। अधिक उत्पादन के लिए निम्नलिखित पादप नियामकों में से किसी एक का प्रयोग कर सकते है। एन.ए.ए एक मि. ग्राम प्रति लीटर पानी या काइनेटिन एक मि.ग्रा. प्रति लीटर पानी या मारफेक्टीन एक मि.ग्रा. प्रति लीटर पानी या जी.ए.3 100 मि. ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर छिड़काव करें। विपरीत तापमान पर भी फल लगने हेतु पैराक्लोरोफिनाक्सी एसिटिक एसिड 50-100 पी.पी.एम. (50 मि.ग्रा. प्रति ली. पानी) घोल का छिड़काव करें।

फसल को सहारा देना

टमाटर की फसल को सहारा देने से उपज में काफी वृद्धि होती है लेकिन सहारा देने के लिए बांस, तार व रस्सी का काफी खर्च आता है। इसलिए सहारा देने की व्यवस्था फसल की शुरू की अवस्था में ही करना चाहिए ताकि फसल ज्यादा से ज्यादा बढ़ सके। सहारा देने के लिए टमाटर जिस कतार में लगा है उस कतार में 3 मीटर के अंतराल पर 1.5 से 2 मीटर ऊँचे बाँस गाड़ देते है एवं इन बाँसों में 3 से 4 तार इस तरह बांधते है कि पहला तार जमीन से 45 से.मी ऊँचाई पर रहे एवं बाकी तार 30-30 से.मी. की ऊँचाई पर बांध देते है। इन तारों से सूतली बांधकर इस सुतली के नीचे जाने वाले छोर पर छोटी

खूटी बांध कर उस खूंटी को पौधे के बगल में गाड़ देते हैं ताकि पौधे सुतली के सहारे चढ़ सके।

प्रमुख रोग व इसके रोकथाम

क) आर्द्रगलन (डेम्पिंग ऑफ): इस रोग से बीज का अंकुरण ही नही हो पाता है बीज सड़कर नष्ट हो जाते है जबकि अंकुरण के पश्चात् लगने वाल रोग के आक्रमण के लक्षण स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते है। इस स्थिति में पौधे के तने जमीन की सतह पर जिसे कॉलर रीजन कहते है पर विगलन हो जाता है व तना पौधे का भार सहने योग्य नही होता है, जिससे नव अंकुरित पौधे गिर जाते है।

रोकथामः इस रोग की रोकथाम हेतु कवकनाशी जैसे कैप्टान या थायरम से 2.5 ग्राम प्रति किलो बीज के हिसाब से बीज उपचारित करें, खड़ी फसल में या नर्सरी में इसके लक्षण दिखाई देने पर उपरोक्त दवाओं में से किसी एक से 0.2 से 0.5 प्रतिशत सान्द्रता का घोल से मृदा में ड्रेन्चिंग करें।

ख) पौध मुरझान (विल्टिंग): इसमें सर्वप्रथम नीचे की पत्तियाँ पीली पडकर मुरझाने लगती है तत्पश्चात् सम्पूर्ण पौधा मुरझा जाता है। कभी-कभी एकदम हरा पौधा ही मुरझा जाता है। शाम के समय जो पौध स्वस्थ दिखते हैं और अगर उसमें संक्रमण हो गया है, तो वे सुबह मुरझा जाते है। इस रोग की रोकथाम भी उपरोक्तानुसार कर सकते हैं।

ग) अगेती अंगमारीः इस रोग से 40-60 प्रतिशत नुकसान होने की आशंका रहती है। रोग के लक्षण सर्वप्रथम निचली पत्तियों के किनारे से आरंभ होते है, जो कि रंग में गहरे भूरे व बाद में काले हो जाते है। अनुकूल परिस्थितियों में धब्बे शीघ्रता से बढकर आपस मे मिल जाते है। पत्तियाँ झुलस कर सूख व लटकती जाती है। यह धब्बे पत्तियों के अलावा शाखा, तना, व फल को भी संक्रमित करते हैं जिससे कच्चे फल का गिरना व पके फलों का शीघ्रता से सड़न होता है।

रोकथामः इस रोग की रोकथाम के लिए रोग के लक्षण दिखने पर डायथेन एम-45 का 2.5-3 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर छिड़काव करें। रोग नियंत्रित नहीं होने पर 12-15 दिन के अंतराल पर उपरोक्त फफूँदनाशी का पुनः छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त पौध अवशेषों को नष्ट करने तथा बीजेपचार करने से रोग की उग्रता में कमी आती है।

घ) पछेती अंगमारीः इस रोग में निचली पत्तियों में आनियमित जलाशिक्त धब्बे पत्तियों के किनारे से बनना शुरू होते है, जो अनुकूल मौसम में शीघ्रता से बढ़ते है। पत्तियाँ झुलसी हुई प्रतीत होती है व गिरने लगती है।

रोकथामः रोग नियंत्रण हेतु ताम्रयुक्त फफूँदनाशक दवाओं (ब्लाईटाक्स-50, डायथेन एम-45) को 0.3 प्रतिशत सान्द्रता के घोल का छिड़काव 15-20 दिन के अंतराल में करें। इसके अतिरिक्त पौध अवशेषों को नष्ट करने तथा बाजोपचार करने से रोग की उग्रता में कमी आती है।

ड़) लीफ कर्लः रोगित पत्तियाँ आकार में छोटी, नीचे की ओर मुडी हुई मोटी व खुरदरी रहती है। पौधे बौने रह जाते है। प्रभावित खेत की फसल से काफी कम पैदावार मिलती है।

रोकथामः रोग नियंत्रण हेतु रोगी पौधों को नष्ट करें व रोग की संवाहक सफेद मक्खी को नियंत्रित करने हेतु रोगोर 2 मिलि लीटर/लीटर या कान्फीडोर 0.5 से 1.0 मिलि लीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर 12-15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

प्रमुख कीट व इसके नियंत्रण

क) फल बेधक इल्लीः ये कीट कच्चे तथा पके टमाटरों में छेंद करके उनके अंदर का गूदा खा जाती है।

इसके नियंत्रण हेतु ट्राइजोफास 2 मिली लीटर दवा को एक लीटर पानी में मिलाकर 500 से 600 लीटर का घोल बनाएं तथा घोल तैयार कर छिड़काव करें।

ख) सफेद मक्खीः यह कीट पौधों की पत्तियों में रस चूसकर पौधों की बढ़वार को हानि पहुँचाती है। इनके प्रक्रोप से पत्तियाँ पीली पड जाती है। टमाटर की प्रमुख रोग जिसे लीफ कर्ल वायरस के नाम से जाना जाता है का प्रसार इन्हीं कीटों से होता है।

इसके नियंत्रण हेतु रोगोर 2 मिली लीटर या कान्फीडोर 0.5 से 1.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर 12-15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

ग) लीफ माइनरः टमाटर की अगेती फसल लेने पर इसका प्रकोप अधिक देखा गया है। यह कीट टमाटर की पियों पर विभिन्न आकार की सफेद लकीरें जो इस तरह से दिखाई देती है कि इन प्रभावित पत्तियों पर से सर्प चल गया हो तथा अपना छाप छोड़ दिया हो।

इसके नियंत्रण हेतु सायपरमेथ्रीन या क्विनॉलफास 0.5 से 1 मिली लीटर, प्रति लीटर पानी की दर से घोल तैयार कर छिड़काव करें।

घ) तुड़ाई

टमाटर के फलों की तुड़ाई बाजार माँग एवं उपयोग के अनुसार निम्नलिखित अवस्था में की जाती है-

• परिपक्व हरी से पीले अवस्था में दूरस्थ बाजारो में भेजने के

लिए।

• हल्की लाल अवस्था समीपस्थ बाजारों में भेजने के लिए।

• पूर्णतः लाल पकी अवस्था स्थानीय बाजार एवं संसाधन के लिए।

ड़) उपज

टमाटर की उपज उसकी उगाई जाने वाली किस्में एवं फसल की देखभाल आदि पर निर्भर करती है। उचित देखभाल एवं नवीनतम तकनीक से खेती करने पर ओपन पोलिनटेड जातियों से 250-300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर एवं संकर जातियों से 600-800 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

टमाटर की दैहिक व्याधियाँ (Physological disorder)

टमाटर में निम्न दैहिक व्याधियाँ पायी जाती है, जिनके पहचान, कारण एवं निवारण निम्नानुसार है-

क) फलों का फटना

पहचानः फलों का फटना ही इसका प्रमुख पहचान है फल जिस तरफ तने से लगा रहता है वहीं से फट जाता है।

कारणः बोरान की कमी के कारण, तापमान का ज्यादा होना, सिंचाई का अंतराल ज्यादा होना, धूप का ज्यादा तेज होना आदि।

निवारणः प्रति रोधी प्रजातियों का चयन करें। सिंचाई उचित अंतराल पर करें। 0.3 से 0.4 प्रतिशत बोरान का पहला छिड़काव नर्सरी में ही करें तथा दूसरा छिड़काव रोपाई के 3-4 सप्ताह बाद करें। फसल लगाने से पहले 10-15 कि.ग्रा. बोरेक्स (सुहागा) प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में प्रयोग करें।

ख) फलों का सूर्य के तेज प्रकाश से जलना (सनस्केल्ड)

पहचानः फल के ऊपर पानी सोखने जैसा निशान पडना। प्रभावित स्थान का रंग हरे फल में सफेद/भूरा एवं पके फल में पीला हो जाता है।

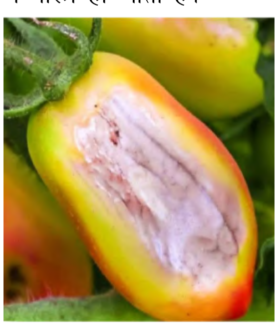

कारणः ग्रीष्म ऋतु में तापमान बढने से धूप का अधिक तेज होना, सूर्य के प्रकाश सीधें फलों पर पड़ना।

निवारणः टमाटर की ऐसी प्रजातियों का चुनाव करें, जिसमें वानस्पतिक वृद्धि ज्यादा होती हो तथा पत्तियाँ आलू की पत्तियों की तरह चौड़ी हो। गर्मी की फसल में टमाटर को छाया प्रदान करके फलों को तेज धूप से बचाया जा सकता है।

ग) टमाटर के फल का अंतिम छोर सड़ना (ब्लाज्म इण्ड राट)

पहचानः फल के हरे अवस्था में ही उसके निचले सिरे पर धब्बे पड़ने लगते है तथा बीच में पानी सोखने जैसा निशान बन जाता है। अंत में फलों में सड़न शुरू हो जाती है।

कारणः नमी का कम होना, वाष्पात्सर्जन की क्रिया कम होना जिसके कारण पौधों में कैल्शियम का अवशोषण कम हो जाता है और फल में कैल्शियम की मात्रा घट जाती है।

निवारणः फल बनते समय 0.5 प्रतिशत कैल्शियम क्लोराइड का छिड़काव करें, नमी का उचित स्तर बनाये रखें, पौधों को सहारा प्रदान करें।

घ) कैटफेस

पहचानः टमाटर के पिछले सिरे पर धारियाँ पडना तथा फल का कुरूप हो जाना।

कारणः फसल का सही समय पर न लगना, मौसम का प्रतिकूल होना (कम तापमान का होना), नमी की कमी होना।

निवारणः पर्याप्त नमी बनाये रखें, संस्तुति सस्य क्रियाओं को अपनाएं, फसल की बुवाई समय से करें।

ड़) फलों का असमान पकना (ब्लाची राइपेनिंग)

पहचानः फल जगह-जगह सफेद पीला या हरा रहता है तथा जगह-जगह लाल हो जाता है।

कारणः पोटैशियम तत्व की कमी के कारण। वाइरस जनित रोग के कारण।

निवारणः संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करें। पौधों को उचित दूरी पर लगायें जिससे उन्हें पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व एवं नमी मिलें। पोटेशियम क्लोराइट के 0.5 प्रतिशत का छिड़काव फल लगते समय करें।

निष्कर्ष

टमाटर को साब्जियो की रानी कह सकते है यह प्रत्येक ग्रहणी की रसोई की प्रथम माँग हैं, इसमें कृषको एवं विधार्थियो को टमाटर के उन्नत किस्मों उत्पादन तकनीक एवं फसल सुरझा संबंधित जानकारी मिलेगी और उन्हें इसकी व्यावसायिक खेती से प्रति इकाई क्षेत्र अधिक आय प्राप्त करने में मदद मिलेगा।

ISSN No. 2583-3316

कृषि में ब्लॉकचेन तकनीकः पारदर्शिता और ट्रेसबिलिटी की नई दिशा

अंजना गुप्ता* एवं आर. एल. राउत
कृषि विज्ञान केंद्र, बालाघाट, मध्य प्रदेश
पत्राचारकर्ता: bloggersp2020@gmail.com

परिचय

ब्लॉकचैन कृषि में एक क्रांतिकारी तकनीक है, जो कृषि क्षेत्र में पारदर्शिता, सुरक्षा और दक्षता लाने में मदद कर रही है। इस तकनीक के माध्यम से फसल की गुणवत्ता की निगरानी, उपज की ट्रैकिंग, भुगतान प्रबंधन और आपूर्ति श्रृंखला प्रबंधन में सुधार होता है। ब्लॉकचैन के कृषि अनुप्रयोगों में स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट, डिजिटल लेजर और ब्लॉकचैन नेटवर्क शामिल हैं। इससे किसानों को अपने उत्पादों की गुणवत्ता और मूल्य में वृद्धि करने में मदद मिलती है, साथ ही उपभोक्ताओं को सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त होते हैं। ब्लॉकचैन कृषि में भविष्य के रुझानों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और इंटरनेट ऑफ थिंग्स का एकीकरण शामिल है, जो कृषि क्षेत्र को और भी आधुनिक और स्मार्ट बनाएगा।

कृषि में ब्लॉकचेन तकनीक का उपयोग कई महत्वपूर्ण तरीकों से किया जा सकता है। ब्लॉकचेन एक वितरित और पारदर्शी लेजर है, जो लेन-देन और डेटा को सुरक्षित और अपरिवर्तनीय तरीके से रिकॉर्ड करता है। कृषि क्षेत्र में इसके उपयोग के कुछ प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं:

• **खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में पारदर्शिताः** खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में पारदर्शिता का मतलब है कि हर चरण पर खाद्य उत्पाद की उत्पत्ति, प्रक्रिया, और वितरण की जानकारी को स्पष्ट और ट्रैक किया जा सके। यह प्रक्रिया ब्लॉकचेन तकनीक से अत्यंत प्रभावी ढंग से की जा सकती है।

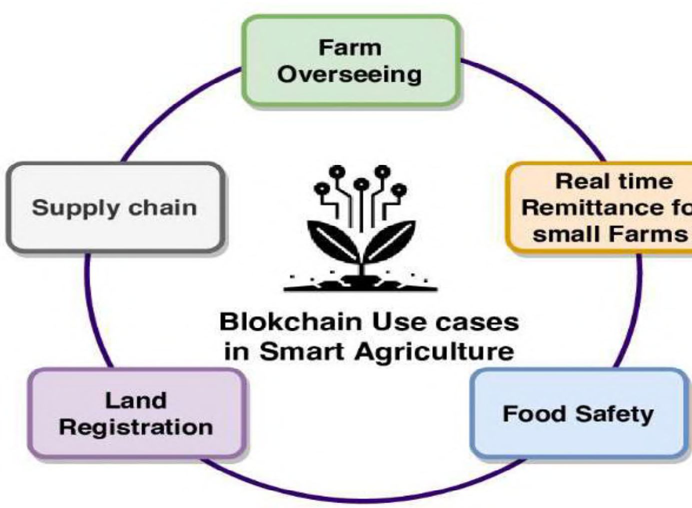

• **खाद्य उत्पादों की ट्रैकिंगः** ब्लॉकचेन तकनीक से खाद्य उत्पादों की ट्रैकिंग की जा सकती है, जिसमें प्रत्येक चरण खेत से बाजार तक को दर्ज किया जाता है। प्रत्येक उत्पाद को एक अनूठा पहचानकर्ता (जैसे QR कोड या बारकोड) सौंपा जाता है, जिससे उपभोक्ता आसानी से यह देख सकते हैं कि उत्पाद का उत्पादन कहाँ और कैसे हुआ।

• **उत्पत्ति की प्रमाणिकताः** उपभोक्ता यह जान सकते हैं कि उनका खाद्य उत्पाद कहाँ से आया है क्या वह ऑर्गेनिक है, किस प्रकार की मिट्टी में उगाया गया है, और उसे कैसे प्रोसेस किया गया है। इससे गुणवत्ता और प्रमाणिकता सुनिश्चित होती है, और उपभोक्ता को उनकी खरीदारी के प्रति आत्मसंतोष मिलता है।

• **खाद्य सुरक्षाः** खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में पारदर्शिता खाद्य सुरक्षा को भी सुनिश्चित करती है। यदि किसी खाद्य उत्पाद में समस्या उत्पन्न होती है, तो ब्लॉकचेन की मदद से यह तुरंत पता लगाया जा सकता है कि उत्पाद कहां और कब प्रोसेस किया गया था। यह त्वरित रीकॉल (फूड रीकॉल) की प्रक्रिया को आसान बनाता है और सुरक्षा जोखिमों को कम करता है।

• **ज्वाबदेहीः** ब्लॉकचेन तकनीक से सभी पक्षों किसानों, प्रोसेसर, डिस्ट्रीब्यूटर्स, और खुदरा विक्रेताओं की जवाबदेही बढ़ती है। प्रत्येक

चरण में डेटा दर्ज करने से यह सुनिश्चित होता है कि कोई भी व्यक्ति या संस्था अपने कार्यों के लिए जिम्मेदार हो, जिससे गलतियों और धोखाधड़ी की संभावना कम होती है।

• **उपभोक्ता विश्वासः** जब उपभोक्ता देख सकते हैं कि उनके द्वारा खरीदे गए खाद्य उत्पादों की उत्पत्ति और गुणवत्ता को पारदर्शी तरीके से ट्रैक किया जा सकता है, तो उनका विश्वास बढ़ता है। इससे वे अधिक विश्वासपूर्वक और सही निर्णय ले सकते हैं, जिससे ब्रांड की साख और ग्राहक की वफादारी बढ़ती है।

• **दक्षता में सुधारः** ब्लॉकचेन के उपयोग से आपूर्ति श्रृंखला के विभिन्न चरणों में होने वाले लेन-देन और डेटा ट्रैकिंग को स्वचालित किया जा सकता है। इससे कागजी काम कम होता है, डेटा एंट्री में गलती की संभावना कम होती है, और समग्र प्रक्रिया अधिक कुशल बनती है।

• **नकली और घटिया उत्पादों से बचावः** ब्लॉकचेन तकनीक से खाद्य उत्पादों की प्रमाणिकता की पुष्टि की जा सकती है, जिससे नकली या घटिया उत्पादों की बिक्री को रोका जा सकता है। यह उपभोक्ताओं को सुरक्षित और उच्च गुणवत्ता वाले खाद्य उत्पाद प्रदान करता है।

कैसे काम करता है ब्लॉकचेन

क) डेटा एंट्रीः आपूर्ति श्रृंखला में शामिल हर पक्ष (किसान, प्रोसेसर, वितरक, आदि) हर लेन-देन और गतिविधि को ब्लॉकचेन पर दर्ज करता है।

ख) वितरणः हर लेन-देन को एक ब्लॉक में रिकॉर्ड किया जाता है, और ये ब्लॉक्स एक श्रृंखला के रूप में जुड़े होते हैं। यह डेटा अपरिवर्तनीय और पारदर्शी होता है।

ग) पहुँचः उपभोक्ता या अन्य पक्ष ब्लॉकचेन को एक्सेस कर सकते हैं और उत्पाद की उत्पत्ति, प्रोसेसिंग, और वितरण के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

घ) अपडेटः किसी भी बदलाव, जैसे कि रीकॉल या गुणवत्ता संबंधी समस्या, को तुरंत अपडेट किया जा सकता है और सभी संबंधित पक्षों को सूचित किया जा सकता है।

ब्लॉकचेन तकनीक से खाद्य आपूर्ति श्रृंखला में हर चरण को ट्रैक किया जा सकता है, जैसे कि खेत से रसोई तक का सफर। यह तकनीक उपभोक्ताओं को यह जानने में मदद करती है कि उनका खाद्य उत्पाद कहां से आया है, और इसे किस प्रकार से प्रोसेस किया गया है। इससे खाद्य सुरक्षा में सुधार होता है और उपभोक्ताओं का विश्वास बढ़ता है।

कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन

ब्लॉकचेन का उपयोग गुणवत्ता प्रमाणन और वेरिफिकेशन में किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, ऑर्गेनिक या जीएमओ-फ्री उत्पादों की प्रमाणिकता को सुनिश्चित करने के लिए ब्लॉकचेन पर हर उत्पाद का प्रमाणन रिकॉर्ड किया जा सकता है। यह उत्पादों की गुणवत्ता की गारंटी देता है और नकली उत्पादों से बचाता है।

कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन सुनिश्चित करने के लिए ब्लॉकचेन तकनीक एक प्रभावी समाधान प्रदान कर सकती है। यह तकनीक खाद्य सुरक्षा, उत्पाद की ट्रैकिंग, और गुणवत्ता नियंत्रण में महत्वपूर्ण सुधार कर सकती है। यहाँ पर ब्लॉकचेन तकनीक के माध्यम से कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन सुनिश्चित करने के प्रमुख पहलू दिए गए हैं।

क) उत्पत्ति और ट्रैकिंगः ब्लॉकचेन तकनीक के माध्यम से प्रत्येक कृषि उत्पाद की उत्पत्ति और ट्रैकिंग की जा सकती है। प्रत्येक उत्पाद को एक यूनिक आईडी या बार कोड सौंपा जाता है, जिसे हर चरण पर अपडेट किया जाता है जैसे खेती से लेकर प्रोसेसिंग, पैकेजिंग, और वितरण तक। इससे उपभोक्ता आसानी से देख सकते हैं कि उत्पाद कहाँ से आया है और किस प्रक्रिया से गुजरा है।

ख) प्रमाणन और गुणवत्ता नियंत्रणः ब्लॉकचेन तकनीक की मदद से विभिन्न प्रमाणन प्रक्रियाओं को पारदर्शी और सुरक्षित बनाया जा सकता है। जैसे कि ऑर्गेनिक, जीएमओ-फ्री या अन्य विशेष मानक वाले उत्पादों को प्रमाणित करने के लिए ब्लॉकचेन पर प्रमाणपत्र और टेस्टिंग रिपोर्ट दर्ज की जाती हैं। यह जानकारी नष्ट नहीं की जा सकती और यह प्रमाणित करती है कि उत्पाद मानकों के अनुसार है।

ग) डाटा इंटीग्रिटाः ब्लॉकचेन तकनीक डेटा को सुरक्षित और अपरिवर्तनीय तरीके से स्टोर करती है। इसका मतलब है कि एक बार डेटा दर्ज कर दिया गया, तो उसे बदला या मिटाया नहीं जा सकता। इससे कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन से संबंधित सभी जानकारी सटीक और विश्वसनीय रहती है, और किसी भी तरह की धोखाधड़ी की संभावना कम होती है।

घ) स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट्सः स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट्स ब्लॉकचेन पर आधारित स्वचालित अनुबंध होते हैं जो निर्धारित शर्तों के पूरा होने पर स्वतः लागू होते हैं। कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन के मामले में, स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट्स का उपयोग ऑडिटिंग, सर्टिफिकेशन और लेन-देन के लिए किया जा सकता है। यह प्रक्रियाओं को स्वचालित और पारदर्शी बनाता है।

ड़) उपभोक्ता जुड़ावः ब्लॉकचेन तकनीक से उपभोक्ताओं को सीधे उत्पाद की गुणवत्ता और प्रमाणन के बारे में जानकारी

प्राप्त होती है। उपभोक्ता QR कोड या अन्य डिजिटल टूल्स के माध्यम से उत्पाद की पूरी यात्रा और प्रमाणन जानकारी देख सकते हैं, जिससे उन्हें उत्पाद के प्रति विश्वास और सुरक्षा का अहसास होता है।

च) कृषि बीमा दावे: ब्लॉकचेन का उपयोग कृषि बीमा दावों को प्रबंधित करने में भी किया जा सकता है। बीमा कंपनियाँ और किसान ब्लॉकचेन पर फसल की गुणवत्ता और नुकसान की जानकारी दर्ज कर सकते हैं, जिससे बीमा दावों की प्रक्रिया तेज और पारदर्शी बनती है।

छ) वित्तीय लेन-देन और आपूर्ति श्रृंखला: ब्लॉकचेन का उपयोग वित्तीय लेन-देन और आपूर्ति श्रृंखला की ट्रैकिंग के लिए किया जा सकता है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि उत्पाद की बिक्री और खरीदारी पारदर्शी और उचित तरीके से हो रही है। यह कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और प्रमाणन से संबंधित लेन-देन को भी ट्रैक करता है।

विचारशीलता और आपूर्ति की निगरानी

ब्लॉकचेन तकनीक से आपूर्ति श्रृंखला के सभी चरणों को निगरानी में रखा जा सकता है। इसमें कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण, पैकेजिंग और वितरण की जानकारी शामिल होती है, जो यह सुनिश्चित करती है कि उत्पाद सही मानकों के अनुसार हैं और किसी भी समय आपूर्ति श्रृंखला में किसी भी बदलाव को ट्रैक किया जा सकता है।

कृषि आपूर्ति श्रृंखला की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए ब्लॉकचेन तकनीक एक महत्वपूर्ण उपकरण साबित हो सकती है। आपूर्ति श्रृंखला सुरक्षा से तात्पर्य है कि हर चरण फसल की खेती से लेकर उपभोक्ता तक को सुरक्षित, पारदर्शी और विश्वसनीय तरीके से प्रबंधित किया जाए। ब्लॉकचेन तकनीक इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। यहां पर यह विवरण दिया गया है कि ब्लॉकचेन कैसे कृषि आपूर्ति श्रृंखला की सुरक्षा को बेहतर बना सकता है।

क) डेटा इंटेग्रिटी और अपरिवर्तनीयता

ब्लॉकचेन पर दर्ज की गई जानकारी अपरिवर्तनीय होती है। इसका मतलब है कि एक बार डेटा रिकॉर्ड हो जाने के बाद, उसे बदलना या मिटाना असंभव होता है। यह कृषि आपूर्ति श्रृंखला में सभी लेन-देन जैसे कि फसल का ट्रैकिंग डेटा, वितरण रिकॉर्ड, और गुणवत्ता निरीक्षण रिपोर्ट्स को सुरक्षित और विश्वसनीय बनाता है।

ख) पारदर्शिता

ब्लॉकचेन तकनीक से आपूर्ति श्रृंखला के सभी चरणों को पारदर्शी तरीके से ट्रैक किया जा सकता है। हर लेन-देन और गतिविधि को ब्लॉकचेन पर सार्वजनिक रूप से दर्ज किया जाता है, जिससे आपूर्ति श्रृंखला के सभी पक्ष किसान, प्रोसेसर, वितरक, और खुदरा विक्रेता जान सकते हैं कि उत्पाद की यात्रा कैसे हुई है। यह पारदर्शिता धोखाधड़ी और अनियमितताओं को कम करती है।

ग) सुरक्षित डेटा ट्रांसफर

ब्लॉकचेन तकनीक से डेटा को एन्क्रिप्ट करके ट्रांसफर किया जाता है, जिससे डेटा की सुरक्षा और गोपनीयता सुनिश्चित होती है। आपूर्ति श्रृंखला में सभी डेटा, जैसे कि उत्पाद की स्थिति, गुणवत्ता मानक और प्रमाणन, को सुरक्षित रूप से स्टोर और ट्रांसफर किया जा सकता है।

घ) फेक उत्पादों और धोखाधड़ी से सुरक्षा

ब्लॉकचेन तकनीक का उपयोग फेक उत्पादों और धोखाधड़ी से सुरक्षा के लिए किया जा सकता है। प्रत्येक उत्पाद को एक यूनिक आइडेंटिफायर (जैसे QR कोड या बार कोड) सौंपा जाता है, जिससे उसकी उत्पत्ति और प्रमाणिकता को ट्रैक किया जा सके है। यह सुनिश्चित करता है कि उपभोक्ता केवल असली और प्रमाणित उत्पाद ही प्राप्त करें।

ड़) स्मार्ट अनुबंध

स्मार्ट अनुबंध ब्लॉकचेन पर आधारित स्वचालित अनुबंध होते हैं, जो शर्तों के पूरा होने पर स्वतः लागू होते हैं। ये अनुबंध कृषि आपूर्ति श्रृंखला में सुरक्षा सुनिश्चित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि आपूर्ति की शर्तें पूरी होती हैं, तो स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट स्वचालित रूप से भुगतान को प्रक्रिया करता है, जिससे लेन-देन पारदर्शी और बिना किसी विवाद के पूरा होता है।

च) रीकॉल प्रबंधन

यदि किसी उत्पाद में सुरक्षा या गुणवत्ता से संबंधित समस्या उत्पन्न होती है, तो ब्लॉकचेन तकनीक से रीकॉल प्रक्रिया को त्वरित और प्रभावी तरीके से प्रबंधित किया जा सकता है।

आपूर्ति श्रृंखला के हर चरण की जानकारी ब्लॉकचेन पर उपलब्ध होती है, जिससे प्रभावित उत्पादों को तेजी से ट्रैक और रीकॉल किया जा सकता है।

छ) वास्तविक समय की निगरानी

ब्लॉकचेन तकनीक से आपूर्ति श्रृंखला की निगरानी वास्तविक समय में की जा सकती है। इससे उत्पाद की स्थिति, गुणवत्ता और अन्य महत्वपूर्ण मापदंडों की निगरानी की जा सकती है, जिससे किसी भी समस्या का त्वरित समाधान किया जा सकता है और आपूर्ति श्रृंखला की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।

ज) वितरण और लॉजिस्टिक्स की ट्रैकिंग

ब्लॉकचेन तकनीक का उपयोग वितरण और लॉजिस्टिक्स को ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। इससे यह सुनिश्चित होता है कि उत्पाद सही समय पर और सही स्थिति में वितरित किए जाएं। आपूर्ति श्रृंखला में किसी भी चरण में होने वाली देरी या समस्याओं को आसानी से पहचाना और समाधान किया जा सकता है।

निष्कर्ष

ब्लॉकचेन तकनीक कृषि आपूर्ति श्रृंखला की सुरक्षा को कई तरीकों से मजबूत कर सकती है, जैसे कि डेटा इंटेग्रिटी, पारदर्शिता और सुरक्षित डेटा ट्रांसफर। यह फेक उत्पादों और धोखाधड़ी से सुरक्षा, स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट्स, रीकॉल प्रबंधन और वास्तविक समय की निगरानी को सक्षम बनाती है, जिससे समग्र आपूर्ति श्रृंखला में सुधार होता है। इसके माध्यम से कृषि उत्पादों की गुणवत्ता और सुरक्षा में वृद्धि होती है और उपभोक्ताओं का विश्वास बढ़ता है। ब्लॉकचेन का उपयोग किसानों की पैदावार और वित्तीय लेन-देन को ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। इससे किसानों को वित्तीय सहायता प्राप्त करने, बीमा क्लेम्स करने, और अन्य वित्तीय लेन-देन में मदद मिलती है। यह कृषि क्षेत्र में वित्तीय पारदर्शिता को बढ़ाता है और बिचौलियों की भूमिका को कम करता है। ब्लॉकचेन तकनीक उपभोक्ताओं को सीधे उत्पाद की जानकारी प्रदान करने में मदद करती है, जिससे वे अपने खरीद निर्णयों में बेहतर निर्णय ले सकते हैं। यह उत्पादों की उत्पत्ति और गुणवत्ता की जानकारी प्रदान करता है, जिससे उपभोक्ता अधिक सूचित और विश्वसनीय विकल्प चुन सकते हैं। ब्लॉकचेन तकनीक उपभोक्ता जुड़ाव और विपणन को प्रभावी और पारदर्शी तरीके से सुधार सकती है। इसके माध्यम से व्यवसाय उपभोक्ताओं के साथ अधिक सशक्त तरीके से जुड़ सकते हैं, और विपणन रणनीतियाँ अधिक सटीक और प्रभावी हो सकती हैं। यहां यह विवरण दिया गया है कि कैसे ब्लॉकचेन तकनीक इन क्षेत्रों में उपयोगी हो सकती है यह कृषि क्षेत्र में पारदर्शिता, सुरक्षा और दक्षता को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इसके माध्यम से खाद्य सुरक्षा में सुधार, गुणवत्ता नियंत्रण और वित्तीय लेन-देन की प्रक्रिया को सरल बनाया जा सकता है, जिससे समग्र कृषि प्रणाली को बेहतर बनाया जा सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

मशरूम बीज (स्पॉन) उत्पादन, स्वरोजगार एवं आय सृजन का साधन

राम प्रवेश प्रसाद[1]*, सुधा नन्दिनी[2] एवं श्याली कुमारी[3]

[1एवं2]एडवांस सेंटर आफ मशरुम रिसर्च एवं [3]उद्यान विभाग सब्जी विज्ञान

डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: rpprasad79@gmail.com

परिचय

मशरूम एक विशेष प्रकार का फफूँद है, जिसमें क्लोरोफिल नहीं होता ये जैव पदार्थों एवं इनके अवशेषों पर उगता है। इन पदार्थों से अपना भोजन माईसीलियम की सहायता से सोखतें हैं। साधारणतः मशरूम का फसल उगाने के लिए बीज (स्पॉन) की आवश्यकता होती हैं। मशरूम का स्थान वानस्पति प्रबंधन तकनीक द्वारा शुद्ध कवक जाल (माईसीलियम) संर्वधन बनाया जाता हैं। फिर उसे उबले हुए गेंहू, ज्वार, बाजरा राई आदि के बीजों पर बनाया जाता है। मशरूम की खेती के लिए उपजाऊ जमीन की जरूरत नही होती इसी कारण इसे 'खेती बिना खेत का' कहा जाता हैं। मशरूम की विभिन्न प्रजातियाँ 15° सेल्सियस से 38° सेल्सियस तापक्रम तथा कम जल व कम भूमि में अच्छी उपज देती है। मशरूम में पौष्टिकता व औषधीय गुणों के कारण भोजन में प्रमुख स्थान हैं। देश में मुख्यतः ओस्टर (प्लूरोटस), बटन (एमेरिकस) पुवाल (वॉल्वेरियेला) व दूधिया (कैलोसाइबी इन्डिका) मशरूम की खेती व्यवसायिक स्तर पर हो रही है। मशरूम में पाये जाने वाले प्रोटीन, विटामिन ए खनिज तत्व, एंटीऑक्सीडेंट और फाइटोकेमिकल्स हमे मौसमी संक्रमण से बचाते हैं और हमारे शरीर के इम्यूनिटी को मजबूत करते हैं।

मशरूम के बीज में उपलब्धता सही समय पर न होने के कारण मशरुम की खेती प्रभावित होती हैं। क्योकि सही बीज एवं उसकी उपलब्धता के साथ-साथ समय पर बुवाई कर देने से उत्पादन अच्छा होता है। मशरूम का बीज वैज्ञानिक विधि द्वारा अपने घर पर ही उत्पादन करके स्वरोजगार के साथ-साथ अच्छी आमदनी प्राप्त की जा सकती हैं।

आवश्यक सामग्री

ऑटोक्लेव 20लीं क्षमता, एक भगोना 10 ली क्षमता, कैल्शियम कार्बोनेट, कैल्शियम सल्फेट, डेक्सटोज, अगर-अगर पॉली प्रोपाइलीन बैग (गर्म रोधी पॉली बैग) जल न सोखने वाली रूई, वैलेंस, हाथ का दास्ताना, मास्क, गेहूँ/ज्वार/बाजरा का बीज, गैस चूल्हा, स्पिरिट लैम्प, P^H पेपर, कल्चर टयूब, मेजरिंग सिलेण्डर, इनोकुलेशन निडिल, स्पेचुला, सांसपैन, ग्लास रॉड, अल्कोहल, फार्मलिन इत्यादि

क) शुद्ध कल्चर बनाने की विधि

मशरूम का बीज बनाने के लिए सबसे पहले शुद्ध कल्चर या मातृ कल्चर बनाया जाता है। इसके लिए पूर्ण विकसित मशरूम जिसके बारे में पूर्ण जानकारी को लेते है। मातृ कल्चर बनाने हेतु मीडियां बनाया जाता है, जिसकी सामग्री विधि निम्नलिखित है -

आवश्यक सामग्री

1- पोटैटो डेक्सटोज अगर (पी.डी.ए.) मिडियम

क. छिला आलू-200 ग्राम

ख. डेक्सटोज-20 ग्राम

ग. अगर-अगर पाउडर-20 ग्राम

घ. पी. एच.-6.5-7.0

ड. डिस्टिल वाटर-1.0 लीटर

आलू को छीलकर 3-4 से.मी. के आकार का छोटा-छोटा टुकडा काटकर 500 मिलीलीटर डिस्टिल पानी में डाल देते है, उसे सस्पैन में लेकर उबालते है तत्पश्चात् उसे किसी बीकर में मसलिन कपड़े से छान लेते हैं। अब 500 मिलीलीटर डिस्टिल पानी को सस्पैन में लेकर उबालते है, फिर धीमी आँच पर डेक्सटोज थोड़ा-थोड़ा डालते हैं व शीशे की छड़ से मिलाते रहते हैं। इसी प्रकार अगर-अगर पाउडर को भी शीशे की छड़ से मिलाते है ताकि अच्छी तरह से घुलजाय। अब आलू के छने पानी को इस घोल में धीर-धीरे मिलाते हैं तथा डिस्टिल पानी मिलाकर 1.0 लीटर मात्रा बना लेते हैं। फिर P^H पेपर से P^H नापकर 6.5-7.0 निर्धारित कर लेते है। (अगर P^H6.5 से नीचे होता 2.3 बूंद NAOH तथा 7.0 से ज्यादा होता तो 2-3 बूंद HCL मिलाते है।) अब मीडियां को कोनिकल फ्लॉस्क/टेस्ट ट्युब में भरकर ऑटोक्लेव 15 PSI (दबाव प्रतिवर्ग इंच) 45 मिनट उपचारित करें तथा मीडियां को जमने के लिए छोड़ दें।

ख) मशरूम से कल्चर बनाने की विधि

आवश्यक सामग्री

लेमिनारफ्लोर, मीडियाकल्चर ट्यूब, पेट्रीप्लेट, रुई, इनाकुलेशन निडिल, कार्कबोरर, स्प्रीट लैम्प, कैंची, चिमिटी, माचिस इत्यादि।

विधिः लेमिनार फ्लोर में UV टयूब 30 मिनट के लिए चला दे, फिर UV लैम्प बंद कर डिस्इन्फिकटेंट से हाथ को साफकर ताजा मशरूम लेकर लेमिनार में रखकर रूई से साफ करके चीमटे की सहायता से 0.1 प्रतिशत मरकरी क्लोराइड या 70 प्रतिशत इथोनाल में 30 सेकण्ड के लिए मशरूम के 3-5 मि.मी. के टुकड़े को डुबोते हैं और उसे कल्चर ट्यूब, स्प्रीट लैम्प के पास लेकर डाल दें तथा काटनप्लग लगाकर 25 डिग्री सेल्सियस तापमान पर एक सप्ताह के लिए रख दें। इसे 24 से 48 घंटे बाद निरीक्षण करें यदि मशरूम कल्चर के चारो ओर श्वेत कवक जाल हल्का दिखाई देता हैं व ट्यूब में किसी तरह का धब्बा नही हो तो समझे कि कल्चर शुद्व हैं। 96 घंटे (चौथे दिन) शुद्ध कवक जाल से निडिल द्वारा सब कल्चरिंग कर लेते हैं। यह प्रक्रिया दो से तीन बार अपनाये ताकि शुद्व कल्चर प्राप्त हो सकें।

ग) मदर या मास्टर स्पान बनाना

कीट एवं रोग रहित गेंहूँ लेकर उसे साफ करकें पानी से धोये, बीज के वजन का डेढ़ गुना पानी लेकर 20-25 मिनट तक उबाले जिससे गेंहूँ अधपक्का हो जाये। तब पानी को निथार कर प्रयोगशाला में टेबल या स्लैव पर छायादार स्थान में सुखाने के बाद कैल्शियम कार्बोनेट ($CaSo_3$) 0.5 प्रतिशत तथा कैल्शियम सल्फेट ($CaSo_4$) 2 प्रतिशत अधपक्के गेंहूँ में मिलाकर ग्लूकोज/दूध/अन्य पारदर्शी शीशे के बोतल (500ml) ग्राम भर कर काटनप्लग लगा दें। अब ऑटोक्लेव में 22 PSI पर 2.0 घण्टा र्निजीविकरण करें। ठण्डा होने के उपरांत उसे लेमिनारफ्लोर के अन्दर स्प्रीट लैम्प के पास इनाकुलेशन निडिल की सहायता से बोतल में मशरूम के स्लान्ट को स्थांनतरित कर काटन प्लग लगा कर 25 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान पर 15 से 20 दिन रखें। बीच-बीच में इसकी जाँच करते रहे व कन्टामिनेटेड बोतल को हटा दें।

मशरूम का व्यावसायिक बीज बनाना

मशरूम का व्यावसायिक बीज उत्पादन के लिए तापमान रोधी पाली प्रोपलीन बैग (150गज) 7x16 इंच जिसमें 500 ग्राम से 1000 ग्राम गेंहूँ का बीज रखा जा सके। बैग को डबल कर लेते हैं तथा उसमें आकार के अनुसार 500 ग्राम या 1000 ग्राम बीज, जिसमें कैल्शियम कार्बोनेट 0.5 प्रतिशत तथा कैल्शियम सल्फेट 2.0 प्रतिशत मिला कर पानी न सोखने वाला काटन लगाकर ऑटोक्लेव के अन्दर 22 PSI दाब पर 2 घण्टा निर्जीविकरण करते हैं। ठण्डा होने के पश्चात् उसे

निकाल कर लेमिनार फ्लोर में ले जाकर मदर स्पॉन की बोतल से 10-15 ग्राम दाना निर्जीविकरण वाले स्थान पर पाली प्रोपलिन बैग में डालकर काटन लगाकर उसे मिला देते हैं। इस प्रकार मदर स्पॉन के एक बोतल से 200 ग्राम का 25-30 बैग व्यावसायिक स्पॉन बनाया जाता हैं। व्यावसायिक स्पॉन बैग को BOD में या कमरे में 25 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान पर 15-20 दिन बाद व्यावसायिक बीज तैयार हो जाता हैं। खराब बीज को ऑटोक्लेव में निर्जीवीकरण करने के बाद ही नष्ट करें।

मशरूम के बीज का भण्डारण एवं बाजार में भेजना

मशरूम का सफेद माइसिलियम जब क्रियाशील हो तो 0-4 डिग्री सेल्यिस तापमान पर 4 माह के लिए भण्डारण किया जा सकता हैं। बीज को दूर भेजने के लिए वेन्टीलेटेड बैग या लकड़ी के बक्से का प्रयोग करें। उस समय स्पॉन का तापमान 30-32 डिग्री सेल्सियस से ज्यादा नहीं होनी चाहिए अन्यथा बीज खराब हो जाता हैं। पुवाल एवं श्वेत दूधिया मशरूम के स्पॉन को रेफ्रिजेटर के तापक्रम पर न रखे ये मशरूम कम तापमान के प्रति संवेदनशील होता हैं।

मशरूम बीज उत्पादन में सावधानियाँ

• मशरूम का शुद्ध कल्चर बनाने के लिए लेमिनारफ्लोर एक UV ट्यूब को 30 मिनट तक पहले चलाऐं।

• इनाकुलेशन रूम के आगंतुकों को न ले जाए।

• इनाकुलेशन रूम में शाम के समय एक निश्चित दिनो के अन्तराल पर फार्मलिन का छिड़काव शाम के समय करें।

• अगर स्पॉन से भरा बैग या बोतल खराब हो जाए तो उसे तुरन्त अलग निकाल दें।

• स्पॉनिंग से पहले रेफ्रिजेरेटर में रखें बीज या स्पॉन को कमरे कें तापमान में रख दें।

• इनाकुलेशन में हमेशा ताजा मशरूम के स्पॉन का प्रयोग करें।

• इनाकुलेशन रूम को सप्ताह में दो बार डिटॉल या त्यागजल से साफ कराये।

• कल्चर में रेफ्रीजेटर को एल्यूमिनियम फाइल में लपेट कर रखें।

• कल्चर को कभी भी शून्य तापक्रम पर रेफ्रीजेटर के अन्दर न रखें।

• ऑटोक्लेव निश्चित समय एवं दाब पर ही करे ज्यादा समय या दाब पर करने से शुक्राणु की मात्रा कम हो जाता हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार एक प्रशिक्षित व्यक्ति को एक प्रयोगशाला लगाने में 15 से 18 लाख रूपया का खर्च आता हैं, बिहार सरकार की मशरूम बीज उत्पादन परियोजना में 15 लाख रूपये पर 50 प्रतिशत का अनुदान प्राप्त हैं। इस प्रयोगशाला द्वारा प्रतिदिन 500 कि.ग्रा. मशरूम का बीज तैयार किया जा सकता है। इस कार्य हेतु कुल पाँच व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती हैं, व इस बीज की कीमत 100 रू की दर सें पचास हजार व कुल लागत तीस हजार रूपया आता है। इस प्रकार बीस हजार रूपये का शुद्ध लाभ होता हैं। उत्पादन बढ़ाने पर 10 से 15 लोगो को रोजगार व उसी अनुपात में लाभ भी मिलता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

आँवला पाउडरः मानव रोगों से बचाव के उपाय

कु. कुसुम[1*] एवं इमामुद्दीन शाह[2]

[1]उद्यान विज्ञान विभाग एवं [2]सब्जी विज्ञान विभाग

जी. बी. पंत कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड

पत्राचारकर्ता: ky825587@gmail.com

परिचय

आँवला (*फ़िलैंथस एम्ब्लिका*) आयुर्वेद में एक अत्यंत महत्वपूर्ण औषधि के रूप में जाना जाता है। इसका पाउडर सूखे आँवले को पीस कर बनाया जाता है। आँवला पाउडर में प्रचुर मात्रा में विटामिन C, कैल्शियम, फाइबर और एंटी ऑक्सीडेंट्स पाये जाते है, जो शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने और विभिन्न रोगों से बचाव में सहायक होते हैं। विटामिन C की उच्च सांद्रता और अन्य पोषक तत्वों के भंडार से भरपूर यह कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

आँवला पाउडर के सेवन से मानव रोगों से लाभ

क) प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाना

आँवला पाउडर विटामिन C का प्रमुख स्रोत है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ करता है। इसका नियमित सेवन सर्दी, खांसी, वायरल संक्रमण और फ्लू जैसी बीमारियों से बचाने में मदद करता है। इसमें एंटी ऑक्सीडेंट्स होते हैं, जो शरीर को विषाक्त पदार्थों से मुक्त रखते हैं और संक्रमण से लड़ने की क्षमता बढ़ाते हैं।

ख) मधुमेह नियंत्रण में सहायक

आँवला पाउडर का सेवन मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत लाभकारी होता है। यह रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है और शरीर में इंसुलिन की संवेदनशीलता को बढ़ाता है। इसका रोज़ाना सेवन टाइप 2 मधुमेह के जोखिम को कम करने में सहायक होता है।

ग) पाचन तंत्र में सुधारक

आँवला पाउडर में फाइबर की भरपूर मात्रा होती है, जो पाचन तंत्र के लिए लाभकारी है। यह कब्ज, अपच और गैस जैसी समस्याओं को दूर करता है। आँवला पाउडर आंतों की सफाई करता है और भोजन के पाचन में सहायता करता है। यह एसिडिटी से राहत दिलाने में भी सहायक होता है।

ISSN No. 2583-3316

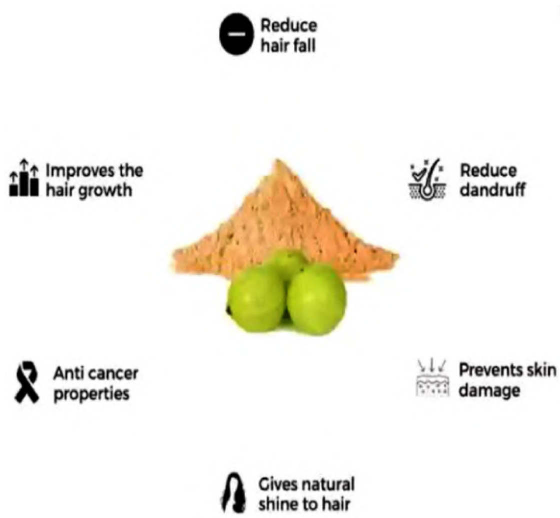

घ) हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाना

आँवला पाउडर हृदय रोगों से बचाव में कारगर है। यह रक्तचाप को नियंत्रित करता है, जिससे दिल की धमनियों में रुकावट कम होती है। साथ ही यह रक्त में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को संतुलित रखता है, जिससे दिल के दौरे और स्ट्रोक का खतरा कम होता है।

ड़) कैंसर से बचाव में सहायक

आँवला पाउडर में एंटी ऑक्सीडेंट्स की भरपूर मात्रा होती है, जो शरीर में कैंसर कोशिकाओं के विकास को रोकने में मदद करते हैं। यह फ्री रेडिकल्स के हानिकारक प्रभाव को कम करता है और कोशिकाओं को सुरक्षित रखता है, जिससे कैंसर का खतरा कम होता है।

च) वजन घटाने में सहायक

आँवला पाउडर का सेवन वजन घटाने के लिए अत्यंत लाभकारी होता है। यह मेटाबॉलिज्म को बढ़ाता है और शरीर में वसा के संचय को कम करता है। साथ ही यह भूख को नियंत्रित करता है और अनावश्यक कैलोरी के सेवन से बचाता है, जिससे वजन नियंत्रित रहता है।

छ) बालों और त्वचा के लिए फायदे मंद

आँवला पाउडर का सेवन बालों और त्वचा के लिए अत्यंत लाभकारी है। यह बालों को मजबूत, घना और चमकदार बनाता है। इसके अलावा, यह बालों के झड़ने और समय से पहले सफेद होने की समस्या को भी दूर करता है। त्वचा पर आँवला पाउडर का नियमित सेवन त्वचा के लिए भी फायदे मंद होता है। यह त्वचा को प्राकृतिक रूप से चमकदार और जवान बनाए रखता है। इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट्स त्वचा को फ्री रेडिकल्स के हानिकारक प्रभाव से बचाते हैं, जिससे त्वचा पर उम्र बढ़ने के लक्षण, जैसे झुर्रियाँ और झाइयाँ देर से दिखाई देते हैं। इसके अलावा, यह त्वचा को मुँहासों और दाग-धब्बों से मुक्त रखता है।

ज) आँखों की रोशनी बढ़ाने में सहायक

आँवला पाउडर में मौजूद विटामिन C और अन्य पोषक तत्व आँखों की रोशनी को बढ़ाने में मदद करते हैं। इसका नियमित सेवन दृष्टि दोष आँखों में जलन और धुंधलेपन जैसी समस्याओं को दूर करता है। यह आँखों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाकर मोतियाबिंद और रेटिना संबंधी समस्याओं से भी बचाव करता है।

झ) तनाव और मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी

आँवला पाउडर मानसिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में सहायक होता है। इसमें मौजूद पोषक तत्व मस्तिष्क की कोशिकाओं को पोषण प्रदान करते हैं और मानसिक तनाव को कम करते हैं। आँवला का सेवन याददाश्त को तेज करता है और चिंता, अवसाद और अन्य मानसिक समस्याओं से बचाव में मदद करता है।

आँवला पाउडर का सेवन कैसे करें

क) पानी या शहद के साथः एक चम्मच आँवला पाउडर को पानी या शहद के साथ मिलाकर प्रतिदिन सुबह खाली पेट सेवन करें। यह पाचन और इम्यूनिटी को बढ़ाने में सहायक होता है।

ख) आँवला चायः आँवला पाउडर से बनी चाय का सेवन शरीर को शुद्ध करता है और ऊर्जा प्रदान करता है।

ग) दही के साथः दही में आँवला पाउडर मिलाकर खाने से पाचन बेहतर होता है और त्वचा को चमकदार बनाए रखता है।

घ) आँवला पाउडर स्मूदीः इसे फलों या सब्जियों के जूस या स्मूदी में मिलाकर पीने से पोषण मिलता है और शरीर को ताजगी मिलती है।

निष्कर्ष

आँवला पाउडर एक प्राकृतिक औषधीय है, जो विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाने में सहायक है। इसका नियमित सेवन प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है, हृदय, पाचनतंत्र, बाल और त्वचा को स्वस्थ रखता है, और मानसिक स्वास्थ्य को सुधारता है। इसे अपने दैनिक आहार में शामिल करके आप अपने जीवन को स्वस्थ और रोग मुक्त बना सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सितम्बर माह में बागवानी के प्रमुख कृषि कार्य

पी. सी. चौरसिया*, जी. एस. तोमर, ओकेश चंद्राकर, नवनीत राणा, अनुराग
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय एवं अनुसन्धान केंद्र, महासमुंद (छ.ग.)
पत्राचारकर्ता: pcchaurasiaigkv@gmail.com

परिचय

सितम्बर यानी भाद्रपद-अश्विन माह में गणेशोत्सव, नवाखाई तथा पितृमोक्ष अमावस्या जैसे महत्वपूर्ण पर्व मनाये जाते हैं। सितम्बर माह में वर्षा की सघनता कम होने लगती है, जिसके कारण वातावरण का तापक्रम कुछ बढ़ जाता है। इस माह औसतन अधिकतम एवं न्यूनतम तापक्रम क्रमशः 31से 33 डिग्री सेन्टीग्रेड के आस-पास होता है। वायु गति भी अमूमन 8.2 किमी प्रति घंटा होती है। इस प्रकार जलवायु सम रहती है। भूमि जल से संतृप्त हो जाती है। प्रकृति में चहु ओर हरियाली और खुशहाली दृश्यमान रहता है। खरीफ की विभिन्न फसलें फूल एवं फलन अवस्था में देखकर मन मस्तिष्क प्रफुल्लित हो जाता हैं। उद्यानिकी फसलों से मनवांक्षित उत्पादन और आमदनी हासिल करने के दृष्टिकोण से यह महत्वपूर्ण महीना है। इस समय फल-फूल, सब्जियों वाली फसलों पर कीट, रोग और खरपतवार जैसी व्याधियाँ आक्रमण कर सकती है। अतः किसान भाइयों को अपने खेत और फसलों की सतत निगरानी करते रहना चाहिए। इस माह में वर्षा की सघनता में कमी होने लगती है, जिससे तापमान थोड़ा बढ़ जाता है। उच्चतम एवं निम्नतम तापक्रम का अंतर भी अगस्त माह की तरह कम रहता है। सापेक्ष आर्द्रता इस माह में कम रहती है। वातावरण स्वच्छ और वायु की गति कम हो जाती है। भूमि में जल संतृप्त रहती है। गर्मी तथा शीत समरूप में रहते हैं। इस माह में तापक्रम, वर्षा, सापेक्ष आर्द्रता एवं वायुगति समभाव में रहते हैं।

इस माह का मूलमंत्रः पौधशाला प्रबंधन

रोपाई किये जाने वाली सब्जियों जैसे टमाटर, बैगन, मिर्च, फूलगोभी, पत्तागोभी, गाँठगोभी एवं प्याज आदि के लिए अच्छी तरह से पौधशाला तैयार करने के लिए उठी हुई क्यारियों में उपचारित बीज बोना चाहिए। पौध तैयार करने के लिए बीजों को 1.0-1.5 से.मी. गहराई एवं 7-8 से.मी. की दूरी पर कतारों में बुवाई करनी चाहिए। बुवाई के तुरंत बाद नर्सरी को हल्के पुआल से ढंकने से बीज का अंकुरण अच्छा होता है तथा नवांकुरों की तेज धूप, वर्षा एवं सर्दी से रक्षा होती है और खरपतवार प्रकोप कम होता है। अंकुरण के तुरंत बाद पुआल को हटा देना चाहिए, अन्यथा अंकुरित बीज बढ़ जाने पर पुआल में फंसकर उखड़ सकते हैं। पौधशाला की फव्वारा

विधि से सिंचाई करनी चाहिए। पौध की खरपतवारों एवं कीट-रोग से सुरक्षा के उपाय करना चाहिए, बीज बुवाई के 21-25 दिनों बाद पौधरोपण के लिए तैयार हो जाते है।

इस माह में लगाये जाने वाली सब्जियाँ

क) टमाटर, बैगन व मिर्च

अच्छी पैदावार व आमदनी प्राप्त करने के लिये इस माह में टमाटर की रोपाई करें। खेत की आखिरी जुताई के समय खेत में 75 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से डालें। टमाटर पौध की 50 X 50 से.मी. की दूरी (कतार एवं पौध के मध्य) पर सांयकाल के समय रोपाई करें। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सी सिंचाई करें।

• खरीफ प्याज को खेत में रोपाई करें।

• टमाटर, बैगन, मिर्च की पुरानी फसलों में आवश्यकतानुसार निराई व गुड़ाई करें। तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजें।

• बैगन में रोपाई के 45 दिनों बाद 50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, मिर्च में 35 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा फूलगोभी में 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन की दूसरी व अंतिम टॉप ड्रेसिंग करें, तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजें। फल छेदक कीट की निगरानी के लिए 1एकड़ झेत्र 5 फैरोमेन लगायें, बैगन में तना व फल छेदक कीट की रोकथाम के लिए बी.टी. 1 ग्राम प्रति लीटर या डेल्टामेथ्रिन 1 मिली प्रति लीटर घोल का फूल आने से पहले छिडकाव 10-15 दिनों के अन्तराल पर करें।

ख) शिमला मिर्च, भिन्डी व लोबिया

शिमला मिर्च की उन्नत किस्मों जैसे कैलिफोर्निया वंडर, अर्का गौरव, अर्का मोहिनी, ग्रीन गोल्ड, पूसा दीप्ती आदि में से बीज को 2 ग्राम बाविस्टीन से उपचारित कर पौधशाला में बुवाई कतारों में 10 से.मी. की दूरी पर एक से.मी. गहरी नाली में करें। बीज को महीन गोबर खाद से ढक कर हल्की सिंचाई करें। लगभग 15 से.मी. लंबी हो जाने पर (3-4 पत्ती अवस्था) की पौध की रोपाई 50 X 40 से.मी. की दूरी पर करें. रोपाई पूर्व 8-10 टन सड़ी गोबर की खाद, 75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 50 कि.ग्रा. पोटाश खेत की अंतिम जुताई के समय मिट्टी में मिलाये। भिन्डी व लोबिया फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई व सिंचाई करें। तैयार मुलायम फलों व फलियों की तुड़ाई नियमित रूप से 4-5 दिनों के अंतराल पर करते रहें एवं उपज की छँटाई कर विक्रय हेतु बाजार भेजने की व्यवस्था करें ।

ग) फूलगोभी

सितम्बर माह पूर्व में लगाई गई गोभी में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई व सिंचाई करें। खड़ी फसल में 50 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टेयर की दर से गुड़ाई करते समय डालें। मध्यकालीन फूलगोभी की उन्नत किस्में जैसे पूसा दीपाली, पूसा कार्तिकी और इम्प्रूव्ड जापानी आदि की रोपाई का उचित समय सितम्बर माह है। खेत की अंतिम जुताई पर 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 60 कि.ग्रा. पोटाश एवं 10 कि.ग्रा. बोरेक्स प्रति प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। 50 X 50 से.मी. की दूरी पर रोपाई करें, व तुरन्त हल्की सिंचाई करें।

• नवम्बर-दिसंबर में रोपाई हेतु पौधशाला में पत्तागोभी, गाँठगोभी एवं फूल गोभी की बोवाई करें। गोभी के लिए 15-20 से.मी. ऊँची उठी क्यारियाँ उपयुक्त होती है, जिनकी लंबाई 3 मीटर तथा चौड़ाई एक मीटर होना चाहिए। एक हेक्टेयर के लिए 350-400 ग्राम बीज तथा 250 वर्मीटर की नर्सरी की आवश्यकता होती है। बुवाई पूर्व बीटावैक्स या कार्बेन्डाजिम 12% मैन्कोजेब 63% 2-3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए।

घ) अदरक व हल्दी

फसल में आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई तथा मिट्टी चढ़ाने के पश्चात नमीं की कमी होने पर सिंचाई करें। निंराई-गुड़ाई के समय 50 कि.ग्रा. यूरिया खड़ी फसल की कतारों में डालें। यदि फसल पर झुलसा नामक बीमारी का प्रकोप दिखाई दे तो 0.2 प्रतिशत मैंकोजेब नामक दवा का घोल बनाकर एक छिड़काव करें।

ड़) आलू

माह के अंत में अगेती आलू (कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी अशोका आदि) आलू की बुवाई से पहले खेत की मिट्टी को जैविक विधि से तैयार करना चाहिए इसकी बुवाई 15 से 25 सितंबर के बीच और पछेती बुवाई 15 से 25 अक्टूबर के बीच की जाती है इसके के लिए, 40-50 ग्राम वज़न के बीज सबसे अच्छे माने जाते हैं. तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 सेंटीमीटर और बीज से बीज की दूरी 20 सेंटीमीटर रखनी चाहिए इसमें कंद को 3-4 इंच की गहराई में बोना चाहिए, आलू की पैदावार बढ़ाने के लिए, पोटैशियम और नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है. इसके बाद, 7 से 10 दिन के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए. तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए, मेट्रिब्यूज़ीन 70 ड़ब्ल्यूपी 100 ग्राम मात्रा 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए

हरी पत्तेदार सब्जियाँ

मैथी व पालक आदि की बुवाई 15 सितम्बर से की जा सकती

• ग्राफ्टिंग, बडिंग एवं गूटी आदि से तैयार पौधों को क्यारियों/पालीथीन में लगाना चाहिए।

• ग्राफ्टिंग, बडिंग में प्रयुक्त पालीथीन की पट्टियाँ को भी खोल देना चाहिए। आम फलन की समाप्ति के पश्चात् रोग ग्रस्त शाखाओं की जल्दी छँटाई का कार्य करें।

क) केलाः केला के नये बाग लगाने का कार्य यदि पूरा नहीं किया है, तो इस माह पूर्ण करें पुरानी फसल के परिपक्व फलों के गुच्छों को तोड़कर भंडार में पकाएँ एवं बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करें। प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया पौधे से 50 सेंटीमीटर दूर घेरे में प्रयोग कर हल्की गुड़ाई करके भूमि में मिला दें।

ख) नीबू वर्गीय फलः पेड़ों में नत्रजन व पोटाश की बची हुई तीसरी मात्रा का प्रयोग करें। सूक्ष्म तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए जिंक सल्फेट, मैग्नीशियम सल्फेट, बोरिक अम्ल एवं बुझा हुआ चूना (प्रत्येक 1 कि.ग्रा. प्रति 450 लीटर पानी) के संयुक्त घोल का छिड़काव करें। उक्त घोल में 5 कि.ग्रा. यूरिया डाल देने से नाइट्रोजन की कमीं पूरी हो जाती है। नींबू में फलों के गिरने की समस्या आती है, इससे बचने के लिए 10 पीपीएम 2,4-डी (1 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिडकाव करें। नींबू में कैंकर रोग के लक्ष्ण दिखने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) और नीम की खली (5 किग्रा प्रति 100 लीटर पानी) के घोल का छिडकाव करें।

ग) अमरूदः पत्तियों पर वेल्वेटी धब्बों का बनना व फलों पर जालनुमा कत्थई-काले रंग के दानों का बनना इस बीमारी के मुख्य लक्षण हैं। पत्तियों पर छोटे-छोटे आकार के धब्बे दिखाई देते हैं जो बढ़कर 2- 3 मी.मी. आकार के हो जाते हैं। यह रोग पत्ती के शीर्ष किनारों या मध्य शिरो पर अधिक प्रभावी होता है। अपरिपक्व फलों पर कत्थई-काले रंग के दाग बन जाते हैं। रोग अप्रैल माह से शुरु होकर मई- अगस्त में अधिक होता हैं। तनाबेधक कीट की रोकथाम हेतु सायपरमेथ्रिन 25 प्रतिशत ई. सी. 0.5 मिली प्रति लीटर का छिड़काव करें।

घ) पपीताः तैयार स्वस्थ पौधों की रोपाई का कार्य करें। पपीते की उभयलिंगी किस्मों जैसे पूसा डिलीशियस, पूसा मेजेस्टी, कुर्ग हनीड्यू आदि का एक पौधा प्रति गड्ढा लगाये. पौध सडन रोग से बचाव हेतु खेत में जल निकास की उचित

है। खेत की अच्छी तरह जुताई करने के उपरांत 50 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फॉस्फोरस व 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से डालकर बुवाई करें। पालक की आलग्रीन, पूसा ज्योति, पूसा भारती, एच.एस.-231 आदि तथा मैंथी की हिसार मुक्ता, पूसा अर्लीवंचिग, पूसा कसूरी आदि उन्नत किस्मों का इस्तेमाल करे. इन फसलों की बुवाई कतारों में 20-25 से.मी. की दूरी तथा पौध से पौध 4-5 से.मी. के अंतर से करें। बुवाई हेतु देशी मेंथी का 20-25 कि.ग्रा., कसूरी मेंथी का 10-15 तथा पालक का 25-30 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। बुवाई से पूर्व बीजों को फफूँन्द्नाशक दवा बाविस्टिन 3 ग्राम या ट्राईकोडर्मा 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज की बुवाई सदैव नम भूमि में करनी चाहिए।

• **मूली एवं गाजर**

पूर्व में बुवाई गई मूली की फसल में निराई-गुड़ाई करें। तैयार जड़ों को बाजार भेजने की व्यवस्था करें। इस माह बोवाई के लिये तैयार खेत में 50 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस व 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर डालकर उन्नत किस्मों की बुवाई करें। पूर्व में बताये अनुसार इस माह गाजर की एशियाई किस्मों की बुवाई करें ।

प्रमुख फल में लगने वाले रोग व इसके नियंत्रण

आम रूप से इस माह तक नए बाग की रोपाई का कार्य पूरा कर लें। शाखागांठ कीट की रोकथाम हेतु रोगर (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें। श्यामवर्ण रोग की रोकथाम हेतु कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण की 3 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। पछेती किस्मों की आम की गुठलियों को इकट्ठा करके पौधशाला में बुवाई करें। शीतोष्ण फलों में बडिंग करना चाहिए।

व्यवस्था रखे एवं बोर्डो मिश्रण (2.5%) का छिडकाव करें।

ड़) बेरः पौधों पर चूर्णिल आसिता रोग लगने की संभावना होती है, जिसकी रोकथाम हेतु कैराथेन (1 मिली प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। कैराथेन के अतिरिक्त बाविस्टिन (0.05%) का छिडकाव भी किया जा सकता है।

च) अनारः खरपतवार एवं मुख्य तने के बगल से निकलने वाले अंकुरों को निकाल देवें। अनार में रोग एवं कीटों से बचाव स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी) मैन्कोजेब 75% घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) में आवश्यकतानुसार छिडकाव करें।

छ) लीचीः वृक्षों में उर्वरकों (50 किलो सड़ी गोबर की खाद, 3 किलो कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट, 3 किग्रा सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा 1 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति पेड़) का प्रयोग करें। तना छेदक कीट की रोकथाम के लिए रूई को पेट्रोल में भिगोकर, छिद्रों में भरकर इन छिद्रों को गीली मिट्टी से बंद कर दें।

ज) आँवलाः फल सड़न रोग की रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिडकाव करें, फलों की शुष्क विगलन रोग (फल अन्दर से काले पड़कर गिरने लगते है) की रोकथाम के लिए 6 ग्राम बोरेक्स प्रति लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिडकाव करें।

झ) बेल पेड़ोंः बेल पेड़ा पर शाटहोल रोग की रोकथाम हेतु कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें। नए बाग लगाने हेतु रोपण का कार्य करें।

ञ) चीकूः फल वृक्षों की दीमक से सुरक्षा हेतु फिप्रोनिल 80 प्रतिशत डब्ल्यू. जी. 0.2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिडकाव करें. खरपतवारों एवं मुख्य शाखा के निचले हिस्से से निकलने वाले अंकुरों को निकाल दे।

ट) करौंदाः करौंदा में श्यामवर्ण रोग, पत्तियों और फलों को अधिक प्रभावित करता हैं । रोगग्रस्त पत्तियों पर छोटे अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बे बन जातें हैं, रोगग्रस्त पत्तियाँ गिर जाती हैं और पतली टहनियाँ सूखना आरम्भ कर देती हैं रोकथाम हेतु नुवांकान एक लीटर पानी में घोलकर झाड़ियों पर छिड़काव करना चाहिए।

पुष्पोत्पादन में इस माह के कार्य

• रजनीगंधा स्पाइक की कटाई-छँटाई, पैकिंग एवं विपणन कार्य करें।

• सुन्दर, आकर्षक लोकप्रिय पुष्प ग्लैडियोलस की बुवाई इस माह से शुरू होकर नवम्बर तक की जा सकती है। बुवाई के लिए प्रति हेक्टेयर 28-42 हजार कंदों की आवश्यकता होती है। कटे हुए घनकंदों की सुषुप्तावस्था दूर करने के लिए इन्हें थायोयूरिया (500 पीपीएम) के घोल में 24 घंटे तक भिगोकर रखने से अंकुरण शीघ्रता से होता है । बीज जनित रोगों से सुरक्षा हेतु कन्दों को 2 ग्राम बेविस्टीन एक लीटर पानी में घोल बनाकर, 30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करने के उपरान्त छाया में सुखाकर बुवाई करें। कंदों की बुवाई 15 X15 से.मी. की दूरी पर तथा 5-6 से.मी. की गहराई में करना चाहिए। रोपाई से पूर्व क्यारियों में फिप्रोनिल 80 प्रतिशत डब्ल्यू. जी. 0.2 ग्राम प्रति लीटर अवश्य मिलायें।

• ग्लैडियोलस में नाइट्रोजन 20 ग्राम, फॉस्फोरस 30 ग्राम एवं पोटाश 30 ग्राम प्रति वर्गमीटर की दर से देना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिलाएँ नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के एक माह बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में कतारों में देकर हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

फल एवं सब्जी संरक्षण

• बाजार में उपलब्ध सेब तथा नाशपाती के विभिन्न उत्पाद इस माह बनाये जा सकते है। केला से जैम व टाफी बना सकते हैं। केले के पेड़ के भीतरी कोमल तने से मुरब्बा तथा कैण्डी बना सकते हैं। इसके अलावा नींबू के विभिन्न उत्पाद बनाकर परिरक्षित किये जा सकते है।

निष्कर्ष

सितंबर माह में सब्जियों की नर्सरी प्रबंधन, पौधरोपण, पूर्व में बोयी गई फसल में अवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई, पत्तेदार सब्जियों व अगेती आलू की बोवाई एवं करौंदा के पके फलो की तुड़ाई एवं पुष्पोत्पादन की कटाई-छँटाई, पैकिंग एवं विपणन कार्य किया जाता है। उपरोक्त जानकारी को प्राप्त कर विषय वास्तु-विशेषज्ञ, छात्र-छात्राएँ एवं बागवानी प्रेमी इस माह में बागवानी से सम्बंधित ज्ञान अर्जित करेंगे इसके साथ-साथ किसान भाई समयानुसार विभिन्न उद्यानिकी फसलों/किस्मो का चयन, पौधरोपण, पौध संरक्षण एवं इनकी देखरेख कर उपज में विधि कर लाभांविन्त होंगे।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भू-स्वास्थ्य सुधार हेतु हरी खाद के रूप में ढैंचे का महत्व

प्रदीप कुमार[1] , अमित कुमार[2]* एवं उपासना चौधरी[3]
[1]सब्जी विज्ञान विभाग, [2]फल विज्ञान विभाग
शेर-ए-कश्मीर कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय-कश्मीर, शालीमार, श्रीनगर
[3]सब्जी विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा, उत्तर प्रदेश
पत्राचारकर्ता: khokherak@rediffmail.com

परिचय

वर्तमान समय में रासायनिक उर्वरकों के नियमित एवं अंधाधुंध प्रयोग से कृषि भूमि में पोषक तत्वों की मात्रा में गिरावट एवं दिन-प्रतिदिन कृषि भूमि की उत्पादक क्षमता और भू-स्वास्थीय दशा क्षीण होती जा रही है। पौधों के वृद्धि एवं विकास के लिए 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जिसमें 14 पोषक तत्वों की पूर्ति पौधे द्वारा मृदा से ही की जाती है। अतः अत्यधिक उत्पादन क्षमता के क्षीण होने का प्रमुख कारण लगातार उर्वरकों एवं अन्य कीटनाशकों का अनुचित प्रयोग जिसके कारण मृदा में आर्गेनिक कार्बन की प्रतिशत मात्रा में कमी होना, मृदा में विषाक्तता का बढ़ना इत्यादि जिससे वातावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने के साथ-साथ मृदा की भैतिक, जैविक एवं रासायनिक गतिविधियाँ प्रभावित होती हैं। मौजूदा समय में मृदा उर्वरता एवं भू-स्वास्थ्य सुधार के लिए हरी खादों को प्रयोग में लाने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नजर नहीं आता। अतः हरी खादों को प्रयोग में लाने से मृदा में उर्वरा शक्ति के साथ-साथ अन्य समस्याओं का समाधान व किसान के आर्थिक लाभ में वृद्धि होती हैं।

जुताई उपरान्त ढैंचे की खड़ी फसल

हरी खाद

कृषि की भाषा में हरी खाद उस सहायक फसल को कहते हैं, जिसे मुख्य फसल प्राप्त कर ने से पूर्व खेत में उगाया जाता हैं। प्रायः इस प्रकार की फसलों को पुष्प निकलने से पूर्व की अवस्था में हल व रोटावेटर इत्यादि की मदद से मृदा में मिला दिया जाता हैं। इसकी खेती मुख्यतः मृदा में पोषक तत्वों को बढानें तथा उसमें जैविक पदार्थों की पूर्ति करने के उद्देश्य से की जाती है। बिना गले-सडे हरे पौधे (दलहनी एवं अन्य फसलों अथवा उनके भाग) को जब मृदा में नाइट्रोजन या जीवांश की मात्रा बढानें के लिये खेत में दबाया जाता है तो इस काम को हरी खाद देना कहते हैं। हरी खाद के उपयोग से न सिर्फ नाइट्रोजन भूमि में उपलब्ध होता है बल्कि मृदा की भौतिक रासायनिक एवं जैविक दशा में भी सुधार होता है। वातावरण तथा भूमि प्रदूषण की समस्या को समाप्त किया जा सकता है तथा लागत घटने से किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार होता है तथा भूमि में सूक्ष्म तत्वों की आपूर्ति के साथ ही मृदा की उर्वरा शक्ति भी बेहतर हो जाती है।

हरी खाद के परिदृश्य ढैंचे की प्रमुख विशेषताएँ

ढैंचा हरी खाद के रूप में उपयोग की जाने वाली (सनई, ग्वार, उड़द, मूंग, बरसीम, सैंजी, रिजका इत्यादि) के रूप में प्रयोग की जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण फसल है, जो दलहनी कुल से सम्बंधित है, जिसका वानस्पतिक नाम *सेस्बनिया एकुलेआटा* है। इस फसल को सभी प्रकार की मिट्टी एवं

जलवायु में आसानी के साथ उगाया जा सकता है। ढैंचे में वानस्पतिक वृद्धि बड़ी तीव्रगति से होती है जिससे बहुत कम समय में अधिक जैव पदार्थ का उत्पादन होता है। इसे 40-45 दिन में फूल आने से पूर्व मिट्टी में मिला देना चाहिए अन्यथा की स्थिति में अपघटन प्रक्रिया में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसकी जड़ें मृदा में अधिक गहराई एवं सतह में फैली हुई होती है, जिससे पोषक तत्वों को गहराई से अवशेषित कर पौधे में संगृहीत करने का काम करती है। इसके पौधें के तनों में सहजीवी जीवाणु पाये जाते है, जो वायुमंडलीय नत्रजन का स्थिरीकरण मृदा में नाइट्रोजन की प्रतिपूर्ति करते हैं। इसमें बाढ़, सूखा एवं मृदा लवणता के प्रति सहनशीलता होती हैं। ढैंचे में कार्बनिक अम्ल पाया जाता है, जो क्षारीय एवं लवणीय मृदा को सुधारने में सहायक होता है। इसमें एलिलोपथिक प्रभाव होने का कारण रोगों एवं कीटों से लड़ने की सामर्थ्य होती है। हरी खाद के लिए बीजदर 25-30 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर होती है। समूचे ढैंचे की फसल से 800-100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 15-20 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 10-12 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर प्राप्ति होती है।

ढैंचे की फसल को मृदा में मिलाने से पूर्व सावधानियाँ

• पौधों को मिट्टी में मिलाने से पूर्व पौधे की पूर्ण वानस्पतिक वृद्धि होनी चाहिए अर्थात बुवाई के 40-45 दिन का समय पर्याप्त होता है। समय से बोई गई फसल अर्थात मई का आखिरी सप्ताह से लेकर जून का दूसरा सप्ताह बुवाई के लिए उचित समय होता है।

• बुवाई के समय प्रचुर मात्रा में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस का उपयोग करना चाहिए ताकि जुताई करने के बाद इसका अपघटन तीव्र गति से हो सके।

• ढैंचे की फसल को पुष्प आने से पूर्व ही मिट्टी में मिला देना चाहिए।

रोटावेटर द्वारा खड़ी फसल को मिट्टी में मिलाना

• जुताई करते समय मिट्टी को पलटने वाले हल एवं तवेदार हल का प्रयोग करना चाहिए ताकि उसके छोटे-छोटे टुकडे होकर मिट्टी में अच्छी तरह से मिल जाये और अपघटन तीव्र गति से हो सके।

• फसल को मृदा में मिलाने के पश्चात् पर्याप्त नमी का होना अत्यंत आवश्यक है नमी के आभाव में सूक्ष्म जीवों की सक्रियता कम हो जाती है, जिससे सड़ने-गलने में अधिक समय लगता है।

• धान की रोपाई के लिए ढैंचे को पलटने के तुरंत बाद पानी भरकर रोपाई की जा सकती है। धान की फसल में भरा हुआ पानी ढैंचा को सड़ाने-गलाने में सहायक होता है।

ढैंचा की हरी खाद से लाभ

• अधिक पत्तियाँ एवं कोमल तना होने के कारण अपघटन तीव्र गति से होकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करता है।

• मृदा में कार्बनिक पदार्थ के बढ़ने के साथ-साथ सूक्ष्म जीवों की संख्या में भी वृद्धि होती हैं।

• सूक्ष्मजीवों के लिए भोजन एवं पर्याप्त ऊर्जा की पूर्ति होती है।

• खड़ी फसल मिट्टी को मृदा क्षरण से बचाती है।

• मृदा की जैविक, भौतिक एवं रासायनिक दशाओं में सुधार होता है।

• लवणीय एवं क्षारीय भूमियों के सुधारने में सहायक होती है।

• नाइट्रोजन के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की पूर्ति होती है।

• दलहनी कुल का सदस्य होने के कारण तनों में उपस्थिति जीवाणुओं के द्वारा नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है।

• एलिलोपेथिक प्रभाव के कारण खरपतवार की समस्याओं से निजात मिलती है।

निष्कर्ष

ढैंचा न केवल हरी खाद के रूप में प्रयोग लाने हेतू उपयुक्त है अपितु हमारे पारिस्तिकी तत्रं को सन्तुलित रखने में भी योगदान प्रदान करता है। इसके अतिरिक्त वह पशुओं के चारों के रूप में भी बहुतायत से प्रयोग में लाया जाता है। यह औषधीय दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण योग्यता रखता है। इसके विभिन्न भागों का उपयोग पारंम्परिक चिकित्सा के रूप में प्रयोग किया जाता है। अतः विभिन्न उपयोगों की दृष्टिकोण से भविष्य में इसके संभावित फायदों को और बढाने के लिये अधिक शोध एवं विकास की आवश्यकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

न्यूट्रास्युटिकल्स के रूप में फलों का महत्व

अंकित सिंह[1]*, शिवराज कुमार वर्मा[2], शशि बाला[3] एवं योगेश चंद्र पटेल[4]
[1,2 एवं3]उदय प्रताप कॉलेज, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
[4]राजकीय महाविद्यालय जक्खिनी, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
पत्राचारकर्ता: ankitp13on@gmail.com

परिचय

औद्योगिकीकरण होने के कारण विभिन्न प्रकार के प्रदूषण जैसे की (वायु, जल, मिट्टी, भोजन) की समस्या बढ़ी है, जो विभिन्न रसायनों, भारी धातुओं, विद्युत चुम्बकीय तरंगों और अन्य हानिकारक मानव निर्मित वस्तुओं का व्यापक उपयोग होने से हुआ है, जिसके कारण विभिन्न बीमारियों, शारीरिक समस्याओं और अन्य अपक्षयी रोगों की घटनाएँ का विस्तार हुआ हैं। स्वास्थ्य देखभाल के लिए इन बढ़ी हुई मांगों ने चिकित्सा संबंधित लागत में प्रभावशाली रूप से वृद्धि की है, साथ ही विषाक्तता या दवा के प्रतिकूल प्रभाव के जोखिम में भी वृद्धि हुई है, उपभोक्ता स्वास्थ्य में सुधार के लिए खाद्य पूरक की ओर बड़े पैमाने पर रुख कर रहे हैं, जहाँ दवा विफल हो जाती है। इसलिए, वैज्ञानिक और शोधकर्ता प्राकृतिक या वैकल्पिक दवाओं और उनके अनुप्रयोग के बारे में सोचने के लिए मजबूर हो गए हैं। वह खाद्य प्रदार्थ जिसमें पोषण के साथ-साथ दवा/औषध के गुण हो उसको विकल्प के रूप में देखा जा सकता है। जिसे हम पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल) कहते है। पौष्टिक-औषध (न्यूट्रास्युटिकल), जो 'न्यूट्रिशन' (पोषण) और 'फार्मास्युटिकल' (दवा/औषध) शब्दों से मिलकर बना है, एक खाद्य या खाद्य उत्पाद है जो बीमारी की रोकथाम एवं उपचार सहित स्वास्थ्य एवं चिकित्सीय लाभ प्रदान करता है। ऐसे उत्पाद पृथक्कृत पोषक तत्वों, आहार पूरकों और विशेष आहारों से लेकर आनुवंशिक रूप से तैयार किये गए खाद्य पदार्थ, जड़ी-बूटी संबंधी उत्पाद और अनाज, सूप, एवं पेय पदार्थ जैसे प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ हो सकते हैं।

जैसे-जैसे खाद्य पदार्थों के गुणों की विशेषता के बारे में जानकारी लोगो को हो रही है वैसे वैसे न्यूट्रास्यूटिकल्स में रुचि लगातार बढ़ रही है। न्यूट्रास्यूटिकल्स खाद्य बाजार के विकास के मुख्य कारण वर्तमान में बढती जनसंख्या और स्वास्थ्य के प्रति संवेदनशील हैं। लोग स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाले कारकों को शामिल करने के लिए तैयार किए गए खाद्य पदार्थों का सेवन करके अपने स्वास्थ्य को बढ़ावा देने वाली क्षमताओं को अनुकूलित कर सकते हैं। फलों में विभिन्न लाभकारी यौगिक होते हैं, जिनमें जैविक गतिविधियाँ होती हैं और उनका उपयोग फार्मास्यूटिकल, न्यूट्रास्यूटिकल उत्पादों के रूप में किया जा सकता है। अधिकांश फलों में पॉलीफेनोलिक घटक होते हैं जो मानव स्वास्थ्य पर एंटीऑक्सीडेंट क्षमता को बढ़ावा दे सकते हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न फलों के साथ सूजन-रोधी, जीवाणु-रोधी, फफुँद-रोधी और कीमोप्रिवेंटिव (रसायन निवारक) प्रभाव जुड़े होते हैं। पॉलीफेनोल के अलावा, ज़ैंथोन, कैरोटीनॉयड, सैपोनिन जैसे अन्य यौगिक भी स्वास्थ्य प्रभाव को प्रदर्शित करते हैं।

न्यूट्रास्यूटिकल बनावट के विस्तार में फलों की प्रासंगिक उपयोगिता है और चूंकि इसे 'प्राकृतिक दवा' माना जाता है, इसलिए इसका बाजार हर साल तेजी से बढ़ रहा है। फलों में, सामान्य रूप से, फाइटोकेमिकल्स, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, अमीनो एसिड, पेप्टाइड्स और एंटी-ऑक्सीडेंट का एक बड़ा स्रोत होता है जो न्यूट्रास्यूटिकल्स के रूप में तैयार किए जाने के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसके न्यूट्रास्यूटिकल्स के जैविक गुण एंटी-ऑक्सीडेंट, एंटी-डायबिटिक, एंटी-हाइपरटेंसिव, एंटी-अल्जाइमर, एंटी-प्रोलिफेरेटिव, एंटी-माइक्रोबियल, एंटी-बैक्टीरियल, एंटी-इंफ्लेमेटरी आदि से लेकर कई तरह के हो सकते हैं।

फलों में निहित लाभकारी तत्वों की वजह से उन्हें न्यूट्रास्युटिकल्स के संभावित स्रोतों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। फलों का दैनिक आधार पर सेवन करने से कई पुरानी बीमारियों के जोखिम को कम करता है और स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है। अधिकांश फलों में न्यूट्रास्यूटिकल गुण होते हैं, जिनमें से बेरीज (ब्लू बेरी, स्ट्रॉबेरी, ब्लैकबेरी, क्रेनबेरीज ही नहीं बल्कि इंडियन गूजबेरी यानी आँवला भी हेल्थ के लिए बेहद फायदेमंद है)। कुछ क्लासिक उदाहरण अंगूर, केला, बेल, अनार, करौंदा, क्रैनबेरी, संतरा, नींबू आदि फल न्यूट्रास्युटिकल्स गुणों का अच्छा स्रोत होता हैं।

प्राकृतिक स्त्रोतों के अनुसार न्यूट्रास्युटिकल्स का वर्गीकरण

अवयव	स्त्रोत	संभावित लाभ
		कैरोटीन
अ. लाइकोपीन	ग्रेपफ्रूट, अमरुद, पपीता	एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि, मुख्य रूप से प्रोस्टेट, मूत्राशय, गर्भाशय ग्रीवा, ल्यूकेमिया कैंसर के गठन से बचाता है।
ब. ल्युटिन	एवोकाडो	कोलन कैंसर, मोतियाबिंद के विरुद्ध कैंसर-रोधी गतिविधि से बचाता है।
स. जिओक्सैंथिन	साइट्रस, एवोकाडो	मांसपेशियों के क्षय से आँखों की रक्षा करता है।
		पॉलीफ़ेनॉल
एंथोसायनिडिन	फल(बेरीज)	फ्री रेडिकिल को खत्म करता है, रक्त में शर्करा को कम करता है, कैंसर के खतरे को भी कम करता है।
फ्लेवोनोइड्स	साइट्रस	एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर विरोधी गतिविधि पाया जाता है।
फ़ेनोलिक एसिड	बेरीज	एंटीऑक्सीडेंट, कैंसर विरोधी गतिविधि पाया जाता है।
रेस्वेराट्रोल	अंगूर, बेरीज, रेसिन	रक्त में कोलेस्ट्रॉल, शर्करा को कम करता है, एचडीएल कोलेस्ट्रॉल का स्तर बढाता है।
		फिनॉल
कैफ़िक एसिड	फल	एंटीऑक्सीडेंट गुण होते हैं।
फ़ेरुलिक एसिड	सेब, नाशपाती एवं साइट्रस	एंटीऑक्सीडेंट और सूजन-रोधी गुण होता है।

डोलकर एट अल., 2017

विभिन्न फल फसलों के स्वास्थ्य लाभ

फल	सक्रिय तत्व	स्वास्थ्य पर लाभकारी प्रभाव	संदर्भ
लाइम एंड लेमन	गेरानियोल, सिट्रल और हेस्परिडिन ग्लूकोसाइड्स	इसक जूस अस्थमा, सिरदर्द, निमोनिया और गठिया के लिए अच्छा होता है। रक्त शोधक भी करता है।	बर्टुज़ी एट अल., 2013
शरीफा	ऐक्रिड	रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है, कैंसर की रोकथाम में सहायक है, ट्यूमर रोधी और जीवाणुरोधी गुण रखता है	पांडे एंड ब्रेव, 2011 चेनेट एट अल., 2012
अनानास	ब्रोमेलिन	मधुमेहरोधी, एंटीऑक्सीडेंट, हाइपर-लिपेडेमिक गुण होता है ।	खान एट अल., 2011
जामुन	जाम्बोलिन, एक हल्का पीला आवश्यक तेल, एलाजिक एसिड	पेट संबंधी, मूत्रवर्धक, हेपेटोप्रोटेक्टिव टॉनिक, हेमेटिनिक	ग्रोवर एट अल., 2000; सिसोदिया और भटनागर 2009
आम	गैलिक एसिड	मूत्रवर्धक, टॉनिक, कृमिनाशक। इसमें मौजूद बीटा कैरोटीन प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ाने में मदद करता है।	वान्थोज़ एट अल., 2007
अनार	प्रोटीन, खनिज जैसे Ca, Mg, P, Fe, Na, K, Cu, S, Cl और विटामिन जैसे कैरोटीन, थायमिन, राइबोफ्लेविन, निकोटिनिक एसिड, विटामिन C, पेक्टिन।	एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है और रक्तचाप को कम करता है। सूजनरोधी, स्तन कैंसर को रोकने में सहायक होता है।	जुरेन्का 2008
आँवला	आवश्यक तेल, एम्ब्लिक एसिड, फिलांथिन	इसमें एंटी-वायरल, एंटीम्यूटाजेनिक, एंटीएलर्जिक और एंटी-बैक्टीरियल गुण होते हैं।	अनिबिजुवोन और उडेज़े, 2009
पपीता	पापेन, पापयिक एसिड कार्पेन और कार्पोसाइड	सूजन को कम करने, जीवाणुरोधी, एंटीवायरल और ज्वरनाशक क्षमता।	सिंह और अली 2011
सेब	क्वेरसेटिन, कैटेचिन, गैलिक एसिड, क्लोरोजेनिक एसिड, फ़्लोरेटिन।	दीर्घकालिक बीमारी (हृदय संबंधी रोग, अस्थमा और कैंसर) रोकने में सहायक होता है।	बोयर और लियू 2004
अंगूर एंड रेड वाइन	एंथोसायनिन, टैनिन और रुटिन	हृदय रोग रोकने में सहायक करता है।	इंटी, एम., और फाओरो, एफ. 2006
कॉमन पल्म	एमिग्डालिन इमल्शन और थोड़ा सा मैलिक एसिड	कब्ज़ से राहत पाने के लिए, धमनियों में रुकावट से बचने के लिए और अस्थि घनत्व को संरक्षित रखने में सहायता करता है।	हॉलोरन एट अल. 2010
अमरुद	लाइकोपीन	दर्द के विकास को रोकने वाले गुण, कीटनाशक, कैंसर विरोधी और	जोसेफ और प्रिया, 2011

फल	सक्रिय तत्व	स्वास्थ्य पर लाभकारी प्रभाव	संदर्भ
केला	सेरोटोनिन, नोरेपिनेफ्राइन और डोपामाइन	सूजन रोधी होता है। रासायनिक संदेशवाहक का काम करता है। तंत्रिका कोशिकाओं के बीच संदेशों का संचार करता है।	कनाज़ावा एंड सकाकिबारा (2000)

निष्कर्ष

आधुनिक जीवन में उपभोक्ताओं का झुकाव स्वास्थ्य एवं गुणवत्तायुक्त भोजन की ओर लगातार बढ़ रहा है। न्यूट्रास्यूटिकल्स, जो स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देंते है, साथ ही साथ उपभोक्ताओं का दैनिक जीवन में न्यूट्रास्यूटिकल्स के लाभकारी प्रभाव के बारे में काफी जागरूकता होने से बहुत लोकप्रिय हो रहा हैं, आजकल न्यूट्रास्यूटिकल्स एक व्यापक शब्दावली है, जिसके कई उप-खंड हैं। फल भी सुरक्षात्मक खाद्य पदार्थों की श्रेणी में आते हैं और न्यूट्रास्यूटिकल्स के जबरदस्त स्रोत हैं और इसलिए किसी व्यक्ति के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के लिए फलों का नियमित सेवन अत्यंत महत्वपूर्ण है। अधिकांश फलों में अपने स्वयं के, अनूठे सक्रिय तत्व होते हैं, जिनमें जबरदस्त न्यूट्रास्यूटिकल महत्व होता है और अभी भी उनके बारे में विस्तार से पता लगाया जाना बाकी है।

सन्दर्भ

• खान, एस.एम.डी., रविकुमार, वी. और नीलिमा, के. 2011. अनानास को मोसस पौधे के फल का औषधीय हस्तक्षेप विभिन्न पशु मॉडलों में घाव भरने वाले एजेंट के रूप में कार्य करता है। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फार्मेसी एंड टेक्नोलॉजी। 3 (1) : 1807-1824.

• बर्टुज़ी, जी, टिरिलिन, बी., एंजेलिनी, पी. और वेनानज़ोनी, आर. 2013. त्वचा पर साइट्रस लिमोनम आवश्यक तेल की एंटीऑक्सीडेंट क्रिया। यूरोपियन जर्नल ऑफ़ मेडिसिनल प्लांट्स 3(1):1-9.

• पांडे, एन. और बारवे. डी. 2011. एनोनस स्क्वैमोसा लिन पर फाइटोकेमिकल और फार्माकोलॉजिकल समीक्षा. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च इन फार्मास्युटिकल एंड बायोमेडिकल साइंसेज. 2(4) : 1404-1412.

• ग्रोवर, जे. के., वत्स, वी, और राठी, एस. एस. 2000. प्रायोगिक मधुमेह में यूजेनिया जाम्बोलोना और टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया के एंटी-हाइपरग्लाइसेमिक प्रभाव और कार्बोहाइड्रेट उपापचय में शामिल प्रमुख मेटाबोलिक एंजाइमों पर उनके प्रभाव। जर्नल ऑफ एथनोफार्माकोलॉजी 73(3): 461-470।

• वाउथोज़, एन., ब्लेड, ए., ब्लेड, ई.एस., वैन-डैम, एम. और ड्यूज़, पी. 2007. मैंगिफ़ेरा इंडिका एल. छाल की एथनोफार्माकोलॉजी और इसके मुख्य-ग्लूकोसिलक्सैंथोन, मैंगिफ़्रिन के औषधीय अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ बायोमेडिकल एंड फ़ार्मास्युटिकल साइंसेज़ 1: 112-119।

• जुरेनका, जे.एस. 2008. अनार (प्रूनिका ग्रैनेटम एल.) का चिकित्सीय अनुप्रयोग एक समीक्षा। अल्टरनेटिव मेडिसिन रिव्यु 13 (2): 128-144।

• अनिबिजुवोन, आई. आई., और उडेज़, ए. ओ. 2009. दक्षिण-पश्चिमी नाइजीरिया से नैदानिक मूल के कुछ रोगजनक जीवों पर कैरिका पपीता (पपीता पत्ती) की रोगाणुरोधी गतिविधि। एथनोबोटैनिकल लीफलेट्स 13: 850-864।

• सिंह, ओ. और अली.एम., 2011. कैरिका पपीता एल के बीजों के फाइटोकेमिकल और एंटीफंगल प्रोफाइल. इंडियन जर्नल ऑफ फार्मास्युटिकल साइंसेज. 73(4): 447-451.

• बोयर, जे. और लियू, आर.एच. 2004. सेब के फाइटोकेमिकल्स और उनके स्वास्थ्य लाभ। न्यूट्रिशन जर्नल 3(5): 3-5।

• हॉलोरन, बी.पी., व्रोन्स्की, टी.जे., वॉनहर्ज़ेन, डी.सी., चू, वी. और ज़िया, एक्स. 2010. आहार में सूखे बेर वयस्क और वृद्ध नर चूहों में हड्डियों के द्रव्यमान को बढ़ाते हैं। जर्नल ऑफ न्यूट्रिशन 140(10): 1781-1787।

• इंटी, एम., और फाओरो, एफ. 2006. अंगूर फाइटोकेमिकल्सः मानव स्वास्थ्य के लिए पुराने और नए न्यूट्रास्युटिकल्स का एक गुलदस्ता। मेडिकल हाइपोथेसिस 67(4): 833-838।

• डोलकर, डी., बक्शी, पी., वली, वी.के., शर्मा, वी. और शाह, आर.ए. 2017 न्यूट्रास्युटिकल्स के रूप में फल। इको. एनव. और कं. 23 (फरवरी सप्लीमेंट): 2017; पृ. (एस113-एस118)।

• जोसेफ, बी. और प्रिया, एम. (2011)। सिडियम गुजावा (एल.) आवश्यक तेल के फाइटोकेमिकल और बायोफार्मास्युटिकल पहलूः एक समीक्षा। जर्नल ऑफ मेडिसिनल प्लांट्स रिसर्च, 5.

• कनाज़ावा, के. और सकाकिबारा, एच. (2000)। कैवेंडिश केले में डोपामाइन की उच्च सामग्री, एक मजबूत एंटीऑक्सीडेंट। जर्नल ऑफ़ एग्रीकल्चरल एंड फूड केमिस्ट्री, 48, 844-848।

ISSN No. 2583-3316

सब्जियों में बायोफोर्टिफिकेशन: कुपोषण के खिलाफ एक प्रभावी हथियार

रोनक कूड़ी*, प्रहलाद सहाय शर्मा, संतोष चौधरी एवं महेश कुमार पूनिया
उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान
पत्राचारकर्ता: ronakkuri9782@gmail.com

परिचय

विश्वभर में बढ़ती जनसंख्या और खाद्य पदार्थों में विटामिन, खनिज और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी एक गंभीर चिंता का विषय बन चुकी है। संयुक्त राष्ट्र की 2021 की रिपोर्ट के अनुसार, लगभग 828 मिलियन लोग वैश्विक स्तर पर भुखमरी से प्रभावित हैं। पाँच वर्ष से कम आयु के 45 मिलियन बच्चे कुपोषण से पीड़ित हैं और 149 मिलियन बच्चों के आहार में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के कारण उनकी वृद्धि और विकास प्रभावित हो रही है। वैश्विक भुखमरी सूचकांक 2022 में, 121 देशों की तुलना में भारत का स्थान 107वां है और भुखमरी स्कोर 29.1 है, जो भयंकर भुखमरी के स्तर को दर्शाता है। इन आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि भुखमरी और कुपोषण को 2030 तक समाप्त करने का लक्ष्य हमसे कहीं दूर होता जा रहा है। दुनिया भर में लगभग 1000 मिलियन टन सब्जियाँ लोगों की खाद्य श्रृंखला में प्रवेश करती हैं, जो ऊर्जा का सबसे सस्ता और आसानी से उपलब्ध होने वाला पोषण का स्रोत हैं। 'बिग फाइव' की कमी, यानी आयरन, कैल्शियम, आयोडीन, सेलेनियम और विटामिन ए, वैश्विक आबादी के आधे हिस्से के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। यह कमी न केवल विकासशील देशों बल्कि विकसित देशों की जनसंख्या को भी प्रभावित कर रही है। कुपोषण के कारकों में लगभग 60 प्रतिशत आयरन, 30 प्रतिशत जिंक, 30 प्रतिशत आयोडीन और 15 प्रतिशत सेलेनियम की कमी प्रमुख है। इन महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों की अपर्याप्त उपलब्धता विभिन्न प्रकार के शारीरिक विकारों और गंभीर बीमारियों का कारण बनती है।

बायोफोर्टिफिकेशन: पोषण सुरक्षा की गारंटी

बायोफोर्टिफिकेशन एक तकनीक है, जिसके माध्यम से खाद्य फसलों के पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है। यह तकनीक कुपोषण से निपटने का एक कुशल और लागत प्रभावी तरीका हो सकता है।

बायोफोर्टिफिकेशन की प्रक्रिया

बायोफोर्टिफिकेशन एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा पारंपरिक पौधों के प्रजनन, उन्नत कृषि पद्धतियों और आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से खाद्य फसलों के पोषक घनत्व में वृद्धि की जाती है। पारंपरिक पादप प्रजनन और आनुवांशिक इंजीनियरिंग के माध्यम से, अवशोषण अवरोधकों के स्तर को कम करके या फसलों में अवशोषण बढ़ाने वाले स्तरों को बढ़ाकर, आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाई जाती है। तत्वों की कमी से निपटने के लिए यह एक प्रभावी और आशाजनक कदम है। यह तकनीक मुख्य खाद्य पदार्थों की पोषण गुणवत्ता को सुधारने के लिए पादप प्रजनन का उपयोग करती है, जिससे गरीबों को अधिक सूक्ष्म पोषक तत्व प्रदान किए जा सकते हैं। यह विधि अपेक्षाकृत सस्ती, लागत प्रभावी और दीर्घकालिक समाधान प्रदान करती है। इसके माध्यम से कुपोषण से प्रभावित लोगों की संख्या को कम किया जा सकता है और संतुलित पोषण की स्थिति को बनाए रखने में मदद मिल सकती है।

फोर्टिफिकेशन और बायोफोर्टिफिकेशन में अंतर

फोर्टिफिकेशन और बायोफोर्टिफिकेशन के बीच के अंतर को सारिणी-1 में दर्शाया गया है।

सारिणी-1: फोर्टिफिकेशन और बायोफोर्टिफिकेशन के बीच विभिन्नता

फोर्टिफिकेशन	बायोफोर्टिफिकेशन
• फोर्टिफिकेशन एक प्रक्रिया है, जिसमें भोज्य पदार्थों में सूक्ष्मपोषक तत्वों जैसे विटामिन, आयरन, जिंक आदि को	• बायोफोर्टिफिकेशन वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा शस्य क्रियाओं, पारंपरिक पादप प्रजनन या आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम

फोर्टिफिकेशन	बायोफोर्टिफिकेशन
बढ़ाया जाता है, ताकि खाद्य आपूर्ति की पोषण गुणवत्ता में सुधार हो सके और स्वास्थ्य के लिए लाभ प्रदान किया जा सके।	से खाद्य फसलों की पोषण गुणवत्ता में सुधार किया जाता है।
• इसका उद्देश्य फसलों की कटाई के बाद पोषक तत्वा की मात्रा को बढ़ाना होता है।	• इसका उद्देश्य फसलों के प्रसंस्करण के दौरान मानवीय हस्तक्षेप के अलावा पौधों की वृद्धि के दौरान ही फसलों में पोषक तत्वों के स्तर को बढ़ाना है।
• पारंपरिक फोर्टिफिकेशन गतिविधियों से तैयार उत्पाद अक्सर अधिक महंगे होते हैं, जिससे आम लोगों के लिए इनकी पहुँच और खरीदना कठिन हो जाता है।	• बायोफोर्टिफिकेशन प्रक्रिया से तैयार सब्जियाँ लोगों तक आसानी से पहुँच सकती हैं और इनकी कीमत भी सामान्य किस्मों के समान ही होती है।

बायोफोर्टिफिकेशन के तरीके

अ) सस्य बायोफोर्टिफिकेशन

यह एक सरल और प्राचीन तकनीक है, जिसके अंतर्गत फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाने के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग किया जाता है। इसमें जस्ता का पर्णीय छिड़काव, आयोडीन (आयोडाइड या आयोडेट के रूप में) का मृदा में मिलाना और सेलेनियम का सेलेनेट के रूप में उपयोग शामिल है। पौधों के खाए जाने वाले भागों को पोषक तत्वों से समृद्ध बनाने के लिए, सूक्ष्म पोषक तत्वों का पत्तियों पर छिड़काव एक शीघ्र प्रभाव देने वाला सरल तरीका है। कुछ शोधकर्ताओं के अनुसार, पौधों में आयरन, जस्ता, सेलेनियम और ताँबे की सांद्रता को बढ़ाने के लिए माइकोराइजा कवक और पोषक तत्व व घोलक पौधों की जड़ों में सहजीवी संबंध बनाकर मृदा से सूक्ष्म पोषक तत्वों को अवशोषित करते हैं। इससे पौधों में इन तत्वों की मात्रा बढ़ाने में मदद मिलती है। इसके अलावा, सल्फर ऑक्सीडाइजिंग जीवाणु प्याज में सल्फर की मात्रा बढ़ाने के साथ-साथ नत्रजन, जिंक, कैल्शियम, आयरन आदि जैसे विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने में सहायक होते हैं।

ब) पादप प्रजनन/चयनात्मक प्रजनन

पिछले चार दशकों में पारंपरिक प्रजनन ने मुख्यत सब्जियों की उपज और रोग-प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया है। इसका परिणाम यह हुआ कि पोषण संबंधी पहलुओं पर प्राथमिकता न देने के कारण मौजूदा किस्मों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा में कमी आ गई, जिससे पोषण रहित थालियों की संख्या बढ़ी है। पादप प्रजनन तकनीक के माध्यम से सब्जियों में महत्वपूर्ण विटामिन, एंटीऑक्सिडेंट, बीटा कैरोटीन, आयरन, आयोडीन और जस्ता जैसे तत्वों की मात्रा बढ़ाने पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है, ताकि पोषणयुक्त थालियों को बढ़ावा मिल सके। पोषक तत्वों के संदर्भ में बीन्स एक कम कीमत पर उपलब्ध वेज प्रोटीन स्रोत हैं, क्योंकि इनमें विशेष रूप से आयरन और जस्ता की अधिकता होती है। वर्तमान में, जननद्रव्य स्क्रीनिंग के माध्यम से बीन्स में अधिक आयरन और जस्ता युक्त किस्मों को विकसित करने की अपार संभावनाएं हैं।

प्रजनन के माध्यम से बायोफोर्टिफिकेशन के चरण

वांछनीय गुणों वाले पौधों की पहचान
↓
पोषक तत्वों के स्तर का निर्धारण
↓
जननद्रव्य की छटनी
↓
बायोफोर्टिफिकेशन किस्मों का विकास
↓
नये किस्मों का प्रदर्शन
↓
फसलों में पोषक तत्वों की मात्रा
↓
पोषक तत्वों के अवशोषणा क मूल्यांकन
↓
किस्मों के प्रसार के लिए बीज प्रवर्धन
↓
बायोफोर्टिफिकेशन किस्मों के उत्पादन के विपणन की व्यवस्था

स) आनुवंशिक संशोधन

इस तकनीक में फसल के जीनोम को करीबी जनक से लिए गए जीन के साथ संशोधित किया जाता है, ताकि पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाया जा सके। यह भविष्य में भोजन को पोषण से समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। आनुवंशिक संशोधन का उपयोग उच्च पोषण स्तर या बेहतर स्वाद के

लिए, कड़वाहट कम करने, धीमी गति से पकने, बीज रहित फल, बढ़ी हुई मिठास और पोषण विरोधी कारकों को कम करने के लिए कई सब्जियों में किया गया है, जिनमें टमाटर, आलू, गोभी, गाजर आदि शामिल हैं।

बायोफोर्टिफिकेशन को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक सुझाव एवं शर्तें

क) नीतियाँ बनानाः देश स्तर पर ऐसी नीतियाँ तैयार की जानी चाहिए, जो बायोफोर्टिफिकेशन के कार्यान्वयन में सहायक हों और मुख्य भोज्य पदार्थों में बायोफोर्टिफिकेशन को अनिवार्य करें।

ख) किसानों की सुरक्षाः यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि छोटे जोत वाले और पारंपरिक किसान बायोफोर्टिफिकेशन से नकारात्मक रूप से प्रभावित न हों।

ग) गुणवत्ता और सुरक्षाः इन फसलों की गुणवत्ता, पोषक तत्वों के स्तर, स्वास्थ्य लाभ और सुरक्षा के बारे में किसानों और उपभोक्ताओं को विश्वास दिलाना।

घ) लक्ष्य निर्धारणः बायोफोर्टिफिकेशन के कार्यान्वयन से पहले पोषण लक्ष्यों को ध्यान में रखकर यह निर्धारित करना जरुरी है कि किन फसलों में और कितनी मात्रा में पोषक तत्व जोड़े जाएं।

ड) जागरूकताः लोगों में जागरूकता पैदा करना ताकि वे गैर-बायोफोर्टिफाइड और बायोफोर्टिफाइड फसलों में अंतर कर सकें।

च) उपभोक्ता धारणाः नए बायोफोर्टिफाइड फसलों और उनके उत्पादों के बारे में उपभोक्ताओं की सकारात्मक धारणा विकसित करना।

झ) बीज और खाद कंपनियों को सम्मिलित करनाः बीज और खाद कंपनियों के रूप में निजी क्षेत्र की संस्थाओं को सम्मिलित करना एवं मुख्य व्यवसायकि गतिविधियों में बायोफोर्टीफाइड फसलों एवं किस्मों को शामिल करना।

बायोफोर्टिफिकेशन के लाभ

भूख को मिटाने के लिए हरित क्रांति और संबंधित आंदोलनों ने देश में एक उज्जवल क्रांति का रूप लिया। हरित क्रांति के परिणामस्वरूप, देश ने खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि की और आत्मनिर्भरता भी हासिल की। इसके अलावा, सरकार समय-समय पर विभिन्न योजनाएँ चला रही है, जिससे अधिक से अधिक आबादी को कैलोरी मानक के अनुसार पर्याप्त भोजन मिल सके। हालाँकि, वर्तमान में ध्यान भोजन की पोषक सामग्री को बढ़ाने पर है। पर्याप्त खाने के बावजूद, कई लोगों को अपने भोजन में पर्याप्त पोषक तत्व नहीं मिल रहे हैं, जिससे छिपी हुई भूखमरी की समस्या उत्पन्न हो रही है। भविष्य में सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर सब्जियाँ, फल, अनाज आदि खाद्य पदार्थों के उत्पादन में वृद्धि और आहार विविधता में सुधार के माध्यम से पोषक तत्वों की कमी को पूरा किया जा सकता है। हालाँकि, कोई एक तकनीक इस कमी को पूरी तरह से दूर नहीं कर सकती, लेकिन मौजूदा हालात को देखते हुए बायोफोर्टिफिकेशन एक सरल और टिकाऊ उपाय है। इसके दो मुख्य लाभ हैं:

- **दीर्घकालिक लागत प्रभावशीलताः** बायोफोर्टिफिकेशन तकनीक का उपयोग दीर्घकालिक रूप से लागत प्रभावी है।
- **ग्रामीण आबादी तक पहुँचः** इस तकनीक से तैयार फसलों की पहुँच ग्रामीण आबादी तक आसानी से हो सकती है।

सब्जियों की बायोफोर्टिफाइड किस्में

भारत में बायोफोर्टिफिकेशन की चुनौतियाँ

क) उपभोक्ता स्वीकृति में कमीः बायोफोर्टिफाइड किस्मों के रंग में परिवर्तन होने से उपभोक्ता इन्हें स्वीकारने में हिचकिचाते हैं। इसके अलावा, उपभोक्ता गरिष्ट भोजन को अधिक प्राथमिकता देते हैं, जिससे बायोफोर्टिफाइड फसलों की स्वीकृति कम होती है।

ख) लागत और किसान स्वीकृतिः फोर्टिफिकेशन की प्रक्रिया में लगने वाली लागत और किसानों द्वारा इसे अपनाना एक महत्वपूर्ण चुनौती है।

ग) धीमी प्रक्रियाः गैर-आनुवंशिक संशोधित विधियों का उपयोग करके सब्जियों या अन्य फसलों में बायोफोर्टिफिकेशन किया जा सकता है, लेकिन यह विधि आनुवंशिक संशोधन की तुलना में धीमी है।

घ) बीज और ग्रामीण विस्तार प्रणालीः नई किस्मों के विकास और प्रसार के लिए एक प्रभावी बीज और ग्रामीण विस्तार प्रणाली का अभाव भी एक बड़ी चुनौती है।

निष्कर्ष

बायोफोर्टिफिकेशन को सफल बनाने के लिए एक बहु-विषयक अनुसंधान की आवश्यकता है। इसके लिए कृषि शोधकर्ताओं, पोषण विशेषज्ञों, सार्वजनिक स्वास्थ्य अधिकारियों, समाजशास्त्रियों, वैज्ञानिकों, खाद्य प्रौद्योगिकीविदों और अर्थशास्त्रियों जैसे विशेषज्ञों के बीच सीधा और प्रभावी संबंध स्थापित होना अत्यंत आवश्यक है। यह सहयोग विभिन्न दृष्टिकोणों और विशेषज्ञताओं को एक साथ लाकर बायोफोर्टिफिकेशन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में मदद करेगा, जिससे पोषण सुरक्षा और जनस्वास्थ्य में सुधार हो सके।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

फल वृक्षों की सफल सघन बागवानी

अन्जू पाल* एवं हर्षिता बोरा

उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, गो. ब. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तराखंड

पत्राचारकर्ता: anjupal128@gmail.com

परिचय

फलों की सघन बागवानी काफी सफल हुई है। ये वृद्धि के कारकों को बढाते है और उत्पादकता को कम करने वाले कारकों को पौधों के स्वास्थ व फलों की गुणवत्ता को बनाये रखते हुए, कम करते है। पौधों से अधिक उत्पादकता लेने के लिए पौधों की अतिरिक्त बढ़वार को कम करते है। पौधों की अतिरिक्त वृद्धि को सीमित करने के लिए बहुत से फलों मे बौने किस्म के मूलवृन्त है, जिनका प्रयोग करते हुए वृद्धि को सीमित कर सकते है। सघन बागवानी से प्रारम्भिक वर्षो मे कम समय मे अधिक उपज ले सकते है जब पौधे अपने पूरे आकार को प्राप्त कर लेते है, तो उस समय उनके आकार को काट-छाँट कर सीमित रखा जाता है। विभिन्न फसलों मे सघन बागवानी की गयी है, जो निम्न तालिका मे प्रदर्शित की जा रही है।

क्रम	फल	सघनता (पौधें/है.)	उत्पादन (टन/है०/वर्ष)
1	सेब	2222	68.75
2	स्वीट चैरी	1250	10.00
3	नाशपाती	2500	32.50
4	आडू	1110	34.65
5	संतरा	2020	31.50
6	टेंगर	2020	58.25
7	चकोतरा	2020	30.00
8	अमरूद	5000	25-30
9	लीची	400	10-15

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आम की सघन बागवानी पर शोध कार्य किया गया हैः

आम भारत का एक प्रमुख फल है। परन्तु यहाँ पर आम की उत्पादकता अन्य देशो से कम है। इसी कारण से आम की उपलब्धता सर्वसाधारण से दूर होती जा रही है। विश्व बाजार में भारतीय आम सर्वप्रिय होते हुए भी, हम बाहरी देशों में भी इसकी आपूर्ति नही कर पा रहे है और निर्यात में भारत का स्थान अनेक देशों से पीछें है। इसलिए आम की उत्पादकता और गुणवत्ता बढ़ाना अति आवश्यक है।

आम की कम उत्पादकता का प्रमुख कारण बाग लगाने के 10-15 वर्षो तक कम या नगण्य उपज है, क्योंकि वृक्षों की परस्पर दूरी 10-12 मीटर रखी जाती है आम मे रोपण के समय सामान्यतः पेड़ से पेड़ की दूरी 10-12 मीटर रखी जाती है। परन्तु यदि शुरू के वर्षो मे बाग मे अन्तः सस्यन न करना हो तों आम की सघन बागवानी करनी चाहिए। गो. ब. पंत कृषि एवं प्रौ. वि. वि., पन्तनगर के उद्यान अनुसंधान केन्द्र, पत्थरचटटा पर विभिन्न प्रयोगों के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा देखा गया है कि आम को सामान्य दूरी (10×10 मी., 100 पेड़/है.) तथा सघन बागवानी मे पेड़ों की दूरी (2.5×3 मी., 1333 पेड/है.) पर रोपने पर क्रमशः लगभग 11,900 रूपये व 78,500 रूपये का खर्च आता है। आम के बाग से 5 वर्ष की आयु से फल लिए जाते है, परन्तु फल काफी कम होते है। अतः सामान्य बागवानी से अधिक लाभ नही मिलता है। साधारण विधि मे 1×1 मीटर गढढा खोदकर, उसी खुदी मिटटी में आवश्यक खाद एवं उर्वरकों को मिलाकर गड्ढे की गहरी सिंचाई करना बाताया जाता है, जिससे गड्ढें की मिट्टी का घनत्व पूर्ववत्

हो जाए। परन्तु सघन बागवानी में यदि मिट्टी कंकरीली, पथरीली न हो तों साधारण बागवानी की तरह गड्ढे खोदने की कोई आवश्यक्ता नही है और आम के कलमी पौधा को किया जाता है।

• सिचाई

बाग मे लगाए गए पौधों को पर्याप्त पानी की मात्रा देकर सींचना चाहिए। पौधों को लगाने के बाद थालों मे उचित नमी बनाए रखने के लिए गर्मियो मे एक सप्ताह के अन्तराल पर एवं सर्दीयों मे दस दिन के अन्तर पर वहाँ के मौसम व मिट्टी के प्रकार के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए। घास अथवा काली पॉलीथीन की पलवार का प्रयोग करके कम पानी वाले क्षेत्रों मे भी थालों मे नमी को अधिक समय तक बनाये रखा जा सकता है।

आजकल टपक सिंचाई बहुत ही उपयुक्त पायी गयी है। पर्वतीय क्षेत्रों में पौधों की सिचाई करना सबसे बड़ी बाधा है। वहाँ की सतह ऊँची नीची होने के कारण उन क्षेत्रों मे सिंचाई करना कठिन होता हैं एवं पौधों को उचित मात्रा मे पानी भी उपलब्ध नही हो पाता है। इसके लिए सूक्ष्म सिचाई विधि बहुत ही लाभदायक है। सूक्ष्म सिंचाई विधि मे पानी को बहुत कम दाब लम्बे समय के लिए पर बार-बार एवं सीधे पौधो की जड़ मे दिया जाता है, जिससे पौधे मे उनकी आवश्यक्ता के अनुसार उचित नमी की मात्रा रखी जा सकती है। सिंचाई की इस विधि से पानी की बचत, श्रम के साथ पैसे की बचत, खरपतवार की समस्या का निदान इत्यादि लाभ होते है। पौधों की सिचाई के लिए फर्टीगेशन विधि भी बहुत उपयुक्त है। फर्टीगेशन की विधि मे सिचाई करने वाले पानी मे खाद के पौष्टिक तत्वों को सूक्ष्म सिंचाई विधि की सहायता से पौधों तक पहुँचाते है सूक्ष्म सिंचाई विधि खाद पौधें की जड़ मे सही समय मे प्रयोग करने एवं उसके देने के समय को निर्धारित करने मे सहायता मिलती है।

• पोषण

आम की सघन बागवानी के लिए 100 कु. कम्पोस्ट की खाद, 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 75 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 75 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेअर क्षेत्र मे प्रति वर्ष देना बहुत आवश्यक है। फॉस्फोंरस और पोटाश के उर्वरकों का प्रयोग नवम्बर-दिसम्बर में खेत की जुताई के साथ करें लेकिन नत्रजन उर्वरक को जनवरी-फरवरी एवं पुनः जुलाई में दो बार बराबर मात्रा में डालें। जनवरी-फरवरी में नत्रजन फलों के विकास के लिए और जुलाई मे नत्रजन नये प्ररोहों के प्रस्फुटन एवं वृद्धि के लिए आवश्यक है। फॉस्फोरस एवं पोटाश के उर्वरकों को मिट्टी में मिलाने के तुरन्त बाद सिंचाई करना आवश्यक नही है।

• निराई एवं गुड़ाई

बागों को साफ सुथरा रखने के लिए निराई-गुड़ाई करना आवश्यक है निराई-गुड़ाई करते समय मिटटी की गहराई 15 सेमी. से अधिक नही होनी चाहिए। प्रथम दो-तीन वर्षो मे छोटे ट्रैक्टरों द्वारा हैरों किया जा सकता है। यह कार्य अक्टूबर-नवम्बर मे करना चाहिए, इससे बरसात के मौसम मे पनपे खरपतवार आसानी से समाप्त हो जाती है। पुष्पन एवं फलन के समय पर बागों की गुड़ाई नही करनी चाहिए। इससे वृद्धि एवं फलन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

• अन्तः सस्यन

फल बागों की स्थापना के प्रारम्भिक वर्षो में अन्तःफसलीय खेती करना हमेशा अच्छा रहता है। फल पौधो के बीच की लाइनों के जो खाली जमीन रहती है। उसका सदुपयोग करना चाहिए नही तो उससे कई प्रकार की हानि होने की सम्भावना रहती है। जैसे खरपतवारों का होना, जमीन की उर्वरा शक्ति कम होना, साथ ही साथ कई प्रकार के कीड़े व बीमारियाँ होने की सम्भावना रहती है। इसलिए चना, मटर, लोबिया, मूली, गाजर, पालक आदि फसलों को अन्तः सस्यन के रूप मे लिया जा सकता है। इसके लिए फसलानुसार अतिरिक्त पोषण की आवश्यक्ता होगी। फल बागो से शुरू के कई वर्षो तक किसी भी प्रकार की आमदनी नही होती है और फल पौधों की देखभाल एवं रखरखाव मे ही खर्चा होता है। अतः कम उम्र के बागों मे अन्तःफसलें लेने का सुझाव दिया जाता है। जो भूमि में तत्वों के क्षरण को रोकने मे भी सहायक होती है।

• कटाई-छँटाई

सघन बागवानी मे पेड़ों की ऊँचाई 3 मी. तक ही रखते है। इसके लिए शुरूआत मे कटाई-छँटाई करना अत्यंत आवश्यक है। पौधों को बाग मे लगाने के लगभग एक वर्ष बाद फरवरी-मार्च में मुख्य तने को जमीन की सतह से लगभग 50-60 सेमी. छोड़कर ऊपर से काट देते है। इस कटे भाग पर कॉपर आक्सीक्लोराइड का लेप लगा दिया जाता है। कटाई के फलस्वरूप प्रत्येक मुख्य तने के ऊपरी भाग से बहुत से कल्ले निकलते है और इनसे 2-5 कल्लों को जो, तने के चारों ओर से निकल रहे हों, बढ़ने देते है और यदि इनकी संख्या इससे अधिक है, तो इनमें से कमजोर कल्लों कों मुख्य तने से काटकर निकाल देते है। इससे वृक्ष चारों दिशाओं में लगभग एक ऊँचाई से समान रूप से बढ़ता है। दूसरी वर्ष से जून-जुलाई में प्रत्येक प्रथम शाखा के शीर्ष भाग को 3-4 पत्तियों सहित काटकर अलग कर देते है। इसके बाद 1 प्रतिशत कीड़े

यूरिया व 0.2 प्रतिशत ब्लाइटाक्स का छिड़काव कर दिया जाता है। इस प्रकार वृक्ष को चारों तरफ समान रूप से फैलने का अवसर प्रदान करते हुए प्रत्येक वृक्ष में मुख्य तने के समीप फैलने वाले प्ररोहों की संख्या बढ़ाते है। जबकि आम के साधारण बागों में कटाई-छँटाई एंव वृक्ष के आकार-प्रकार का नियंत्रण साधारणतः नही किया जा सकता है और यदाकदा जमीन पर लटकती एवं सूखी डालियों को काटकार ही संतोष करना पड़ता है। सघन बागवानी में पौधों को निश्चित आकार एवं प्रकार देने के लिए प्रतिवर्ष फल तोड़ने के तुरन्त बाद कटाई-छँटाई अवश्य करतें रहना चाहिए।

प्रतिवर्ष फलन एवं पुष्पन के लिए कल्तार का प्रयोग

आम की सघन बागवानी मे प्रतिवर्ष फलन के लिए एवं वृक्ष की वृद्धि के नियंत्रण के लिए कल्तार (पैक्लोब्यूट्राजॉल) का उपयोग किया जाता है। कल्तार के प्रयोग का सबसे अच्छा समय (उत्तरी भारत मे) 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर हैं। इसके प्रयोग से जुलाई-अगस्त की निकली नई पल्लवों पर फरवरी-मार्च मे पुष्पन एवं फलन होता है। सितम्बर माह मे मुख्य तने के चारों तरफ 15-20 सेमी तक मिट्टी हटाकर गोल घेरा (थाला) बना देते है। कल्तार रसायन का प्रत्येक पौधें में 5 मिली. प्रति मीटर फैलाब के हिसाब से घोल बनाकर मिटटी के घेरे मे तने के पास दे देते है। कल्तार का प्रयोग द्वितीय वर्ष में प्रथम वर्ष की मात्रा का आधा व तृतीय वर्ष मे चौथाई मात्रा ही प्रयोग की जाती है और चौथै वर्ष मे कल्तार का प्रयोग नही किया जाता है पाँचवे वर्ष मे फिर से कल्तार की पूरी मात्रा देनी होती है। कल्तार के प्रयोग के लिए आवश्यक है कि बाग की मिट्टी में एक दो माह तक पर्याप्त नमी बनी रहे और यदि आवश्यकता हो, तो बाग की हल्की सिचाई भी की जा सकती हैं। अन्यथा इनमें पुष्पन नही होगा। ऐसा करने से आम की सघन बागवानी मे प्रत्येक वर्ष फलन ली जा सकती है।

तुड़ाई एवं उपज

सघन बागों में फलों की तुड़ाई हाथ से आसानी से दो-तीन पत्तियो एवं बौर की डंठल सहित काटकर करने से इन वृक्षों में पुनः कटाई छटाई का काम नही करना पड़ता है, फलों की तुड़ाई के समय ही कटाई छटाई की क्रिया (लीची के बाग की तरह) की जा सकती है, जिससे कटाई छटाई में खर्च कम होता है। बौर के डंठल के साथ (1-5 सेमी.) फलों को भंडारण करने से इनकी भण्डारण क्षमता बढ़ जाती है। अतः सघन बागवानी में इस प्रकार तोड़ें गये फलों को सुदूर के बाजारों में भेजना आसान होता है।

सामान्य बागवानी मे पाँचवें वर्ष में प्राप्त फलों तथा अन्तः सस्यन से 9,000 रूपये, जबकि सघन बागवानी से प्राप्त फलों से 29000 रूपये का लाभ प्राप्त होता है। सघन बागवानी मे यह लाभ दस वर्ष की उम्र तक बढ़ता जाता है और दस वर्ष मे अधिकतम कुल लाभ 3,48,500 रूपये प्राप्त होता है। जो कि सामान्य दूरी पर लगे बागो से लगभग 9-10 गुना होता है। इसके पश्चात् शुद्ध लाभ घटता जाता है और 20 वर्ष एवं 20 वर्ष के पश्चात् यह लाभ लगभग 2 लाख रूपये हो जाता है। सघन बागवानी से प्रत्येक वर्ष फलन प्राप्त होती है। जबकि सामान्य बागवानी मे एकान्तर फलन के कारण प्रत्येक तीसरे वर्ष फलन प्राप्त होती है। इसलिए 20 वर्ष मे सघन बागवानी से सामान्य बागवानी की अपेक्षा 3-4 गुना शुद्ध लाभ मिलता है। एक हैक्टेअर क्षेत्र मे आम की सघन बागवानी के लिए आय-व्यय का ब्यौरा सारणी-1 से सारणी-3 के अनुसार है।

सारणी -1 एक हैक्टेअर क्षेत्र मे आम की सघन बागवानी (1333 पेड़ /हैक्टेअर) के लिए आय-व्यय का ब्यौरा (वस्तुओं की लागत रूपयों में)

क्र. सं.	पेड़ की आयु	पौधों की कीमत (1)	खाद एवं उर्वरक (2)	कीटनाशी एवं रोगनाशी (3)	कल्तार की कीमत (4)	पानी की कीमत (5)	लागत योग (रू० मे) (6)
1.	रोपण का समय	40,000	10,000	5,000	-	1,000	56,000
2.	1 वर्ष	4,000	2,000	2,000	-	1,000	9,000
3.	5 वर्ष	-	10,000	1,000	-	1,000	12,000
4.	10 वर्ष	-	10,000	10,000	40,000	2,000	62,000
5.	15 वर्ष	-	10,000	10,000	40,000	2,000	62,000
6.	20 वर्ष एवं अधिक	-	10,000	10,000	40,000	2,000	62,000

सारणी -2 मशीन एवं श्रमिकों की मजदूरी (रूपये मे)

क्र. सं.	पेड़ की आयु	भूमि की तैयारी, जुताई आदि (1)	रेखांकन, गड्ढो की खुदाई एवं भराई (2)	खाद एवं उवर्रकों का प्रयोग (3)	कीट एवं रोगनाशी का प्रयोग (4)	सिचाई (5)	लागत योग (रूपयों मे) (6)
1.	रोपण का समय	3,000	15,000	2,000	2,000	500	-
2.	1 वर्ष	-	-	5,000	5,000	2,000	1,0000
3.	5 वर्ष	-	-	6,000	6,000	2,000	1,0000
4.	10 वर्ष	-	-	7,000	7,000	2,000	1,0000
5.	15 वर्ष	-	-	8,000	8,000	2,000	1,0000
6.	20 वर्ष एवं अधिक	-	-	9,000	9,000	2,000	1,0000

सारणी -2 मशीन एवं श्रमिकों की मजदूरी (रूपये मे)

क्र. सं.	पेड़ की आयु	कटाई छँटाई (7)	कल्तार का प्रयोग (8)	फसल की देखरेख एवं तुड़ाई (9)	योग (रूपयों मे) (10)	कुल व्यय सारणी -1 (कॉलम 6) + सारणी-2 (कॉलम 1 से 10) (रूपयों मे) (11)
1.	रोपण का समय	-	-	-	22,500	78,500
2.	1 वर्ष	2,000	-	-	24,000	33,000
3.	5 वर्ष	2,500	-	2,500	29,000	41,000
4.	10 वर्ष	7,500	1,000	25,000	59,500	1,21,500
5.	15 वर्ष	15,000	1,000	30,000	74,000	1,36,000
6.	20 वर्ष एवं अधिक	20,000	1,000	30,000	80,000	1,42,000

सारणी -3 फलों तथा अन्तः सस्यन से आय (रूपयों मे)

क्र. सं.	पेड़ की आयु	फलों की उपज (कु०/ है०) (1)	फलों से आय (रूपयों मे) (2)	अन्तः सस्यन से आय (रूपयों मे) (3)	कुल आय (रूपयों मे) (कॉलम 2+3) (4)	कुल व्यय (रूपयों मे) (5)	शुद्ध लाभ (रूपयों मे) (कॉलम 4-5) (6)
1.	रोपण का समय	-	-	-	-	78500	-
2.	1 वर्ष	-	-	-	-	33,000	-
3.	5 वर्ष	70.00	70,000	-	70,000	41,000	29,000
4.	10 वर्ष	470.00	4,70,000	-	4,70,000	1,21,500	3,48,500
5.	15 वर्ष	400.00	4,00,000	-	4,00,000	1,36,000	2,64,000
6.	20 वर्ष एवं अधिक	340.00	3,40,000	-	3,40,000	1,42,000	1,98,000

एवं बीमारियो की रोकथाम

आम में मुख्य रूप से फफूँदी, मालफोरमेसन, मिलीबग, हापर, शूटगालमेकर-स्टेम बोरर, दीमक, डाईबैक, फलमक्खी व छाल खाने वाले कैटरपिलर द्वारा नुकसान होता है। जिसके नियंत्रण के लिए एकीकृत जीवनाशी प्रबन्धन निम्नवत् है।

क) आम मे मई-जून के महीने मे फलमक्खी का प्रकोप प्रायः देखा जाता है। इसके नियत्रंण के लिए एक लीटर की क्षमता वाले चौड़े मुँह के पाँच-छः डिब्बे ले ले। इन डब्बों मे 1.5 मि.ली. मिथाइल यूजीनेल 2 मि.ली. डाईक्लोरोवास तथा 1 लीटर पानी घोलकर भर दे। अब इन डिब्बों को स्थान-स्थान पर रख देते है। इस घोल को प्वाइजनवेट कहते है। हर 3-4 दिन के अन्तर पर प्वाइजनवेट बदलते रहे। फल मक्खी की हानि दूर करने के लिए अरण्डी (रक्षक फसल) के साथ अन्तःसस्यन करना चाहिए।

ख) आम में माह सितम्बर-अक्टूबर में जिन शाखाओं मे गाल बनने शुरू हो गये हों। उन्हे काट दें या हाथ से नष्ट कर दे। शाखा गाँठ कीट के नियत्रंण के लिए 2, 4-डी 200 मिग्रा. प्रति लीटर का छिड़काव सितम्बर-अक्टूबर के महीने मे करना चाहिए। स्टेमबोरर की सूंडी के नियंत्रण के लिए तने के छेद में, जो बुरादा लगा हो उसे साफ करके उसमे नुवान कीटनाशी मे रूई को भिगोकर छेद मे डालकर मिट्टी से छेद को बन्द कर देते है। कीटनाशक दवाओं के स्थान पर पिचकारी से छेद के अन्दर पेट्रोल डालकर मिट्टी से बन्द करके भी कीट नियन्त्रित किया जा सकता है।

ग) आम के कुरचना (मालफारमेशन) बीमारी की रोकथाम के लिए जैसे ही बीमारी दिखाई पड़े, उसे तोड़ देना चाहिए। पेड़ पर अक्टूबर के दूसरे हफ्ते मे नेप्थेलिन एसिटिक एसिड (200 पी पी एम) का छिड़काव करना चाहिए।

घ) आम के पेड़ों मे नबम्बर-दिसम्बर मे 400 गज की पॉलीथीन शीट की 40 सेंमी चौड़ी पट्टी जड़ से 60 सेमी ऊपर तने पर लपेटकर नीचे एवं ऊपरी भाग पर ग्रीस लगाना चाहिए, जिससे आम का मिलीबग ऊपर न चढ़ सके, इसके बाद फॉलीडाल धूल की 250 ग्राम मात्रा को प्रति पौधा जड़ के पास एवं मुख्य तने पर छिड़काव करना चाहिए।

ड़) आम में जनवरी में भी फॉलीडाल घूल की 250 ग्राम मात्रा का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर दो बार करना चाहिए।

च) आम में फरवरी में भुनगा कीट का प्रकोप होने पर कार्बारिल 50 डब्लू. पी. 3 ग्राम या क्यूनालफास 25 ई. सी. की 2 मिली. दवा या मिथाइल पैराथियान 1.0 मिली दवा को प्रति लीटर पानी में मिलाकर पहला छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 15 दिन बाद तथा तीसरा छिड़काव फल बनते समय करना चाहिए।

छ) आम में मार्च-अप्रैल में भी भुनगा कीट के लिए उपरोक्त कीटनाशी का प्रयोग करना चाहिए। चूर्णी फॅफूदी रोग के लिए कैराथेन की एक मिली दवा को प्रति लीटर पानी मे मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। किसी भी दवा का प्रयोग फूल खिलते समय नही करना चाहिए।

ज) कज्जली फफूँद (सूटी मोल्ड) की रोकथाम के लिए भुनगे की रोकथाम जरूरी है। इसके बाद चूने गंधक (1:40) का छिड़काव प्रभावकारी होता है।

झ) आम में यदि कोयलिया रोग का प्रकोप हो रहा हो तो, जब फल कांच की गोली के आकार के हो तो, उसी समय बोरेक्स 8 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलकार छिड़काव करना चाहिए। दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 10 दिन बाद करना चाहिए।

ञ) छाल काटने वाले कैटरपिलरों द्वारा बनाये गये छेदों में पेट्रोलियम से भीगा हुआ फाया डालकर छेदों को मिट्टी से बन्द कर देना चाहिए या छेद मे पतले तार को डालकर भी कीटों को नष्ट किया जा सकता है।

निष्कर्ष

सघन बागवानी एक अत्यंत प्रभावी और प्रगतिशील कृषि विधि है, जो सीमित संसाधनों के बावजूद अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने में सहायक है। यह विधि न केवल खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देती है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और किसानों की आय में वृद्धि करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हालांकि, इस विधि को अपनाने में कुछ चुनौतियाँ हैं, लेकिन उचित तकनीकी सहायता और सरकारी समर्थन के माध्यम से इन चुनौतियों को पार किया जा सकता है। भविष्य में सघन बागवानी का महत्व और भी बढ़ेगा, खासकर उन क्षेत्रों में जहाँ भूमि की उपलब्धता कम है और जनसंख्या घनत्व अधिक है। यह विधि न केवल कृषि उत्पादन को बढ़ावा देने में सहायक होगी, बल्कि इससे ग्रामीण क्षेत्रों के आर्थिक विकास में भी महत्वपर्णू यागेदान मिलेगा। अंततः, सघन बागवानी एक स्थायी और समृद्ध कृषि प्रणाली की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

बीजू आमः विविधता एवं संरक्षण

प्रमिला* , वरूण एवं अनिल कुमार सिंह

पं. दीनदयाल उपाध्याय उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपराकोठी, मोतिहारी, पूर्वी चम्पारण, बिहार,

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: prmtca@gmail.com

परिचय

बीजू आम (*मैंगीफ़ेरा इंडिका*) अत्यंत उपयोगी, दीर्घजीवी, सघन, हितकारी वृक्ष है, जो दक्षिण भारत में कन्याकुमारी के उत्तर में हिमालय की तराई तक (3,000 फुट की ऊँचाई तक) तथा पश्चिम में पंजाब से पूर्व में असम तक अधिकता से होता है। अनुकूल जलवायु मिलने पर इसका वृक्ष 50-60 फुट की ऊँचाई तक पहुँच जाता है। वनस्पति वैज्ञानिक वर्गीकरण के अनुसार आम ऐनाकार्डियेसी कुल का वृक्ष है। आम के कुछ वृक्ष बहुत ही बड़े होते हैं।

आम का वृक्ष एक फूलदार, बड़ा स्थलीय वृक्ष है। इसमें दो बीजपत्र होते हैं। इसके फूल छोटे-छोटे एवं समूह में लगते है। इसे मंजर कहते है। इसकी पत्ती सरल, लम्बी एवं भाले के समान होती है। इसका तना लम्बा एवं मजबूत होता है। इसका फल एक गुठलीवाला सरस और गूदेदार होता है। आम का फल विश्व प्रसिद्ध स्वादिष्ट फल है। इसे 'फलों का राजा' कहा गया है। आम का वृक्ष बड़ा और खड़ा अथवा फैला हुआ होता है, इसकी ऊँचाई 30 से 90 फुट होती है। पका हुआ आम बहुत

तालिका 1. आम के फल में विद्यमान मुख्य घटक

प्रमुख घटक	मात्रा
शर्करा (इक्षु शर्करा)	6.78 से 16.99 प्रतिशत
ग्लूकोज व अन्य शर्करा	1.53 से 6.14 प्रतिशत
अम्ल	टार्टरिक अम्ल व मेलिक अम्ल (साइट्रिक अम्ल भी अल्प मात्रा में पाया जाता है।)
प्रोटीन	9.6 प्रतिशत
वसा	0.1 प्रतिशत
खनिज पदार्थ	0.3 प्रतिशत
रेशा	1.1 प्रतिशत
फॉस्फोरस	0.02 प्रतिशत
लौह पदार्थ	0.3प्रतिशत
नमी की मात्रा	86 प्रतिशत
औसत ऊर्जा मूल्य	50 कैलोरी प्रति 100 ग्राम
विटामिन सी	प्रचुर मात्रा में
विटामिन ए	प्रचुर मात्रा में

स्वास्थ्यवर्धक, पोष्टिक, शक्तिवर्धक और चर्बी बढ़ाने वाला होता है। आम में विद्यमान मुख्य पोषक तत्वों का विवरण तालिका 1 में दी गयी है।

एशिया में मैंजिफेरा की 1000 किस्मों के अलावा जंगली जीन पूल में इसकी 69 प्रजातियाँ है। आम के जनद्रव्यों का गुण-दोष विश्लेषण और मूल्यांकन इसके प्रजनन कार्यक्रमों में उपयोग में लाने के लिए महत्वपूर्ण कदम है। आनुवंशित संसाधनों का उपयोग परंपरागत प्रजनन में मुख्य रूप से पौधों का चयन और संकरण के माध्यम से जीन के अंतर्ग्रहण के लिए किया गया है। इसलिए, तनाव के खिलाफ प्रतिरोध वाले जीन के दाता के रूप में आनुवंशित संसाधनों की जाँच की जानी चाहिए। आजकल, पौधों के चयन के माध्यम से नई किस्में प्राप्त करना दुर्लभ होता जा रहा है, क्योकि नए बागों में केवल ग्राफ्टेड पौधों का रोपण किया जा रहा है। यह सर्वविदित तथ्य

है कि किसी भी भौगोलिक क्षेत्र में देखी जाने वाली विविधता उस क्षेत्र में अनादि काल से उगाई जा रही किस्मों से प्राप्त होती है, जिसमें बीजू आमों का बहुत बड़ा योगदान है।

बीजू आम का इतिहास एवं वर्तमान परिदृश्य

स्वाद में अद्भुत बीजू आम प्रमुख रूप से बिहार और पूर्वी भारत के क्षेत्रों में पाया जाता है। ये आम आकार में होते हैं और आपकी हथेली में समा सकते है। खाने के लिए इसे काटा नहीं जाता बल्कि सीधे मुँह से चूसना होता है, कुछ आम को काटकर भी खाते हैं। एक बार गुदा और रस चूस लेने के बाद गुठली को बाहर फेंक देते हैं।

बीजू आम के कई खासियत की वजह से लोगों में माँग बढ़ी है। बात उन खूबसूरत पीले बीजू आमों की हो रही जो कभी पूरे भारत की विशेषता थी। जंगल में घूमने वाले नौजवानों का हर पेड़ से एक खास रिश्ता होता था, जिनके फलों से मिलने वाले मधु के समान मीठे रस की याद उन्हें आज भी बचपन के दिनों में लौटा ले जाती है। लेकिन लकड़ी के लालचियों ने सैकड़ों साल पुराने आम के पेड़ों को काट कर पूरे देश-प्रदेश को कुदरती वनों से विहीन बना दिया और बीजू आम केवल याद बन कर ही रह गए। ये अब आम अवाम का फल नहीं रहें। बीती शताब्दी के मध्य तक संपूर्ण बिहार में अपने जंगलों के लिए प्रसिद्ध था। इन जंगलों की विशेषता थी नेचुरल ग्रोथ वाले बीजू आम। जानकारों की मानें तो यहाँ की मिट्टी की तासीर ही ऐसी है कि इसमें उपजने वाले आम की स्वाद सबसे अलग होती है।

आम का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। डी कैंडल (सन् 1844) के अनूसार आम्र प्रजाति (*मैंजीफेरा जीनस*) संभवतरू बर्मा तथा मलेशिया में उत्पन्न हुई, परंतु भारत का आम, मैंजीफेरा इंडिया, जो यहाँ, बर्मा और पाकिस्तान में जगह जगह स्वयं (जंगली अवस्था में) होता है, बर्मा-आसाम अथवा आसाम में ही पहले पहल आम उत्पन्न हुआ होगा। भारत के बाहर लोगों का ध्यान आम की ओर सर्वप्रथम संभवतः बुद्धकालीन प्रसिद्ध यात्री, हुयेनत्सांग (632-45) ने आकर्षित किया। फरायर (सन् 1673) ने आम को आडू और खूबानी से भी रूचिकर कहा है और हैमिल्टन (सन् 1727) ने गोवा के आमों को बड़े, स्वादिष्ट तथा संसार के फलों में सबसे उत्तम और उपयोगी बताया है। भारत के निवासियों में अति प्रचीन काल से आम के उपवन लगाने का प्रेम है। अभी भी यहाँ के उधानियो में काम आने वाली भूमि का 70 प्रतिशत भाग के उपवन लगाने के काम आता है। स्पष्ट है कि भारतवासियों के जीवन और अर्थव्यवस्था का आम से घनिष्ठ संबंध है। इसके अनेक नाम जैसे सौरभ, रसाल, चुवन, टपका, सहकार, आम, पिकवल्लभ आरि भी इसकी लोकप्रियता के प्रमाण हैं। इसे 'कल्पवृक्ष' अर्थात् मनोवाछित फल देने वाला भी कहते है। शतपथ ब्राह्नन में आम की चर्चा इसकी वैदिक कालीन तथा अमरकोश में इसकी प्रशंसा इसकी बुद्ध कालीन महत्व के प्रमाण हैं। मुगल सम्राट अकबर ने 'लालबाग' नामक एक लाख पेड़ों वाला उद्यान दरभंगा के समीप लगवाया था, जिससे आम की उस समय की लोकप्रियता स्पष्ट होता है। भारतवर्ष में आम से संबंधित अनेक लोकगीत, आख्यायिकाऍ आदि प्रचलित हैं और हमारी रीति, व्यवहार, हवन, यज्ञ, पूजा, कथा, त्योहार तथा सभी मंगलकायों में आम की लकड़ी, पत्ता, फूल अथवा एक न एक भाग प्रायः काम आता है। आम के बौर की उपमा तथा मंजरी की मन्मथतीर से कवियों ने दी है। उपयोगिता की दृष्टि से आम भारत का ही नहीं वरन् समस्त उष्ण कटिबंध के फलों का राजा है और बहुत तरह से उपयोग होता है। कच्चे फल से चटनी, खटाई, अचार, मुरब्बा आदि बनाते हैं। पके फल अत्यंत स्वादिष्ट होते हैं आौर इन्हें लोग बड़े चाव से खाते हैं। ये पाचक, रोचक और बलप्रद होते हैं।

आम का कालिदास ने गुणगान किया है, सिकंदर ने इसे सराहा और मुगल सम्राट अकबर ने दरभंगा में इसके एक लाख पौधे लगाए। उस बाग को आज भी लाखी बाग के नाम से जाना जाता है। वेदों में आम को विलास का प्रतीक कहा गया है। कविताओं में इसका जिक्र हुआ और कलाकारों ने इसे अपने कैनवास पर उतारा। भारत में गर्मियों के आरंभ से ही आम पकने का इंतजार होने लगता है। ऑकड़ो के मुताबिक इस समय भारत में प्रतिवर्ष एक करोड़ टन आम पैदा होता है, जो दुनिया के कुल उत्पादन का 52 प्रतिशत है। आम भारत का राष्ट्रीय फल भी है। अन्तर्राष्ट्रीय आम महोत्सव, दिल्ली में इसकी अनेक प्रजातियों को देखा जा सकता है। भारतीय प्रायद्वीप में आम की कृषि हजारों वर्षों से हो रही है। यह-ईसा पूर्व पूर्वी एशिया में पहुँचा। 10वीं शताब्दी तक यह पूर्वी अफ्रीका पहुँचा चुका था। उसके बाद आम ब्राजील, वेस्ट इंडिज और मैक्सिको पहुँचा, क्योंकि वहाँ की जलवायु में यह अच्छी तरह उग सकता था। 14वीं शताब्दी में मुस्लिम यात्री इब्नबतूता ने इसकी सोमालिया में मिलने की पुष्टि की है।

उद्यान में लगाए जानेवाले आम की लगभग 1,400 जातियों से हम परिचित हैं। इनके अतिरिक्त कितनी ही जंगली और बीजू किस्में भी हैं। गंगोली (सन् 1955) ने बढ़िया कलमी जातियों

का सचित्र विवरण दिया है। विभिन्न प्रकार के आमों के आकार और स्वाद में बड़ा अंतर होता है। कुछ बेर से भी छोटे तथा कुछ, जैसे सहारनपुर का हाथीझूल, भार में दो ढाई सेर तक होते हैं। कुछ अत्यंत खट्टे अथवा स्वादहीन या चेप से भरे होते हैं, परंतु कुछ अत्यंत स्वादिष्ट और मधुर होते हैं।

जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम मे काफी फेरबदल हुआ है। इसके कारण अब बसंत ऋतु में भी आम के मंजर सभी पेड़ों में नहीं आ पाते हैं। इसके अलावा बेमौसम बारिश, तेज हवा और ओलावृष्टि आम का उत्पादन घटने की बड़ी वजह है। ओलावृष्टि के कारण आम के मंजर और छोटे टिकोले भी झड़ जाते है। इसके अलावा अत्यधिक धूप और तापमान के कारण भी फल सूख कर गिर जाते हैं। इसके कारण उत्पादन में कमी आती है। एक अन्य कारण है कि मौसम में परिवर्तन के कारण मैंगो प्लांट हॉपर, थ्रिप्स का प्रकोप बढ़ गया है। बीजू आम के पेड़ बड़े होते हैं और आमतौर पर लोग इसके रखरखाव पर कम ध्यान देते है इसी लिए भुंगा के कारण काफी नुकसान होता है। सड़क किनारे और गाँवो के आम के पेड़ों में ड्रोन या मोटर चालित स्प्रेयर से छिड़काव किया जा सकता है। पहले एक बीजू आम के पेड़ में औसतन पाँच से आठ क्विंटल फल का उत्पादन होता था, लेकिन अब वहीं उत्पादन घट कर तीन से चार क्विंटल पर आ गया है। बीजू आम ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के लिए अतिरिक्त आय का एक जरिया भी है।

आम के किस्मों की जैव-विविधता

बिहार के उद्यान विभाग के मुताबिक, बिहार में मुख्यतया 12 किस्मों के आम की उपज होती है। इसमें कुछ आम तो अलग-अलग जिलों की पहचान बन चुके हैं। जैसे लीची की उपज होती तो लगभग पूरे उत्तर बिहार में है, लेकिन मुजफ्फरपुर की पहचान वहाँ की शाही लीची से है। इसी तरह बिहार के 5 प्रमुख किस्म में बिहार के भागलपुर जिले का प्रसिद्ध 'जर्दालु आम' अपनी अनोखी खुशबू के कारण देश ही नहीं, बल्कि दुनियाभर में प्रसिद्ध है। पश्चिम चंपारण के इलाके में होने वाला 'जर्दा' आम भी कमोबेश जर्दालु की तरह होता है। इसका नाम जर्दा भी पकने पर होने वाले इसके पीले रंग की वजह से पड़ा है। चौसा आम और बक्सर एक-दुसरे से ऐसे जुड़े है कि इस आम से बक्सर की पहचान जुड़ गयी। सीतामढ़ी व आसपास के क्षेत्र की बंबइया आम पूरे देश में प्रसिद्ध है। गुलाबखास में पहले से ही खास जुड़ा हुआ है। इससे ही आप इस आम के स्वाद का अंदाज लगा सकते हैं। यह बिहार में होने वाले आम के प्रमुख किस्मों में से एक है। खासकर सुपौल व आसपास के इलाके में यह फल खूब होता है। इन आमों के अलावा दरभंगा की कलकतिया मालदह, मधुबनी की कृष्णा भोग, मधेपुरा व कटिहार की मालदा, मुंगेर की चुरंबा मालदा, पटना की दुधिया मालदा आम बिहार के आमों की प्रसिद्ध किस्में है। भारत में बागवानी फसलों का चलन बढ़ता जा रहा है, अब किसानों के साथ-साथ पढे-लिखे प्रोफेशनल भी नौकरियाँ छोड़कार फलों की बागवानी में जुड़ गये है। इससे गाँव की मिट्टी के बीच सुकून तो मिलता ही है, साथ की मोटी कमाई भी हो रही है, हालांकि कई लोगों की जिम्मेदारियाँ भी अपने गाँव और मिट्टी की तहफ खींच ले आती है। बिहार के मधुबनी जिले में फलों के बाग लगाकर 40 एकड़ में फॉरेस्ट बनाने वाले कपिल देव के बारे में कहा जाता है कि (जो पेशे से एक डठ। प्रोफेशनल है) 17 साल की नौकरी छोड़कर अपने गाँव में ही खेती-किसानी करते हैं।

बिहार के अररिया जिले के सुरजापूरी आम को याद कीजिए, तो साफ लगेगा कि मिठास व सुगंध में इसका कोई मुकाबला ही नहीं है। यह अलग बात है कि उत्तर प्रदेश के दशहरी व भागलपुर के जर्दालु की तरह इसकी ब्रांडिंग नहीं की गई। यहाँ के जंगलों में बीजू आम की असंख्य प्रजातियाँ मिलती थी, मिठास, रस व सुगंध में उनका कोई सानी नहीं होता था। लेकिन अस्सी के दशक में प्लाई उद्योग के अस्तित्व में आने के बाद से एक एक कर सारे पुराने पेड़ कटने गए और बीजू आम अतीत की याद में चला गया।

मिथिला में आम की जैव-विविधता

मिथिला के विविध प्रसंगों पर शोध एवं लेखन के अनुसार मिथिला में कभी की 171 किस्में हुआ करती थीं। 1890 के दशक में दरभंगा राज में एक बाटनिस्ट हुआ करते थे चार्ल्स मैरिस। उन्होंने ही दरभंगा के आनंद बाग में आम की सौ से अधिक किस्म के पौधे लगाए थे, उनमें से 40 किस्मों को उन्होंने खुद विकसित किया, इसका जिक्र उनकी किताब कल्टीवेटेड मैंगोज ऑफ इंडिया में है। आज के समय में मधुबनी जिले के सरिसब पाही और दीप गाँव में लोगों ने इनमें से 151 किस्में का प्रदर्शन कर के यह संदेश दिया है कि सवा सौ साल बाद भी आज यहाँ आम की विविध किस्में जिंदा हैं। अमूमन आम के मामले में मिथिला का जिक्र नहीं होता, जबकि वहाँ गाँव में आम के ऐसे बगीचे मिल जाते हैं जिनमें एक साथ एक दर्जन से अधिक किस्में फलती है। स्थानीय लोग विभिन्न गॉवों में उगाई जाने वाली प्रजातियों की नुमाइश करते रहते हैं। एक तरह से यह मिथिला की धरती जैव विविधता के लिए जानी

जाती है। मिथिला में आम की कोई अलग किस्म यहाँ की पहचान नहीं है। मिथिला के आम के बगीचों की खासियत यह है कि यहाँ छोटे से छोटे बगीचे में भी कई तरह के आम मिलते हैं। यहाँ अप्रैल-मई में पकने वाले जर्दा आम से लेकर अगस्त-सितबंर तक में पकने वाले जलमरई और स्वर्णरेखा आम तक एक ही बगीचे में मिल जाते है। ज्यादातर बगीचों में एक दर्जन से लेकर 51 किस्मों तक के आम आसानी से मिलते है। लोग दुर्गापूजा के मौके पर भी देवी को आम का भोग लगाना चाहते है। यहाँ एक बरमसिया आम भी है, जो साल में दो से तीन बार तक आम का फल देता है। माना जाता है कि दरभंगा राज के बाटेनिस्ट चार्ल्स मैरिस के लगाए बगीचे से आम की अलग-अलग किस्मों को पड़ोस के गाँव के लोग अपने यहाँ ले गए। इसमे दूसरे इलाके में भी अलग-अलग किस्म के आम के पेड़ लगाने का चलन शरू हुआ। पुरे बिहार में आम के बगीचों को दान करने की भी परंपरा रही है। मंदिर प्रांगण और पुजारियों की आजीविका के लिए आम का बगीचा लगा कर छोड़ देने की भी परंपरा रही है।

किस्मों के नाम	विशेषता
सजमनिया	इसका आकार लौकी जैसा होता है। कोई एक आम खा ले तो फिर उसे पूरे दिन कुछ खाने की जरूरत नहीं होती
सेरहा	यह काफी बड़ा होता है। एक आम का वजन एक किलो के बराबर होता है
कर्पूरिया-धुमनाहा	कर्पूरिया आम से कपूर और धुमनाहा से धुम्मन की खुशबू आती है। दोनों आम अधिक नहीं खाए जा सकते
लक्ष्मेश्वर भोग	दरभंगा के राजा लक्ष्मेश्वर सिंह के नाम पर विकसीत उस किस्म में काफी गूदा होता है। यह बहुत मीठा होता है।
सफेदा	यह मिथिला के आम की सबसे स्वादिष्ट किस्म है। इसमें गूदा ज्यादा होता है और खुशबू भी अच्छी होती है। बीज और छिलके बहुत पतले होते हैं।
चोरबा अभोग इसे चुराने	जैसा की नाम से जाहिर है, यह चुराकर खाने वाले को भोग नहीं होता। कहा जाता है कि चोर का प्रयास करते, पर चुरा नहीं पाते थे। यह केरबी प्रजाति का है।
डोमा बंबई, और सब्जा बंबई नेजरा बंबई	ये बंबई आम की स्थानीय प्रजाति हैं। इसमें गूदा और रस दोनों पर्याप्त होता है। यह फलता अधिक है 3 से 4 क्विंटल फलता है। सबसे पहले पकनेवाली किस्म है। इसका आकर और लम्बा होता है, जो डोमा के बाद पकता है।
सेरहा, सजमनिया, शुकुल	ये अचार बनाने में ज्यादा इस्तेमाल होते हैं।
मुफर्रस	यह अलफांसों की स्थानीय किस्म है।

बीजू आमों की उपयोगिता बढ़ाने के उपाय

अगर बीजू आम की प्रोसेसिंग की व्यवस्था की जाए तो ग्रामीणों को और लाभ हो सकता है। इस आम से अमावट, आमचूर तथा बेहतरीन अचार तथा अन्य कई उत्पाद बनाया जा सकता है। इसके अलावा बीजू आम की फ्रूटी काफी स्वादिस्ट होती है। किण्वन के जरिए फलों और सब्जियों का संरक्षण और अचार बनाना काफी प्राचीन विधियाँ हैं जिन्हें पूरी दुनिया में अपनाया जाता है। भारत में अचार वाणिज्यिक स्तर पर बनाया जाता है और यह हाल ही के वर्षों में एक प्रमुख खाद्य उद्योग के रूप में उभरकर आया है। जितने भी प्रकार के अचार बनाए जाते हैं, उनमें बीजू आम के अचार की घरेलू तथा अंतर्राष्ट्रीय दोनों बाजारों मांग होती है।

सामान्यतया, अचार कच्चे या अपरिपक्व आम के छिलकों के साथ या उनके बिना बनाया जाता है और उसमें अनेक प्रकार के फ्लेवर स्वाद और गुणवत्ता के लिए नमक तथा विभिन्न प्रकार के मसालों का इस्तेमाल किया जाता है। आम के उत्पादन के लिए अम्लीय और रेशायुक्त आम किस्में ज्यादा अच्छी होती है। अचार बनाने के लिए कच्चे आम फसल मौसम के 3-4 महीनों की छोटी अवधि के दौरान ही उपलब्ध होते हैं। इसलिए इन कच्चे आमों को पूरे वर्ष के दौरान अचार उत्पादन के लिए लंबी अवधि तक परिरक्षित किए जाने की आवश्यकता होती है। पारंपरिक रूप से आम के टुकड़ों में सूखा नमक मिलाकर भंडारित किया जाता है। इस विधि के अनुसार आम के टुकड़ों पर नमक के अनेक परते जम जाति हैं। इस विधि में अचार के

रंग, टेक्चर और सूक्ष्म जीवाणु की हानि आमतौर पाई जाती है। इन समस्याओं से निजात पाने के लिए भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, हेस्सरघाटा, बेंगलुरू में एक ब्रिनिंग प्रिजरवेशन विधि विकसित की गई है।

बीजू आम का सरंक्षण

आज जहाँ फलों की व्यावसायिक खेती के लिये किसानों ने विदेशी किस्मों की खेती को अपनाया है। वहीं कई किसान आम की देसी किस्म बीजू के संरक्षण का काम कर रहे हैं। कई किसान अपने बाग पर 3500 से भी ज्यादा बीजू आम के पेड़ भी लगाये हुये हैं तथा किसानों का मानना है कि ग्राफ्टिड विधि से फलों की बागवानी करना बेहद आसान होता है। खासकार जब फल, लकड़ी और पत्तो के लिहाज के फलों की बागवानी की बात आती है, तो आम की पुरानी किस्म बीजू का कोई प्रतियोगी नहीं है। बता दें कि बीजू आम शुगर के रोगी यानी डायबिटिक मरीजों के लिये काफी फायदेमंद होता हैं। बिहार के अररिया जिले का कई फार्म बीजू आम के अलावा नीम, जामुन, कटहल, पीपल, आँवला समेत अनेकों तरह के फलदार पेड़ों से भरपूर और चारों तरफ से पोफ्लर के पेड़ों से घिरा हुआ हैं।
जाहिर है कि फलों के बागों के बीच काफी मात्रा में खाली जगह बच जाती है, जिसका लगभग कोई भी इस्तेमाल नहीं होता। ऐसे सघन बागवानी वाले इलाकों में हल्दी की पैदावार ली जा सकती है। बीजू आम के पेड़ों के बीचों-बीच तालाब भी बनायीं जा सकती है, जिसमें मछली पालन के साथ-साथ सिंघाड़े और मखाने की खेती जा सकती है। बीजू आम के संरक्षण से पर्यावरण संरक्षण के साथ-साथ पानी की बचत भी होती है। जानकारों की मानें तो अचार व चटनी निर्माण में बीजू आम का कोई विकल्प ही नहीं है। बंगाल में आम का अचार किसानों के लिए बड़ा आर्थिक सहारा हैं, तमाम नेगेटिव पहलुओं के बावजूद बीजू आम अब भी यहाँ का प्रमुखतम फल बना हुआ है। लोगों का मानना है कि बीजू आमों के संरक्षण से सीमांचल के साथ साथ पुरे बिहार में मैंगों जूस, अंचार व चटनी जैसे मध्यम उद्योगों की बड़ी श्रृंखला शरू की जा सकती है।

भले ही सबौर कृषि विश्वविद्यालय आम की 270 प्रजातियों के पौधों को संरक्षित करने में लगा है बावजूद इसके आम की कई प्रजातियाँ विलुप्त हो रही हैं या कृषकों के बागीचे से गायब हो रही हैं। इनमें बीजू आम के कई प्रकार शामिल हैं। इसकी मुख्य वजह आम का बढ़ता बाजार और लोगों की पंसद है। मालदह समेत अन्य गुद्देदार आम ग्राहकों को अधिक भा रहे हैं जबकि चूसनेवाले और रसदार आम कम थाली में ही दिखते हैं। बिहार के सिवान जिले के भगवानपुर हाट प्रखंड के सडीहा गाँव निवासी श्री राम अयोध्या प्रसाद ने छोटे आकार के बीजू आम किस्म का संरक्षित किया है, जिसमे एक मंजर में कई आम पाए गए हैं। इसी तरह सारण जिले के सोनपुर के भरपुरा टोला के आम उत्पादन श्री पुनीत सिंह डांगी को मझौला आकार बीजू आम किस्म का संरक्षण कर रहे है। इनके पास छोटा आकार के भी बीजू आम किस्म के साथ साथ सीपिया आम का बेहतर उत्पादन कर रहें हैं। वही के श्री मनोज डांगी के पास 16 गज की भूमि में आम की बागवानी है जिसमें अभी 58 विभिन्न किस्म के आम के पेड़ है।

निष्कर्ष

बीजू आम स्वास्थ के लिए सेहतमंद होता है, इसके लकड़ियो का उपयोग जीवन के विभिन्न आयामों में किया जाता है। इसके जड़े गहरी होने के कारण खाद एवं उर्वरक की आवश्यकता कम पड़ती है। ये दिर्घायु होते है तथा ऊॅंची नीची सतह पर आराम से लगाई जाती है। अतः बीजू आम का संरक्षण अति आवश्यक है भविष्य मे इसने उन्नत प्रजातियाँ विकसित की जा सकती है।

❖❖

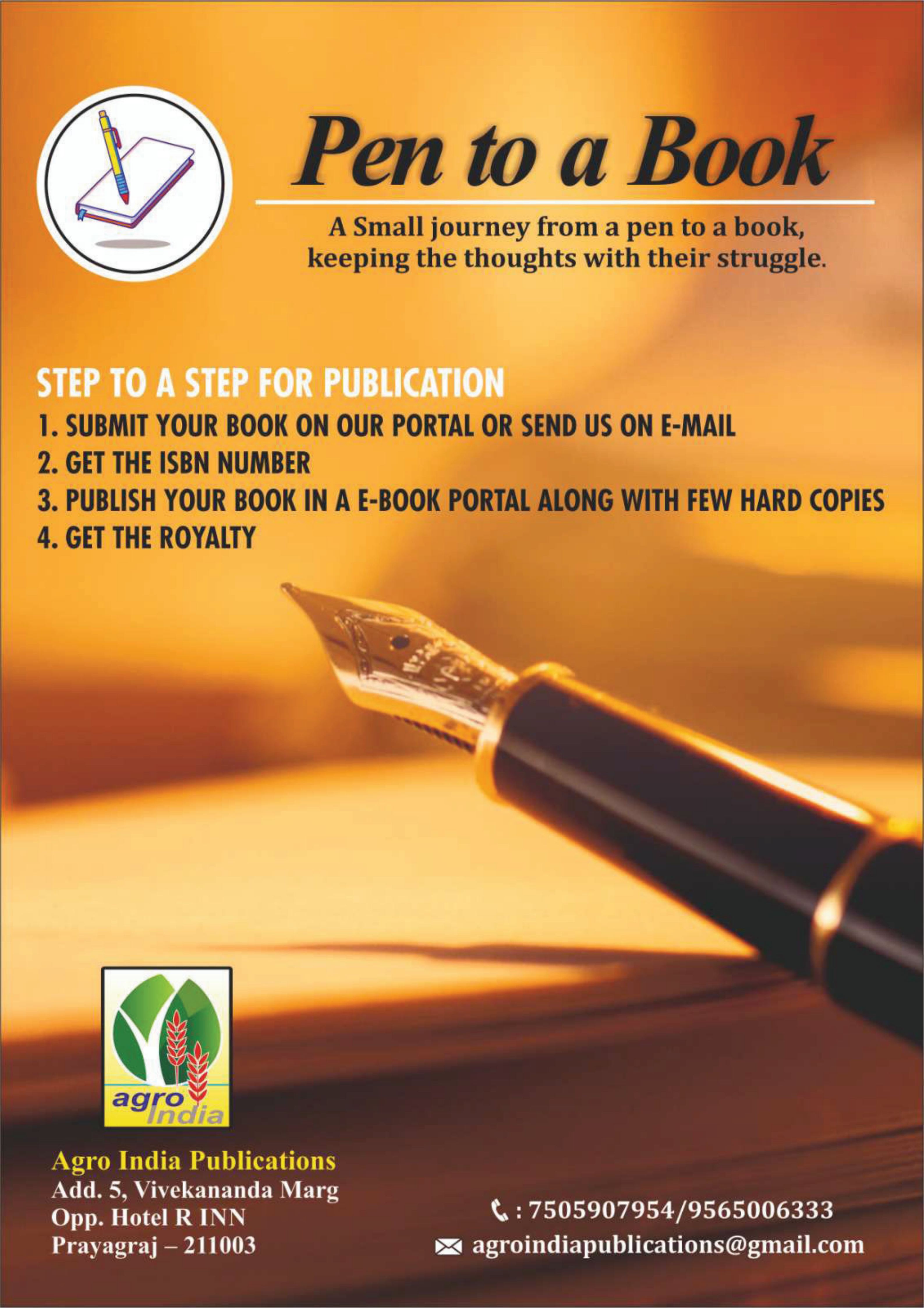
Pen to a Book
A Small journey from a pen to a book,
keeping the thoughts with their struggle.
STEP TO A STEP FOR PUBLICATION
1. SUBMIT YOUR BOOK ON OUR PORTAL OR SEND US ON E-MAIL
2. GET THE ISBN NUMBER
3. PUBLISH YOUR BOOK IN A E-BOOK PORTAL ALONG WITH FEW HARD COPIES
4. GET THE ROYALTY
agro India
Agro India Publications
Add. 5, Vivekananda Marg
Opp. Hotel R INN
Prayagraj – 211003
: 7505907954/9565006333
agroindiapublications@gmail.com

ISSN No. 2583-3316

भूजल संचयन और कम पानी की सिंचाई विधियाँ

नरेन्द्र कुमार[1*], देवेंद्र सिंह जाखड़[2], सुनील कुमार[3], हरदीप कलकल[4] एवं ओम प्रकाश[5]

[1,2,3एवं4]कृषि विज्ञानं केंद्र, सिरसा एवं [5]कृषि विज्ञानं केंद्र, फतेहाबाद, हरयाणा

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरयाणा

पत्राचारकर्ता: narendergoswami17@gmail.com

परिचय

सिंचाई की जल संरक्षक विधियाँ और कृषि विकास किसी भी देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी होती है। सघन और सफल फसल उत्पादन में पानी एक अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण घटक है, जिसका कोई भी दूसरा विकल्प नहीं है। वस्तुतः यह कटु सत्य है कि सम्पूर्ण विश्व में जल ही ऐसा संसाधन है, जो निरंतर चिंता का विषय बना हुआ है। वर्तमान में जल संकट के कई कारण हैं, जैसे जनसंख्या वृद्धि, कम होती वर्षा का परिमाण, बढ़ता औद्योगिकीकरण, बढ़ता शहरी-करण, वृक्षों की अंधाधुंध कटाई, विलासिता, आधुनिकतावादी एवं भोगवादी प्रवृत्ति, स्वार्थी प्रवृत्ति एवं जल के प्रति संवेदनहीनता, भूजल पर बढ़ती निर्भरता एवं इसका अत्यधिक दोहन, परम्परागत जल संग्रहण तकनीकों की उपेक्षा, समाज की सरकार पर बढ़ती निर्भरता व कृषि में बढ़ता जल का उपभोग आदि।

जल संचयन

वर्षा का ज्यादातर पानी सतह की सामान्य ढ़ालों से होता हुआ नदियों में जाता है तथा उसके बाद सागर में मिल जाता है (वोहलए ई., 2020)। वर्षा के इस बहुमूल्य शुद्ध जल का भूमिगत जल के रूप में संरक्षण अति आवश्यक है। भूमिगत जल कुएँ, नलकूप आदि साधनों द्वारा खेती और जनसामान्य के पीने हेतु काम आता है।

भूमिगत जल, मृदा (धरती की ऊपरी सतह) की अनेक सतहों के नीचे चट्टानों के छिद्रों या दरारों में पाया जाता है। उपयोगिता की दृष्टि से भूमिगत जल, सतह पर पीने योग्य उपलब्ध जल संसाधनों के मुकाबले अधिक महत्त्वपूर्ण है। भारत के लगभग ८० प्रतिशत गाँव, कृषि एवं पेयजल के लिये भूमिगत जल पर ही निर्भर है और बुरी खबर यह है कि विश्व भूमिगत जल अपना अस्तित्व तेजी से समेट रहा है (गुप्ता,2008)। अन्य विकासशील देशों में तो यह स्थिति भयावह है जहाँ जल स्तर लगभग तीन मीटर प्रति वर्ष की रफ्तार से कम हो रहा है, पर भारत में भी स्थिति कुछ बेहतर नही हैं। केन्द्रीय भूजल बोर्ड के अन्वेषणों के अनुसार भारत के भूमिगत जलस्तर में 20 सेंटीमीटर प्रतिवर्ष की औसत दर से कमी हो रही है, जो हमारी विशाल जनसंख्या जरूरतों को देखते हुए गहन चिंता का विषय है (बंसिल, 2004)।

न तो हर प्रकार की मिट्टी, पानी को जल ग्रहण करने वाले इन चट्टानों तक पहुँचाने में सक्षम होती है और न ही हर प्रकार की चट्टानें पानी को ग्रहण कर सकती है। कायांतरित अथवा आग्नेय चट्टानों की अपेक्षा अवसादी चट्टानें अधिक जलधारक होती है, जैसे कि बलुआ चट्टानें (सेली, 2000)। कठोर चट्टानों में जल-संग्रहण कर सकने योग्य छिद्र ही नहीं होते। हाँ यदि ग्रेनाइट जैसे कठोर पत्थरों ने किसी कारण दरारें उत्पन्न हो गयी हों तो वे भी भूमिगत जल का स्वयं में संग्रहण करते हैं। जिन भूमिगत चट्टानों में छिद्र अथवा दरारें होती हैं, उनमें यह पानी न केवल संग्रहित हो जाता है, अपितु एक छिद्र से दूसरे छिद्र होते हुए अपनी हलचल भी बनाये रखता है, और

ऊँचे से निचले स्थान की ओर प्रभावित होने जैसे सामान्य नियम का पालन भी करता है। मृदा से चट्टानों तक पहुँचने की प्रक्रिया में पानी छोटे-बड़े प्राकृतिक छिद्रों से छनता हुआ संग्रहित होता है। अतः इसकी स्वच्छता निर्विवाद है। किन्तु यही पानी यदि प्रदूषित हो जाये, तो फिर बहुत बड़े जल संग्रहण को नुकसान पहुँचा सकता है, क्योंकि ये भूमिगत जलसंग्रह बड़े या आपस में जुड़े हो सकते हैं (हैम्स, एट, अल., 1998)।

वर्षाजल और सतही जल का आपसी संबंध भी जानना आवश्यक है। नदियों में बहने वाला जल केवल वर्षाजल अथवा ग्लेशियर से पिघल कर बहता हुआ पानी ही नहीं है। नदी अपने जल में भूमिगत जल से भी योगदान लेती है, साथ ही भूमिगत जल को योगदान देती भी है। ताल, झील और बाँधों के इर्द-गिर्द भूमिगत जल की सहज सुलभता का कारण यही है कि ये ठहरे हुए जलस्रोत आहिस्ता-आहिस्ता अपना पानी इन भूमिगत प्राकृतिक जल संग्रहालयों को प्रदान करते रहते हैं। इस प्रकार पृथ्वी के ऊपर पाए जाने वाले जलस्रोत और भूमिगत जलस्रोत एक दूसरे की सहायता पर निर्भर होते हैं। वर्षा का जल यदि संग्रहित चट्टानों तक पहुँचाया जाये, तो भूमिगत जलाशयों को भरा जा सकता है। प्रकृति अपने सामान्य क्रम में यह कार्य करती रहती है। किंतु आज जब यह समस्या विकराल रूप ले चुकी है, तो मनुष्य के लिये अभियान बनाकर यह कार्य करना आवश्यक हो गया है। इस अभियान का प्रमुख उद्देश्य जल को जीवन मान कर बचाया जाना और सरल वैज्ञानिक विधियों द्वारा इसे भूमि के भीतर पहुँचाया जाना है, जिसमें हम सभी को जुटना होगा।

भूमिगत जल के संचयन एवं संरक्षण हेतु प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्तर पर निम्न कार्य अवश्य ही करना चाहिए

• वर्षाकाल में मकानों की छत पर गिरे जल को जमीन में पहुँचाने की व्यवस्था बना दी जाए (थॉमस और मार्टिंसन,2007)।

• आँगन को कच्चा रखने की पुरानी परम्पराओं का पालन किया जाए (बोस, 2012)।

• कम से कम एक वृक्ष अवश्य लगाया जाए (वैन और कीनन, 2007)।

• पानी की बर्बादी को रोका जाए, जैसे कि उपयोग के बाद नल को बंद कर दिया जाए (हंट, 2007)।

• सरकारी प्रयास और वैज्ञानिक शोधों से इस समस्या का आंशिक समाधान ही निकलेगा, किंतु यदि सामान्य जन इस बात को समझ लें, तो बूँद-बूँद से घड़ा भरते देर नहीं लगेगी। बूँद-बूँद से घड़ा भरता है और बारिश के पानी से भूगर्भ जल का स्तर ऊँचा होता है। आकाशीय पानी को भूगर्भ स्रोत से जोड़ने के लिये जगह-जगह पर रिचार्ज पिट की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि-अतिवृष्टि में भी पानी बह कर बर्बाद नहीं हो। वर्षाजल संधारण जरूरी भी है और जिम्मेदारी भी है।

कम पानी की सिंचाई पद्धतियाँ

वैज्ञानिक ने निरंतर अनुसंधान द्वारा ऐसी सिंचाई विधियां विकसित की गई हैं, जिनसे पानी व ऊर्जा की न केवल बचत होती है, वरन, कृषि उपज भी अधिक प्राप्त होती है। ये पद्धतियाँ हैं फव्वारा एवं बूँद-बूँद सिंचाई प्रणाली (बार्कर,एट, अल.,2024)। इन पद्धतियों का सबसे बड़ा लाभ यह है कि पानी का ह्रास नहीं होता, क्योंकि पानी पाइप द्वारा प्रवाहित होता है तथा फव्वारा या बूँद-बूँद रूप में दिया जाता है। इन पद्धतियों से 75 से 95 प्रतिशत तक पानी खेत में फसल को मिलता है, जबकि प्रचलित सतही विधियों में 40 से 60 प्रतिशत ही फसल को मिल पाता है। इतना ही नहीं फव्वारा एवं बूँद-बूँद सिंचाई पद्धतियों की खरीद पर सरकार 50 से 75 प्रतिशत तक अनुदान भी देती है।

फव्वारा पद्धति व बूँद-बूँद सिंचाई पद्धति का निमनलिखत वर्णन है।

अ) फव्वारा पद्धति

इस पद्धति में पानी पाइप व फव्वारों द्वारा वर्षा के रूप में दिया जाता है। यह विधि असमतल भूमि के लिये अति उपयुक्त है। यह विधि 2 से 10 किग्रा/सेमी^{2}, दाब पर काम करती है। नोजल का व्यास 1.5 मि.मी. से 40 मि.मी. तक होता है। इनसे 1.5 लीटर/सेकेंड से 50 लीटर/सेकेंड की दर से पानी फव्वारे के रूप में निकलता है। एक फव्वारे द्वारा 6 से 160 मीटर तक क्षेत्रफल सिंचित किया जा सकता है। हमारे देश में बहुधा 6 से 15 मीटर की दूरी तक पानी छिड़कने के सिंचाई फव्वारे उपलब्ध हैं। इन्हें चलाने के लिये 2.5 किग्रा/से.मी.^{2} दबाव की जरूरत होती है। यह विधि बाजरा, गेहूँ, सरसों व सब्जियों के लिये अति उपयुक्त पाई गई है। कम लवणीय जल होने पर भी यह विधि उपयोग में लाई जा सकती है, परंतु अधिक लवणीय जल होने पर यह अनुपयुक्त है। इस विधि द्वारा नाइट्रोजन उर्वरक, कीट एवं कवकनाशक दवाइयों का भी छिड़काव किया जा सकता है।

ब) बूँद-बूँद सिंचाई

इस विधि से भी पानी पाइप एवं ड्रिपर इत्यादि से दिया जाता है। सामान्यता एक ड्रिप 2 से 10 लीटर प्रति घंटा पानी देता है। इस विधि में मुख्य पाइप 50 मि.मी, उप-मुख्य पाइप 35

मि.मी तथा सिंचाई पाइप 12 से 16 मि.मी, व्यास के होते हैं। इस विधि में सिंचाई वाली पाइप भूमि सतह से 30 से 40 से.मी, गहरा रखकर भी सिंचाई की जा सकती है। ड्रिप बंद होने की समस्या को एक प्रतिशत गंधक के तेजाब अथवा नमक के तेजाब (हाइड्रोक्लोरिक अम्ल) का घोल बनाकर ड्रिपर को धोने से दूर की जा सकती है। इस विधि से मजदूरी, पानी, बिजली तथा रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है यह विधि रेतीली मिट्टी के लिये बहुत ही उपयुक्त है।

इन पद्धितियों से 30 से 50 प्रतिशत तक पानी की बचत व डेढ़ से दो गुना अधिक पैदावार मिलती है। बूँद-बूँद सिंचाई थोड़ी महँगी है। अतः दो पंक्तियों के बीच एक ड्रिप लाइन 1.20 से 1.50 मीटर की दूरी डालने से 50 प्रतिशत खर्चा कम किया जा सकता है। इस विधि द्वारा लवणीय पानी भी सब्जियों में दिया जा सकता है।

सिंचाई की कोई भी विधि क्यों न हो, वाष्पोत्सर्जन की अपेक्षा वाष्पीकरण की हानि कम होनी चाहिए। पानी इस तरह से देना चाहिए, जिससे अंतः भूमि सतह में कटाई के समय पानी न के बराबर रहे। इसी प्रकार सिंचाई जल की मात्रा इतनी भी ज्यादा न रहे कि भूमि की अंतः सतह में पानी चला जाए। उपयुक्त वर्णित सिंचाई प्रबंधन से हम प्रति इकाई पानी से अधिक पैदावार ले सकते हैं। अपने जलस्रोतों को लम्बे समय तक प्रयोग में ले सकते है। साथ ही भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रख सकते हैं। हमारा दूसरी हरित क्रांति का सपना पानी का सदुपयोग करने से ही पूरा होगा।

लवणीय जल से भी सिंचाई की जा सकती है, इसको उपयुक्त बनाने के कुछ सुझाव दिए गए हैं, जिन्हें अपनाकर किसान भाई उपज में लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

क. लवण सहनशील फसलें, जैसे-गेहूँ, बाजरा, जौ, पालक एवं सरसों, का अधिक उपयोग करें।

ख. सिंचाई करते समय फव्वारा एवं बूँद-बूँद सिंचाई प्रणाली को अपनाएँ।

ग. जल निकास की समुचित व्यवस्था रखें एवं हरी खाद का अधिक प्रयोग करें ।

घ. वर्षा के समय खेत में मेड़बंदी कर वर्षा के पानी को एकत्रित करें, जिससे लवण धुलकर बाहर आ जाएंगे।

ड. सिंचाई की संख्या बढ़ाएँ तथा प्रति सिंचाई कम मात्रा में जल का प्रयोग करें।

च. यदि पीने योग्य पानी की अच्छी सुविधा उपलब्ध है, तो लवणीय जल तथा मीठे जल दोनों को मिलाकर भी सिंचाई की जा सकती है।

अतः आशा की जाती है कि किसान भाई वर्षाजल का भूजल के रूप में संचयन करते हुए सिंचाई की उन्नत विधियों को अपनाकर कृषि में हो रहे जल अपव्यय को रोक सकते हैं।

निष्कर्ष

जल संचयन और कम पानी की सिंचाई पद्धतियों के प्रभावी उपयोग से न केवल कृषि उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है बल्कि जल संकट से भी निपटा जा सकता है। इस लेख में यह भी सुझाया गया है कि किसानों को इन तकनीकों का सही तरीके से प्रशिक्षण और समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए ताकि वे जल संरक्षण के महत्व को समझ सकें और उसे अपने कृषि कार्यों में प्रभावी ढंग से लागू कर सकें।

संदर्भ

• वोहल, ए ई. (2020). परिदृश्य में नदियाँ. जॉन विली एंड संस।

• गुप्ता, ई.के. (एड.). (2008). भारत में जल संकट. अटलांटिक प्रकाशक।

• बंसिल, पी.सी. (2004). भारत में जल प्रबंधन. संकल्पना प्रकाशन कंपनी।

• सेली, आर.सी. (2000). अनुप्रयुक्त तलछट विज्ञान. एल्सेवियर

• हैम्स, वाई.वाई., मैटलास, एन.सी., लैंबर्ट, जे.एच., जैक्सन, बी.ए., और फेलो, जे.एफ. (1998)। जल आपूर्ति प्रणालियों पर आक्रमण की संवेदनशीलता को कम करना। जर्नल ऑफ इंफ्रास्ट्रक्चर सिस्टम्स, 4(4), 164-177।

• थॉमस, टी.एच. और मार्टिंसन, डी.बी. (2007)। छत जल संचयन।

• बोस, एस. (2012)। कोलकाता के चितपुर में ऐतिहासिक इमारतें शहरी संरक्षण और योजना के माध्यम से समस्याएं और संभावनाएं। डिस्प-द प्लानिंग रिव्यू, 48(1), 68-82।

• वैन डिज्क,ए.आई. और कीनन आर. जे. (2007)। परिप्रेक्ष्य में जंगल और पानी लगाया। वन पारिस्थितिकी और प्रबंधन, 251(1.2),1.9।

• हंट, सी.ई. (2007)। प्यासा ग्रहः टिकाऊ जल प्रबंधन के लिए रणनीतियाँ। अकादमिक फाउंडेशन।

• बार्कर, बी., स्टीवर्ट, एस., और नेल्सन, एम. (2024)। स्प्रिंकलर और ड्रिप सिस्टम में सिंचाई अनुप्रयोग एकरूपता बनाए रखना और सुधारना।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

वृक्षारोपण हेतु स्थान का चयन, मृदा परीक्षण तथा मृदा व जल संरक्षण के उपाय

नकुल राव रंगारे*, रोहित कुमार एवं विजय बगारे

फल विज्ञान विभाग, मंगलायतन विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: nrrangare@gmail.com

परिचय

वृक्षारोपण वह प्रक्रिया है, जिसमें वृक्षों के पौधों को भूमि सुधार या भू-निर्माण उद्देश्यों के लिए रोपित किया जाता है। वृक्षारोपण बहुत आवश्यक है क्योंकि पेड़ पर्यावरण को ऑक्सीजन प्रदान करते हैं और हवा की गुणवत्ता को बेहतर बनाते हैं। वृक्षारोपण से पर्यावरण को संतुलित रखने में मदद मिलती है, जिससे पेड़.पौधे प्रकाश संश्लेषण के ज़रिए कार्बन डाइऑक्साइड को कम करते हैं और ऑक्सीजन देते हैं, जिससे से जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने में मदद मिलती है तथा मिट्टी के कटाव को रोका जा सकता है, इससे जैव विविधता को बढ़ावा मिलता है और यह जल संरक्षण में मदद करती

वन /फल रोपण के लिए क्षेत्र चयन कैसे करें

वन या फल रोपण के लिए क्षेत्र का चयन करना एक महत्वपूर्ण कदम है, क्योंकि यह पेड़ों और पौधों की वृद्धि और उनके उत्पादन को सीधे प्रभावित करता है।

मिट्टी की गुणवत्ता

क) मिट्टी का प्रकारः क्षेत्र की मिट्टी को जाँचें। लोमी मिट्टी (clay loam) फल रोपण के लिए उत्तम मानी जाती है क्योंकि यह जलधारण क्षमता में अच्छी होती है।

ख) पी एच स्तरः मिट्टी का पी एच (pH) स्तर भी महत्वपूर्ण है। ज्यादातर फलों के पेड़ थोड़ी अम्लीय से थोड़ी क्षारीय मिट्टी में अच्छे से उगते हैं। जिसका पीएच स्तर 6-7 के बीच होना चाहिए।

ग) पोषक तत्वः मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा होनी चाहिएए जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटैशियम। अगर मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी है, तो उर्वरकों का उपयोग किया जा सकता है।

घ) जलवायु और तापमान

ड़) तापमानः जिस क्षेत्र का चयन कर रहे हैं वहाँ का

तापमान उस पेड़ की आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए जिसे आप रोपण करने वाले हैं। कुछ पेड़ गर्म जल वायु में बेहतर होते हैं, जबकि कुछ ठंडे जलवायु में।

च) वर्षाः वर्षा की मात्रा भी महत्वपूर्ण है। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में जल निकासी की सही व्यवस्था होनी चाहिए ताकि जड़ें सड़ें नहीं और उनको पर्याप्त मांत्रा में वर्षा प्राप्त हो सके।

छ) धूप की उपलब्धताः अधिकांश फलों के पेड़ों को अच्छे उत्पादन के लिए प्रतिदिन 6-8 घंटे की सीधी धूप की आवश्यकता होती है।

जल निकासी और जल स्त्रोत

क) जल निकासी की सुविधाः क्षेत्र की जल निकासी प्रणाली अच्छी होनी चाहिए ताकि पानी अधिक समय तक मिट्टी में न रुके। इससे पौधों की जड़ों को सड़ने से बचाया जा सकता है।

ख) सिंचाई का स्त्रोतः पास में किसी जल स्त्रोत की उपलब्धता, जैसे कि नदी, तालाब या बोरवेल सुनिश्चित करें। इससे सूखे के समय में सिंचाई की सुविधा होती है।

क्षेत्र की स्थलाकृति (टोपोग्राफी)

क) समतल भूमिः समतल भूमि को प्राथमिकता दें, क्योंकि यहाँ पर मिट्टी और जल का वितरण समान रहता है, जिससे पेड़ों की जड़ें अच्छी तरह फैलती हैं।

ख) ढलान वाली भूमिः अगर ढलान वाली भूमि का चयन करते हैं, तो जल निकासी की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। साथ ही, रोपण के लिए कांगटूर पद्धति (Contour planting) का पालन करें जिससे मिट्टी का कटाव कम हो।

रोग और कीट नियंत्रण

क) रोग प्रतिरोधक क्षमताः क्षेत्र का चयन करते समय इस बात का ध्यान रखें कि वहाँ पर पेड़ पौधों के लिए रोग और कीटों का अधिक खतरा न हो। इसके लिए आसपास के इलाकों का अवलोकन करें।

ख) पौध संरक्षणः चयनित क्षेत्र में रोग और कीटों से सुरक्षा के लिए उपयुक्त उपायों की व्यवस्था होनी चाहिए, जैसे कि जैविक कीटनाशक का उपयोग।

अन्य कारक

क) आस-पास का वातावरणः अगर आस पास के क्षेत्र में कोई प्रदूषण स्त्रोत (जैसे कि कारखाने, रासायनिक संयंत्र आदि) हो, तो उस क्षेत्र का चयन न करें। यह पेड़ों की गुणवत्ता और उत्पादन पर बुरा प्रभाव डाल सकता है।

ख) पहुँच और परिवहन सुविधाः चयनित क्षेत्र तक पहुँच और वहाँ से फलों को बाजार तक पहुँचाने के लिए अच्छी परिवहन सुविधा होनी चाहिए।

वन /फल रोपण के लिए मिट्टी परीक्षण और संरक्षण

वन या फल रोपण के लिए मिट्टी की जाँच और संरक्षण बहुत महत्वपूर्ण है। यह सुनिश्चित करता है कि पौधों को आवश्यक पोषक तत्व मिलें और वे अच्छी तरह से विकसित हों।

मिट्टी परीक्षण क्यों आवश्यक है

क) पोषक तत्वों की जानकारीः मिट्टी परीक्षण से हमें यह पता चलता है कि मिट्टी में कौन-कौन से पोषक तत्व (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम) मौजूद हैं और किनकी कमी है। इससे हम समझ सकते हैं कि पौधों की बेहतर वृद्धि के लिए किन उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए।

ख) पीएच स्तरः मिट्टी का पीएच स्तर जानने के लिए भी परीक्षण जरूरी है। पीएच स्तर से पता चलता है कि मिट्टी अम्लीय है, क्षारीय है या तटस्थ है। फलों के पौधे सामान्यतः तटस्थ या थोड़ी अम्लीय मिट्टी में अच्छे से उगते हैं।

ISSN No. 2583-3316

ग) जल धारण क्षमताः मिट्टी की जल धारण क्षमता भी परीक्षण के दौरान पता चलती है। इससे हमें यह जानकारी मिलती है कि किस प्रकार की सिंचाई व्यवस्था की आवश्यकता है।

मिट्टी परीक्षण कैसे करें

क) मिट्टी का नमूना लेनाः सबसे पहले जिस क्षेत्र में आप रोपण करना चाहते हैं, वहाँ से मिट्टी का नमूना लें। यह नमूना 6-8 इंच की गहरा से लिया जाना चाहिए।

ख) नमूने की पैकेजिंगः मिट्टी के नमूने को साफ और सूखे प्लास्टिक बैग में रखें और उस पर नमूना लेने की तिथि और स्थान की जानकारी लिखें।

ग) परीक्षण के लिए भेजनाः नमूना एक मान्यता प्राप्त प्रयोगशाला में भेजें जहाँ इस का परीक्षण किया जा सके। आपको रिपोर्ट मिलेगी, जिसमें मिट्टी की पोषक तत्वों की स्थिति और अन्य जानकारी होगी।

घ) रिपोर्ट का विश्लेषणः प्रयोगशाला द्वारा दी गई रिपोर्ट को ध्यान से पढ़ें और उस में दिए गए सुझावों का पालन करें। अगर मिट्टी में कोई कमी है, तो उसकी पूर्ति के लिए आवश्यक उर्वरक या सुधारक का उपयोग करें।

मिट्टी संरक्षण के उपाय

क) कृत्रिम खाद का संतुलित उपयोगः उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग मिट्टी की उर्वरता को घटा सकता है। इसलिए, संतुलित और जरूरत के अनुसार ही उर्वरकों का उपयोग करें। जैविक खाद और कम्पोस्ट का प्रयोग करना ज्यादा फायदेमंद होता है।

ख) पानी की उचित व्यवस्थाः अत्यधिक सिंचाई से मिट्टी का कटाव हो सकता है, जिससे मिट्टी की उपजाऊ परत खत्म हो जाती है। ड्रिप सिंचाई और स्प्रिंकलर जैसी विधियों का उपयोग करें जिससे पानी की बचत हो और मिट्टी का कटाव न हो।

ग) मल्चिंगः मल्चिंग तकनीक का उपयोग करें जिसमें मिट्टी की सतह पर जैविक पदार्थ (जैसे पत्तियाँ, भूसा) की परत डाली जाती है। यह मिट्टी को नमी बनाए रखने और खरपतवार नियंत्रण में मदद करता है।

घ) फसल चक्रः फसल चक्र का पालन करेंए जिससे मिट्टी में एक ही प्रकार के पोषक तत्वों की कमी न हो। विभिन्न फसलों का रोपण करने से मिट्टी में संतुलन बना रहता है।

ड़) कंटूर खेतीः ढलान वाली जमीन पर कंटूर खेती (Contour farming) अपनाएँ। इससे पानी का बहाव धीमा होता है और मिट्टी का कटाव कम होता है।

च) मिट्टी की ढलान पर जुताई न करेंः ढलान वाली जमीन पर जुताई करने से मिट्टी का ऊपरी भाग तेजी से कटता है। इसलिए, ढलान की दिशा में जुताई करने से बचें।

मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए जैविक उपाय

क) हरी खादः खेत में हरी खाद वाली फसलें (जैसे दलहनी फसलें) उगाकर उन्हें जुताई के समय मिट्टी में मिला दें। इससे मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ती है।

ख) केंचुआ खादः केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट) का उपयोग करें। यह मिट्टी की संरचना को सुधारता है और पोषक तत्वों को बढ़ाता है।

ग) रासायनिक कीटनाशकों से बचावः रासायनिक कीटनाशकों का अधिक प्रयोग मिट्टी के जीवाणुओं को नुकसान पहुँचाता है। जैविक कीटनाशकों का उपयोग करें ताकि मिट्टी की जैविकता बनी रहे।

वन/फल रोपण के लिए जल संरक्षण

वन या फल रोपण के लिए जल संरक्षण बेहद जरूरी है। पौधों की अच्छी वृद्धि और फलों के बेहतर उत्पादन के लिए जल की सही मात्रा और गुणवत्ता का होना आवश्यक है। पानी की कमी से पौधों की वृद्धि रुक सकती है। इसलिए जल संरक्षण पर ध्यान देना आवश्यक है।

जल संरक्षण क्यों जरूरी है

क) पानी की कमीः कई क्षेत्रों में पानी की कमी होती है, जिससे पौधों की सिंचाई में समस्या होती है। जल संरक्षण से यह सुनिश्चित होता है कि कम पानी में भी पौधों को पर्याप्त पानी मिल सके।

ख) भविष्य के लिए जल बचतः जलसंरक्षण से भविष्य में पानी की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है। यह सुनिश्चित करता है कि सूखे के समय में भी पर्याप्त पानी उपलब्ध हो।

ग) मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखनाः जलसंरक्षण से मिट्टी की उर्वरता भी बनी रहती है, क्योंकि अधिक पानी के उपयोग से मिट्टी का कटाव और पोषक तत्वों का नुकसान हो सकता है।

जल संरक्षण के तरीके

क) ड्रिप सिंचाईः यह एक प्रभावी विधि है, जिसमें पौधों की जड़ों के पास सीधे पानी पहुँचाया जाता है। इससे पानी की बचत होती है और पौधों को जरूरत के अनुसार पानी मिलता है।

ख) मल्चिंगः मल्चिंग का उपयोग मिट्टी की नमी बनाए रखने के लिए किया जाता है। जैविक पदार्थों, जैसे पत्तियाँ, भूसा आदि को मिट्टी की सतह पर बिछा दिया जाता है, जिससे पानी की वाष्पीकरण दर कम होती है।

ग) वर्षा जल संचयनः वर्षा के पानी को संरक्षित करना जल संरक्षण का एक उत्कृष्ट तरीका है। इससे भूमिगत जल स्तर बढ़ता है और सूखे के समय में पानी की कमी नहीं होती।

घ) फसल चक्रः फसल चक्र का पालन करें, जिससे विभिन्न फसलों को उगाकर पानी की जरूरतों में सामंजस्य बना रहे और जल की बचत हो सके।

ड़) जल पुनर्चक्रणः सिंचाई के बाद बचे हुए पानी को पुनः उपयोग करने के लिए पुनर्चक्रण तकनीक का उपयोग करें। इससे पानी की खपत कम होती है और संसाधनों का अधिकतम उपयोग होता है।

जल संरक्षण के पारंपरिक उपाय

क) चेकडैमः छोटे चेक डैम बना कर बारिश के पानी को एकत्रित करें। यह पानी धीर-धीरे मिट्टी में सोखता है और भूमिगत जलस्तर को बढ़ाता है।

ख) कुंड और तालाबः खेतों में छोटे कुंड या तालाब बनाकर बारिश का पानी संरक्षित करें। इससे सूखे के समय में पौधों की सिंचाई की जा सकती है।

ग) कुण्ड प्रणालीः पहाड़ी क्षेत्रों में कुण्ड प्रणाली का उपयोग किया जाता है, जिसमें पहाड़ों से बहते पानी को खेतों में एकत्रित किया जाता है।

सामुदायिक प्रयास और जागरूकता

क) सामुदायिक जलसंरक्षणः गाँवों या बस्तियों में सामुदायिक जलसंरक्षण परियोजनाएँ चलाकर अधिक से अधिक लोगों को इसमें शामिल करें।

ख) जागरूकता कार्यक्रमः जलसंरक्षण के महत्व के बारे में लोगों को जागरूक करें। स्कूलों, कॉलेजों और गाँवों में कार्यशालाओं और सेमिनारों एवं जागरूकता कार्यक्रम का आयोजन करें।

जल संरक्षण के लिए सरकारी योजनाएँ

क) प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (PMKSY) : यह योजना किसानों को ड्रिप सिंचाई और अन्य जल संरक्षण तकनीकों के लिए सहायता प्रदान करती है।

ख) मनरेगाः मनरेगा के तहत जलसंरक्षण के कार्य, जैसे तालाब और चेकडैम का निर्माण कराए जाते हैं, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में जलसंरक्षण को बढ़ावा मिलता है।

जल की गुणवत्ता बनाए रखना

क) जल का शुद्धिकरणः सिंचाई के लिए उपयोग किए जाने वाले जल का शुद्धिकरण जरूरी है। अशुद्ध जल का उपयोग पौधों के लिए हानिकारक हो सकता है।

ख) रासायनिक उपयोग में सावधानीः उर्वरकों और कीटनाशकों का सावधानी से उपयोग करें ताकि जल स्रोतों का प्रदूषण न हो और पानी की गुणवत्ता बनी रहे।

निष्कर्ष

वृक्षारोपण के लिए स्थान का चयन, मृदा परीक्षण और मृदा एवं जलसंरक्षण के उपाय सही ढंग से किए जाने पर वृक्षों की वृद्धि और पर्यावरणीय संतुलन में सकारात्मक योगदान मिलता है। वृक्षा रोपण के इन विभिन्न पहलुओं पर ध्यान देकर, हम न केवल वृक्षों की उत्पादन क्षमता बढ़ा सकते हैं बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

संदर्भ

• भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR.)2020. वृक्षारोपण और मृदासंरक्षण के सिद्धांत नई दिल्लीः आई सीए आर।

• कुमारी, एस (2018). जल और मृदा संरक्षण के उपायः जयपुरः कृषि विज्ञान प्रकाशन।

• शर्मा, पी,आर (2019), जलवायु और मिट्टी के प्रकार के आधार पर वृक्षा रोपण पटनाः कृषि तकनीकी अध्ययन केंद्र।

• चौधरी, आर. (2021), जलसंरक्षण तकनीकें और उनका प्रभाव भोपाल, पर्यावरण और पारिस्थितिकी संस्थान।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पनीर का फूलः एक परिचय

प्रमिला*, राम प्रवेश प्रसाद, वरूण एवं अनिल कुमार सिंह

पं. दीनदयाल उपाध्याय उद्यान एंव वानिकी महाविद्यालय, पिपराकोठी, पूर्वी चंपारण, बिहार, डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: prmtca@gmail.com

परिचय

तकरीबन ९० प्रतिशत लोगो को नही पता होगा कि पनीर का फूल क्या होते है। यह बात तो हम सब जानते है कि पनीर दूध से बनता हैं और यह किसी पौधे में नही मिलता फिर पनीर का फूल कहाँ से आता हैं और इसे किस काम में लिया जाता हैं, अंग्रेजी में इसे इंडियन चीजमेकर, इंडियनरनैट या वेजिटेवल रैनेट कहते हैं, पनीर के फूल के बीजों का चूर्ण दूध में डालने से दूध फटकर पनीर में तबदील हो जाता हैं, इसी कारण इसे पनीर का फूल कहतें हैं।

पनीर के फूल, (*विथोनिया कोगुलेंस*), सोलेनेसी कुल का औषधि पौधा है। अंग्रेजी में इसे इंडियन चीजमेकर, इंडियनरनैट या वेजिटेवल रैनेट कहते हैं। इसका व्यवसायिक नाम पनीर डोड़ा, पनीर, पनीर डोड़ी या पनीर दूधी हैं। पनीर के फूल के बीजों का चूर्ण दूध में डालने से दूध फटकर पनीर में तबदील हो जाता हैं, इसी कारण इसे पनीर का फूल कहतें हैं। अभी तक इसका बहुतायत से उपयोग नही होता जैसे की अश्वगंधा (विथोनिया सोमनिफेरा) का होता हैं। पनीर के फूल सोलन फैमिली का फुल है, पनीर दूधी बीज से उगने वाला झाड़ीनुमा पौधा हैं, जिसमें बेरी की तरह फल लगते हैं। पनीर का फूल औषधि गुणो की खान हैं, जो कई तरह के स्वास्थ समस्या के इलाज में कारगर साबित हुआ हैं। पनीर के फूल में घाव भरने वाले उलेखनीय गुण होते हैं, इसी कारण ये घाव भरने की प्रक्रिया को तेज करने में सहायक होते हैं। पनीर का फूल एक गुणकारी फूल हैं, जो ह्रदय को स्वास्थ बनाये रखने और इससे संबंधित बीमारियों को रोकने में सहायक हो सकता हैं। इस के फूल में कई महत्वपूर्ण एंटी-इंफलमेटरी गुण होते हैं, जो सूजन जैसे स्थितियो मे राहत दिलाने में मदद कर सकते हैं। इसके हैपेटोप्रोटेक्टीव प्रभाव यकृत को स्वस्थ बनाने में मदद कर सकते हैं। मूत्र मार्ग के माध्यम सें शरीर के अतिरिक्त पानी और नमक को हटाने के लिए, सहायक माना जाता हैं। पनीर का फूल एक स्वादिष्ट स्वस्थ जड़ी-बूटी हैं, जो अग्नाशयी कोशिकाओं को नियंत्रित करने में मदद करती है। साथ ही यह रक्त शर्करा को प्रभावी ढ़ग सें प्रबंधित करने में मदद करती हैं। पनीर का फूल अनिद्रा, घबराहट अस्थमा की समस्या में भी काम आता हैं। पनीर का फूल अफगानिस्तान, पाकिस्तान, नेपाल में उगने वाला एक औषधिय पौधा हैं। इसके फल छोटे-छोटे टमाटर जैसे होते है, जो रसभरी की तरह फूल की पंखुड़ियों में बन्द होते हैं, स्वाद में यह मीठा होता हैं इसके फल का ज्यादातर

उपयोग आयुर्वेदिक दवाईया बनाने में किया जाता हैं। इसकी खेती शुष्क एंव शीतोष्ण जलवायु में बहुतायत सें होता हैं, भारत में इसकी खेती प्रायः पंजाब, हरियाणा, गुजरात, उतराखण्ड, हिमांचल प्रदेश एंव राजस्थान में की जाती हैं।

यह एक बेरी युक्त झाड़ीनुमा पौधा हैं, जो ज्यादातर जंगलो में पाया जाता हैं, जहाँ से इसका उपयोग ज्यादातर किया जाता हैं। इसी कारण इसका अस्तित्व खतरे में हैं, इसका संर्वधन किसानो द्वारा व्यवसायिक खेती करने के लिए किया जा सकता हैं। समान्यतः इस का प्रर्वधन बीज से किया जाता हैं। इसके जड़ का माइकाइजल संगत भसकुलर एवेसकुलर माइराइजल फंगस के साथ देखा गया हैं, इसी कारण यह पौधा सुखा प्रभावित क्षेत्रो में आसानी सें उगाया जा सकता हैं। अश्वगंधा एवं पनीर के फूल एक परिवार के होते हुए इनमे अन्तर हैं। अश्वगंधा का जड़ ज्यादातर उपयोग में लाया जाता हैं जबकि पनीर के फूल का उपरी भाग उपयोग में आता हैं, साथ ही अश्वगंधा नर एवं मादा पुष्प एक ही पौधे पर आते हैं जबकि पनीर के फूल का नर एवं मादा पुष्प युक्त पौधे अलग-अलग पाये जाते हैं। पनीर के पौधे में फूल नवम्बर सें अप्रैल तक आते हैं, जबकि फल लगने का समय जनवरी से मई तक होता हैं। नर एवं मादा पुष्प का अलग-अलग पौधे पर आना एवं पुष्प सें फल बनने के दौरान समय का ज्यादा लगना इसके व्यवसायिक खेती को प्रतिबंधित करता हैं।

अश्वगंधा की खेती इसलिए भी करना मुश्किल हैं, क्योंकि इस के बीज का अंकुरण एंव भाइबलेटी दोनो ही कम होते हैं। इसी कारण इसके प्रर्वधन के लिए उत्तकसंर्वधन एंव बाायोटेक्नोलोजी का उपयोग किया जाना चाहिए।

उत्तक संर्वधन एंव बायोटेक्नोलोजी द्वारा इसको विलुप्त होने से बचाया जा सकता हैं। उत्तक संर्वधन सामान्यतः पौधे से उत्तक प्राप्त कर उसके सतह को स्टेरेलाइज कर वायरस मुक्त मिडिया बनाकर उसमे पहले तने का उद्भव तदोपरांत वृद्धि गुणन कर के जड़ का उद्भव एवं परिस्थिति अनुकूल कर उसके प्रर्दशन के आधार पर स्क्रीनिंग करते हैं।

उत्तक संर्वधन दो तरीके से करते हैं, पहला जमीन में उगे पौधे के गॉठ या इन भीट्रो पौधे के गॉठ का उत्तक ज्यादातर उपयोग में लाया जाता हैं। दूसरा पत्ते या इंटरनोडल उत्तक से कैलस बनाकर इस का संर्वधन किया जाता हैं।

सिंथेटिक बीज तकनीक इनमें इन भीट्रो उत्तक को एलजीनेट बेड में इनके पसूलेट कर लेते हैं। यह तरीका इस के प्रवर्धन रखरखाव एवं जर्मप्लाजम के लेने देने में उपयोगी होता हैं।

पनीर के फूल का उपयोग करने की विधि

रात भर पनीर का फूल पानी में भिंगोकर रखे सुबह खाली पेट छान कर इसके पानी को पीना चाहिए तथा आधे घंटे तक कुछ नही खाना चाहिए। तभी इसका अच्छा लाभ मिलता हैं। पनीर का फूल का उपयोग चूर्ण एवं काढ़ा के रूप में भी किया जाता हैं। दांतो की सफाई के लिए पनीर के फूल की टहनियों को उपयोग किया जाता हैं, इसके तेल का उपयोग त्वचा पर लगाने मे किया जाता हैं, जिससे त्वचा मुलायम रहती है।

पनीर के फूल से होने वाला नुकसान

शरीर को स्वस्थ रखने के लिए पनीर के फूल का अनेको फायदे हैं, लेकिन हर चीज के फायदे एवं नुकसान भी होते हैं उसी तरह पनीर के फूल का फायदा एवं नुकसान दोनो ही होता हैं पनीर के फूल से होने वाले नुकसान निम्न हैं

क. पनीर के फूल का अधिक सेवन से गैस की समस्या हो सकती हैं।

ख. पनीर के फूल का उपयोग दस्त में बिल्कुल नही करना चाहिए।

ग. पनीर के फूल का उपयोग गलत तरिके से करने पर उल्टी की समस्या हो सकती हैं।

घ. पनीर के फूल में इम्यूनोसप्रेसिम क्षमता पाई जाती हैं, जिसके कारण संक्रमण व अन्य बिमारियो का खतरा बढ़ जाता हैं।

ड़. गर्भवती महिलाओं को नुकसान कर सकता है, इस कारण इस का उपयोग डाक्टर की सलाह के अनुसार करनी चाहिए।

निष्कर्ष

पनीर के फूल में एंटी-डायबिटिक गुण होते हैं, यह पैन्क्रियाज़ की बीटा सेल्स को रिपेयर करने में मदद करता है. बीटा सेल्स ही शरीर में इंसुलिन का उत्पादन करते हैं. इसलिए, पनीर के फूल का सेवन करने से शरीर में इंसुलिन का स्तर नियंत्रित रहता है और शुगर ब्लड में जमा नहीं हो पाती पनीर के फूल मधुमेह रोगियों के लिए औषधीय गुणों से भरपूर माना जाता है यह औषधीय गुणों की वजह से कई समस्याओ में लाभकारी होते है, इसके नियमित सेवन न केवल शरीर को बल्कि विभिन्न रोगो से बचाने में मदद करता हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें

अमित तोमर

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पादप प्रजनन), आई. सी. ए आर-कृषि विज्ञान केन्द्र गजरौला, अमरोहा
(प्रसार निदेशालय), सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

पत्राचारकर्ता: tomarcsa@gmail.com

परिचय

बायोफोर्टिफिकेशन एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें पौध प्रजनन के जरिए फसलों में कुछ पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ा दी जाती है चाहे वह पारंपरिक पद्धति से हो या फिर जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से बायोफोर्टिफिकेशन, पादप प्रजनन द्वारा फसलों की पोषक गुणवत्ता बढ़ाने की तकनीक है। बायोफोर्टिफिकेशन साधारण फोर्टिफिकेशन से अलग है, क्योंकि इसमें फसलों को अधिक पौष्टिक बनाया जाता है। बायोफोर्टिफाइड तकनीक द्वारा फसलों की पोषकता में बढ़ोतरी होती है। वैज्ञानिक इन फसलों के विकास दौरान उनके बीज में पोषक तत्व और विटामिन, जड़ द्वारा अवशोषित कर बायोफोर्टिफाइड कर रहे हैं। गौरतलब है कि देश में आर्थिक परिवर्तन और विकास पर ध्यान दिया जात रहा है। लेकिन दूसरी और मानव विकास, भुखमरी और कुपोषण की समस्या बढ़ रही है। पारंपरिक प्रजनन तकनीक या अनुवांशिक अभियांत्रिकी द्वारा वैज्ञानिक बायोफोर्टिफिकेशन फसली किस्मों की गुणवत्ता बढ़ा रहे हैं। कुपोषण और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को दूर करने में इस तकनीक को नई क्रांति के रूप में देखा जा रहा हैं।

ऐसे होता है बायोफोर्टिफिकेशन

फसलों पर ऐसे करते है बायोफोर्टिफिकेशन

बायोफोर्टिफिकेशन तकनीक में परंपरागत पादप प्रजनन तकनीक से उच्च सूक्ष्म तत्व वाली किस्म का पता लगाया जाता है। इन किस्मों को उच्च उत्पादन देने वाली किस्म से संकरण करवाया जाता है। इससे इन किस्मों में उच्च उत्पादक गुणों के साथ-साथ उच्च मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्व और जरूरी विटामिन उपलब्ध हो सके, जो कि किसानों के लिए फायदेमंद हो सके।

धानः विटामिन ए, फोलिक एसिड, अधिक आयरन से भरपूर गोल्डन राइस पहली बायोफोर्टिफाइड फसल है। संकरण तकनीक से धान में बीटा केरोटीन जीन डाला गया है। यदि रोजाना 40 ग्राम सुनहरा चावल पकाकर खाए तो अंधापन नहीं होगा।

मक्काः विटामिन, आयरन, प्रो-विटामिन एवं विटामिन-ई पोषक जरूरतों को पूरा करने के लिए क्यूपीएम मक्का अच्छा विकल्प है। क्योंकि इसमें 3.3 से 4 ग्राम प्रति 100 ग्राम लाइसिन प्रोटीन पाया जाता है, जो साधारण मक्का से दोगुना है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों के कुपोषण परिणाम

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी शरीर को विभिन्न तरीकों उच्च रुग्णता, उच्च मृत्यु दर, कम संज्ञानात्मक क्षमता, कार्य क्षमता में ह्रास, अल्प विकास क्षमता में कमी को प्रभावित करती है जिसे दूसरे शब्दों में कुपोषण भी कहते हैं, जो कि हमारे दैनिक आहार में पोषक तत्वों की कमी के कारण होता है। कुपोषण मानव की क्षमता के विकास में बाधक तो है ही उसके साथ-साथ ये देश में खासकर औरतों एवं बच्चों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास को भी रोकता है। मनुष्यों को उनकी सेहत के लिए कम से कम 22 खनिज तत्वों की आवश्यकता होती

है। उपयुक्त आहार द्वारा इसकी आपूर्ति की जा सकती है। हालाँकि यह अनुमान लगाया गया है कि दुनिया के 60 अरब लोगों में से 60 प्रतिशत में लौह (Fe) की कमी है, 30 प्रतिशत से अधिक में जिंक (Zn) की कमी, 30 प्रतिशत में आयोडीन (I) और 15 प्रतिशत जनसंख्या में सेलेनियम (Se) की कमी है। खनिज कुपोषण को आहार विविधीकरण, खनिज अनुपूरण, खाद्य बायोफोर्टिफिकेशन और खाद्य फसलों में खनिज सांद्रता बढ़ाने के माध्यम से संबोधित किया जा सकता है। हालाँकि, आहार विविधीकरण, खनिज अनुपूरक और खाद्य बायोफोर्टिफिकेशन को बढ़ाने के लिए रणनीति हमेशा सफल नहीं रही है। इस कारण से, खनिज तत्वों के अधिग्रहण की क्षमता के साथ खनिज उर्वरकों के उपयोग के माध्यम से फसलों के बायोफोर्टिफिकेशन को एक तत्काल रणनीति के रूप में समर्थन दिया जाता है खाद्य फसलों में खनिज सांद्रता को बढ़ाने के लिए ही नहीं वरन् कम उपजाऊ मिट्टी पर पैदावार में सुधार के लिए इसका ज्यादा महत्व है।

जैव संवर्धित किस्में एवं उनकी प्रमुख विशेषतायें

पोषक आहार मानव शरीर की सम्पूर्ण वृद्धि व विकास के लिए आवश्यक है। पोषक आहार नही मिलने से विभिन्न सूक्ष्म तत्वों की कमी शरीर को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है, जिसको सामान्य शब्दों में कुपोषण कहा जाता है। सम्पूर्ण विश्व में लगभग 2 बिलियन जनसंख्या अपुष्ट आहार से प्रभावित है जबकि 795 मिलियन जनसंख्या कुपोषण की शिकार है। भारत में 194.6 मिलियन जनसंख्या कुपोषित है, जिनमे से 44% महिलायें एनीमिया से ग्रसित एवं 5 वर्ष से कम उम्र के 38.4% बच्चे छोटे कद व 35.7% बच्चे कम वजन के है। जैव संवर्धित किस्मों का विकास कर कुपोषण की स्थिति से बचा जा सकता है। यह सबसे सस्ता और सरल उपाय है। पारम्परिक प्रजनन (जैव प्रौद्योगिकी के साथ या इसके बिना, फसल मानचित्रण और मार्कर समर्थित प्रजनन) या मेटाबोलिक प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से खाद्य फसल की सूक्ष्म पोषक तत्वों का संवर्धन जैव संवर्धन कहलाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने जैव संवर्धित विधि से धान्य, दलहन, तिलहन, सब्जी और फल वाली फसलो में उच्च पैदावार व उच्च पोषक गुणवत्ता वाली विभिन्न जैव संवर्धित किस्मों का विकास किया है इन किस्मों के बारे में संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है।

क) धान की जैव संवर्धित किस्में

1. सी आर धान 310: यह किस्म राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, कटक (2016) द्वारा विकसित की गयी है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 10.30% होती है। यह 125 दिन में पककर तैयार हो जाती है तथा 45 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से औसत उपज देती है। यह उड़ीसा, मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है।

2. डी आर आर धान 45: इस किस्म को भारतीय चावल अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद (2016) ने विकसित किया है। इसके दानो में जिंक की मात्रा 6 पी पी एम पाई जाती है। यह किस्म 125-130 दिन में पककर 50 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार देती है। यह कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्रप्रदेश राज्यों में बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

ख) गेंहूँ की जैव संवर्धित किस्में

• डब्ल्यू बी 02: इस किस्म को भारतीय गेंहूँ और जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा (2017) में विकसित किया गया। इसमें उच्च जिंक (42 पी पी एम) व आयरन (40 पी पी एम) की मात्रा पाई जाती है, यह किस्म सिंचित अवस्था कें समय से बुवाई के लिए उपयुक्त है, जो 142 दिन में पककर 51.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की औसत उपज देती है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा और उदयपुर संभागो को छोड़कर), पश्चिमी उत्तर प्रदेश (झाँसी संभाग को छोड़कर), जम्मू-कश्मीर के जम्मू और कठुआ जिला, हिमाचल प्रदेश के पाओंटा घाटी तथा ऊना जिला और उत्तराखंड के तराई क्षेत्र के लिए उपयुक्त किस्म है।

• एच पी बी डब्ल्यू 01: अखिल भारतीय गेंहूँ और जौ समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियान के द्वारा (2017) इस किस्म को विकसित किया गया। इसमें अधिक जिंक (40 पीपीएम) व आयरन (40.6 पीपीएम) की मात्रा पाई जाती है। यह सिंचित अवस्था में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त है और यह 141 दिन में पकने वाली किस्म है। यह एक हैक्टेयर में 51.7 क्विंटल तक औसत पैदावार देती है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान (कोटा और उदयपुर संभागो को छोड़कर), पश्चिमी उत्तर प्रदेश (झाँसी संभाग को छोड़कर), जम्मू-कश्मीर के जम्मू और कठुआ जिला, हिमाचल प्रदेश के पाओंटा घाटी तथा ऊना जिला और उत्तराखंड के तराई क्षेत्र के लिए अनुमोदित किस्म है।

• पूसा तेजस (एच आई 8759): अखिल भारतीय गेंहूँ और जौ समन्वित अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियान के द्वारा इस किस्म को विकसित किया गया। इसमें अधिक प्रोटीन (12%), जिंक (42.8 पीपीएम) व आयरन (42.1 पीपीएम) की मात्रा पाई जाती है। यह सिंचित अवस्था में समय के बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

यह एक हैक्टेयर में 50 क्विंटल तक औसत उपज देती है। यह मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, राजस्थान व उत्तरप्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है।

• **पूसा उजाला (एच आई 1605):** यह किस्म आई सी ए आर- आई ए आर आई, रीजनल स्टेशन, इंदौर, मध्य प्रदेश द्वारा विकसित की गयी है। इसमें 13% प्रोटीन, 43 पीपीएम आयरन व 35 पीपीएम जिंक पाया जाता है। यह 30 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देती है तथा महाराष्ट्र, कर्नाटक व तमिलनाडु राज्यों के लिए अनुमोदित है।

• **एम ए सी एस 4028:** इसमें 14.7% प्रोटीन, 1 पीपीएम आयरन व 40.3 पीपीएम जिंक पाया जाता है। यह 19.3 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देती है तथा महाराष्ट्र, कर्नाटक व तमिलनाडु राज्यों के लिए अनुमोदित है।

ग) मक्का की जैव संवर्धित किस्में

• **पूसा विवेक क्यू पी एम-9 उन्नत:** इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। यह भारत की उच्च प्रो विटामिन-ए युक्त संकर मक्का की पहली किस्म है। इसमें उच्च प्रोविटामिन-ए (8.15 पीपीएम), लाइसिन (2.67%) एवं ट्रिप्टोफैन (0.74%) पाया जाता है। यह किस्म उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र में 93 दिन में पककर 55.9 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज तथा दक्षिण प्रायद्वीप क्षेत्र में 83 दिन में पककर 59.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देती है। यह खरीफ मौसम में जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्र, उत्तर पूर्वी राज्यों, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्र प्रदेश राज्यों बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

• **पूसा एच एम 4 उन्नत:** भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में इस किस्म को विकसित किया। इसमें अधिक ट्रिप्टोफैन (0.91%) व लाइसिन (3.62%) पाया जाता है। यह 87 दिन में पककर 64.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर औसत उपज देने वाली किस्म है। यह पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखंड (मैदानी क्षेत्र) व उत्तर प्रदेश (पश्चिमी क्षेत्र) में खरीफ में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।

• **पूसा एच एम 8 उन्नत:** इस किस्म को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। इसमें अधिक ट्रिप्टोफैन (1.06%) व लाइसिन (4.18%) की मात्रा पाई जाती है। फसल के पकने का काल 95 दिन है और इससे औसत उपज 62.6 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से प्राप्त होती है। यह महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, तेलंगाना व आंध्रप्रदेश राज्यों खरीफ मौसम में बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है।

• **पूसा एच एम 9 उन्नत:** इस किस्म को भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष (2017) में विकसित किया। इस किस्म में ट्रिप्टोफैन (0.68%) व लाइसिन (2.97%) की मात्रा पाई जाती है। यह 89 दिन में पककर 52 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से पैदावार देती है। यह खरीफ मौसम में बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश (पूर्वी क्षेत्र) और पश्चिमी बंगाल में बुवाई हेतु अनुमोदित किस्म है।

घ) बाजरा की जैव संवर्धित किस्में

• **एच एच बी 299:** इस किस्म को अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना के तहत चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा इक्रीसेट, हैदराबाद के सहयोग से वर्ष 2017 विकसित किया गया है। यह आयरन (73 पीपीएम) और जिंक (41 पीपीएम) से भरपूर संकर किस्म हैद्य यह 81 दिन में पककर तैयार होने वाली किस्म है तथा इससे 32.7 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार होती है। यह हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र व तमिलनाडु राज्यों के लिए खरीफ मौसम में खेती के लिए उपयुक्त किस्म है।

• **ए एच बी 1200:** यह किस्म अखिल भारतीय समन्वित बाजरा अनुसंधान परियोजना के अंतर्गत बसंतराव नाईक मराठवाड़ा कृषि विद्यापीठ, परभणी द्वारा इक्रीसेट, हैदराबाद के सहयोग से वर्ष 2017 विकसित की है। इसमें आयरन (73 पीपीएम) की प्रचुर मात्रा पाई जाती है। यह 78 दिन में पककर 32 क्विंटल प्रति हैक्टेयर पैदावार देती है। यह हरियाणा, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, दिल्ली, महाराष्ट्र व तमिलनाडु राज्यों के लिए खरीफ मौसम में बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है।

ङ) मसूर की जैव संवर्धित किस्में

• **पूसा अगेती मसूर:** भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने वर्ष 2017 में इस किस्म को विकसित किया है। इस किस्म में आयरन (65 पीपीएम) की उच्च मात्रा पाई जाती है। इसका बीज नारंगी रंग व मध्यम आकार का होता है और यह वर्षा सिंचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म है। यह 100 दिन में पककर 13 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की पैदावार देती है।यह उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व छतीसगढ राज्यों के लिए उपयुक्त किस्म है।

• **आई पी एल 220:** यह भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान, कानपुर द्वारा वर्ष 2018 में विकसित की गयी है। इस किस्म में उच्च मात्रा में आयरन (73 पीपीएम) व जिंक (51 पीपीएम) पाया जाता है। यह बारानी क्षेत्रों में रबी मौसम में बुवाई हेतु उपयुक्त

किस्म है। यह 121 दिन में पककर 13.8 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से पैदावार देती है। यह उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल व आसाम के लिए उपयुक्त किस्म है।

च) सरसों की जैव संवर्धित किस्में

• **पूसा सरसों 30:** यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा (2013) विकसित किस्म है जिसमे इरुसिक अम्ल (टोक्सिक) की 2% से कम मात्रा पाई जाती है जो प्रचलित किस्मों में 40% से भी अधिक पाया जाता है। इसमें 37.7% तेल की मात्रा पाई जाती है और यह सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। यह 137 दिन में तैयार होकर 18.2 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर से औसत पैदावार देती है। यह उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड व राजस्थान राज्यों में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।

• **पूसा डबल जीरो 31:** यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा (2016) देश की पहली केनौला गुणवत्तायुक्त भारतीय सरसों की विकसित की गयी किस्म है। इसके तेल में इरुसिक अम्ल (टोक्सिक) की 2% से कम और तेल रहित खली में ग्लुकोसिनोलेट 30 पीपीएम से कम पाया जाता है। यह सिंचित क्षेत्रों में समय से बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। इसकी फसल 142 दिन में पक जाती है तथा औसतन 23 क्विंटल प्रति हैक्टेयर की दर उपज देती है। यह राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली पश्चिमी उत्तर प्रदेश, जम्मू व कश्मीर के मैदानी क्षेत्र तथा हिमाचल प्रदेश के लिए अनुमोदित किस्म है।

छ) फूलगोभी की जैव संवर्धित किस्में

• **पूसा बीटा केसरी 1:** देश की पहली जैव संवर्धित फूलगोभी की किस्म, जो भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2015 में विकसित की गयी है। इसमें 8 से 10 पीपीएम बीटा कैरोटीन पाया जाता है जो की प्रचलित किस्मों में न के बराबर होता है। इससे 40-50 टन प्रति हैक्टेयर उपज प्राप्त होती है और यह दिल्ली में बुवाई के लिए अनुमोदित किस्म है।

ज) शकरकंद की जैव संवर्धित किस्में

• **भू सोना:** केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरुवनंतपुरम द्वारा वर्ष 2017 में विकसित की गयी किस्म है। इसमें उच्च बीटा कैरोटीन 14 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम पाया जाता है। इसमें सुखा पदार्थ, स्टार्च व कुल शर्करा की मात्रा क्रमशः 27-29%, 20% व 2-2.4% पाई जाती है। इससे 19.8 टन प्रति हैक्टेयर कंद की पैदावार होती है और यह उड़ीसा के लिए अनुमोदित किस्म है।

• **भू कृष्णा:** यह किस्म केन्द्रीय कंद फसल अनुसंधान संस्थान, तिरुवनंतपुरम द्वारा वर्ष 2017 में विकसित की गयी। इसमें 90 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम एन्थोसायनिन पाया जाता है। इसमें सुखा पदार्थ, स्टार्च व कुल शर्करा की मात्रा क्रमश 24-25.5%, 5% व 1.9-2.2% पाई जाती है। यह लवणता के प्रति सहिष्णु किस्म है और 18 टन प्रति हैक्टेयर कंद की पैदावार देती है। यह उड़ीसा में बुवाई हेतु उपयुक्त किस्म है।

झ) अनार की जैव संवर्धित किस्में

• **सोलापुर लाल:** इस किस्म को राष्ट्रीय अनार अनुसंधान केंद्र, पुणे ने वर्ष 2017 में विकसित किया। इसके दानो में उच्च आयरन (5.6-6.1 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम), जिंक (0.64-0.69 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम) व विटामिन-सी (19.4 -19.8 मिग्रा. प्रति 100 ग्राम) पाए जाते है इससे 23-27 टन प्रति हैक्टेयर की दर से फल की पैदावार होती है। यह देश के अर्धशुष्कीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त किस्म है।

निष्कर्ष

बायोफोर्टिफिकेशन में तकनीक के द्वारा कुपोषित आबादी के लिए विशेष रूप से गरीब ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध सूक्ष्म पोषक तत्वों की रेंज का विस्तार कर सकती है, जहाँ औद्योगिक संरचना और शैक्षिक प्रयासों की कमी होती है या लागू करने में मुश्किल हो सकती है। दरअसल, पूरक, औद्योगिक फोर्टिफिकेशन या आहार विविधीकरण के माध्यम से विटामिन और खनिज की कमी से निपटने के लिए कई प्रयासों के बावजूद, दो अरब लोगों में पोषक तत्वों की कमी व्यापक है। यह विशेष रूप से विकासशील क्षेत्रों में मामला है, जहाँ नीरस आहार, मुख्य रूप से या पूरी तरह से मुख्य फसलों से मिलकर, जनसंख्या का दैनिक कैलोरी सेवन प्रदान करते हैं। यहाँ बायोफोर्टिफाइड फसल सूक्ष्म पोषक तत्व कुपोषण के बोझ को कम करने के लिए एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक, कृषि आधारित रणनीति खेल सकते हैं। पारंपरिक प्रजनन (जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिकोण के साथ या इसके बिना, फसल.मानचित्रण और मार्कर -समर्थित प्रजनन) या मेटाबोलिक इंजीनियरिंग के उपयोग के माध्यम से स्टेपल फसल की सूक्ष्म पोषक सामग्री का संवर्धन ही बायोफोर्टिफिकेशन कहलाता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव और अनुकूलन रणनीतियाँ

अभय शर्मा*, देविना वैद्य, भूपिंदर सिंह ठाकुर, जोगिन्द्र सिंह, विजय भारद्वाज एवं दिशा ठाकुर

क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान और प्रशिक्षण केन्द्र, बजौरा, कुल्लू, डॉ. यशवंत सिंह परमार उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, सोलन, हिमाचल प्रदेश

पत्राचारकर्ता: abhayevs@gmail.com

परिचय

हिमालय जलवायु परिवर्तन के प्रति सबसे संवेदनशील प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों में से एक है। नाजुक पारिस्थितिकी और संवेदनशील स्थलाकृति के कारण हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव अधिक ध्यान देने योग्य है क्योंकि जलवायु परिवर्तन तापमान और वर्षा पैटर्न को प्रभावित कर रहा है अंतः यह भविष्य में कृषि और खाद्य सुरक्षा पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला है। विशेष रुप से खेत की मुख्य फसलों पर, फलों और सब्जियों की उत्पादकता के साथ-साथ पशुधन क्षेत्र भी प्रभावित होगा, साथ ही पशु वृद्धि दर और उत्पादकता कम होगी, कीट और रोग की घटनायें अधिक होंगी और जैव विविधता का नुकसान होगा। तो इस से कहा जा सकता है कि कृषि जलवायु परिवर्तन से बहुत प्रभावित है और साथ ही में कृषि एक बहुत बडी परिभाषा है, जिसमें बागवानी एंव पशुपालन भी जुड़े है तो यह तीनों ही क्षेत्र जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हैं। इसलिए इन तीनों क्षेत्रों की उत्पादकता बढ़ाने और कृषक समुदाय को आर्थिक रुप से मजबूत करने के लिए विभिन्न अनुकूलन तकनीकों को अपनाने की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन वैश्विक स्तर पर सबसे बडी पर्यावरणीय चिताओं में से एक है, जो खाद्य उत्पादन, प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र, साफ पानी की आपूर्ति एवं स्वास्थ्य आदि पर खतरा पैदा करता है। जैसे की हम जानते है परिवर्तन प्रकृति का नियम है और जलवायु परिवर्तनशील है। इस समय जलवायु में काफी परिवर्तन हो रहा है, जो मानव एवं पारिस्थितिकी तंत्र को पहले से ही नुकसान पहुँचा रहा है। ग्लेशियरों का पिद्यलना, समुंद्र का जल स्तर बढ़ना, मानसून के तरीकों में परिवर्तन बदलते पारिस्थितिक तंत्र एवं द्यातक गर्मी का पाया जाना ये सभी परिवर्तन यह सिद्ध करते है कि जलवायु परिवर्तन के लिए एक प्रकार से प्राकृतिक गतिविधियाँ तथा मानव जनक कार्य जिम्मेदार है।

जलवायु परिवर्तन के मुख्य दो कारण है पहला प्राकृतिक जैसे कि ज्वालामुखी का फटना, महासागरीय धाराओं का घटना एवं पृथ्वी के कक्षीय में परिवर्तन और दूसरा मानव जनक है, जिसके अन्तर्गत शहरीकरण होना, उद्योगों का बढ़ना, भूमि उपयोग आवरण में परिवर्तन और प्रदूषण का बढ़ना, जिसका सीधा असर मुख्यतः कृषि, वनों, जल स्रोतों, मौसम कारकों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर पड़ा है।

जलवायु परिवर्तन एक बडी चिंता का विषय हैं, खासकर भारत में पिछले तीन दशकों में चरम प्रासंगिक द्यटनाओं के घाटित होने की संभावनायें बढी हैं। इस जलवायु द्यटनाओं के तहत कृषि उत्पादकता को बनाए रखने और पर्यावरण की रक्षा की आवश्यकता है।

भारतीय हिमालयी क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन का वर्तमान परिदृश्य

- हिमालय दुनिया की पर्वतीय प्रणालियों में सबसे नया और ऊँचा है और वैश्विक पर्यावरण का प्रमुख द्यटक है। ग्लेशियर हिमालयी परिस्थितिकी तंत्र के बर्फ का सबसे बड़ा संसाधन हैं, जो बारहमासी नदियों को पोषण देते हैं, जो पर्वतीय क्षेत्र के भीतर और बाहर एक बड़ी मानव आबादी के लिए पीने का पानी, सिंचाई और जल विधुत का स्त्रोत हैं।
- हिमालय बहुत संवेदनशील क्षेत्र है, जो न्यूनतम/अधिकतम तापमान, उच्च पराबैंगनी किरणों, तेज हवा की गति, मिट्टी के कटाव, मिट्टी की उर्वरता में कमी, ईंधन की लकड़ी की कमी,

ISSN No. 2583-3316

विरल वनस्पति और उच्च स्तर की अस्थिरता जैसी कठोर परिस्थितियों को समेटे हुये है।

• जलवायु मॉडल आधरित अनुमान से यह पता चला है कि तापमान में लगभग 1.6°C की वद्धि हुई है तथा वर्षा के ऑकड़ो के अनुसार वर्षा में ज्यादा अन्तर नहीं देखने को मिला है और हाल ही की मानूसून में महत्वपूर्ण घ्टना क्रम पाया गया है।

• ग्लोबल वार्मिगं के कारण हिमालयी ग्लेशियरों का पिघलना पाया गया है, जिस से नदियों तथा समुद्र का जल स्तर बढ़ गया है तथा बाधों का टुटने का खतरा भी बढ़ गया है।

• हिमालयी क्षेत्रों में बादल फटना, तूफान आना, भूकम्प आना और भूस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाएँ बढ जाना।

• वैश्विकरण के कारण हिमालय क्षेत्रों में वनों की कटाई और गिरावट होना, जिस से गलोबल वार्मिगं बढना।

• जैव विविधता में कमी और इनके अधिक होने की अशंका है जो पर्यावरण और लोगों के स्वास्थय, कृषि, वनों, जल संसाधनों और प्रजातियों पर प्रभाव डालेगी।

हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव

हिमाचल प्रदेश भारत के सबसे उत्तरी भाग में पश्चिमी हिमालय में स्थित एक पहाड़ी राज्य है। राज्य में एक जटिल भू-वैज्ञानिक संरचना है, जो इसकी स्थलाकृति को समुद्र तल से 350 मीटर से 6970 मीटर तक की चरम ऊँचाई वाली श्रेणियों में विभजित करती है। हिमाचल प्रदेश में कृषि ग्रामीण समुदाय के लिए जीवन जीनें का एक तरीका है। यह राज्य की अर्थव्यवस्था की नींव और राज्य में लोगो का प्राथमिक निर्वाह है। हिमाचल प्रदेश की अर्थव्यवस्था मुख्य रुप से कृषि-पशुपालन है जिसमें, 92 प्रतिशत से अधिक आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से कृषि गतिविधियों पर निर्भर है। कृषि हिमाचल प्रदेश के लोगों का प्राथमिक व्यवसाय है और यह दुनिया का एकमात्र राज्य है जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में 89.96 प्रतिशत आबादी है। पिछले तीन दशको में प्रदेश के विभिन्न जलवायु क्षेत्रों में मौसम कारको जैसे तापमान, वर्षा, सापेक्षिक आर्द्रता, हिमपात आदि में असाधारण बदलाव आया है। जिससे प्रमाण मिलता है कि हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन का प्रभाव बढ़ रहा है।

प्रदेश के निचले सम-उष्ण व सम-शीतोष्ण क्षेत्रों में अधिकतम तापमान में मौसम 0.68 से 1.50°C की दर से वृद्धि का संकेत मिले है। जबकि न्यूनतम तापमान में 0.2 से 2.0°C की कमी पाई गई है। वर्षा का पैटर्न बदल रहा है, जिसमें कमी पाई गई है और साथ ही में अनियमित मौसम की स्थिति देखी गई है जैसे कि अत्यधिक या कम बारिश होना, लम्बे समय

तक सूखा पड़ना और लू चलना। प्रदेश में हिमपात में भी अनियमतिता पाई गई है। जो हिमपात पहले नवम्बर से मार्च तक हुआ करता है वही अब के समय में जनवरी से फरवरी में देखा गया है। जिससे जल स्त्रोतों पर काफी असर पाया गया है और साथ में सेब उत्पादन क्षेत्रों पर काफी असर पड़ा है क्योंकि सेब के पौधों को शीतोष्ण घंटे (वाँछित ठण्ड) पूरे नहीं होते हैं। दूसरी ओर सेब क्षेत्र का उच्च ऊँचाई वाले शीतोष्ण क्षेत्रों में नये बगीचे लगना या स्थानान्तरित होना और निचले सेब क्षेत्र की जगह सब्जियों का स्थान लेना पाया गया है।

जलवायु परिवर्तन का सीधा असर जैवविविधता पर भी पड़ता है। यह पाया गया है कि तापमान में 1°C की वृद्धि से पौध प्रजातियाँ लगभग 150 से 200 मीटर अधिक ऊँचाई वाले क्षेत्रों की तरफ स्थानान्तरित हो जाती हैं। जलवायु परिवर्तन व मानवीय गतिविधियों से प्रदेश के वनों पर भी असर पड़ा है। जंगलों में आग लगने की घ्टनाओं में भी वृद्धि हुई है। इससे जैवविविधता में कमी व वायुमण्डल में कार्बनडाईआक्साइड की मात्रा बढती है। जिससे वायुमण्डल प्रदूषित होता है व तापमान में वृद्धि होती है। मौसम के विभिन्न कारकों में बदलाव होने के कारण कई बीमारियों तथा हानिकारक कीटों का प्रकोप बढ़ जाता है। जैसे ही जलवायु में कोई परिवर्तन होता है तो कीट अपने आप को उसके अनुरुप ढ़ाल लेते है और यह परिवर्तन हमारी कृषि/बागवानी के लिए हानिकारक है क्योंकि कीट अपना पेट पालने के लिए फसलों की ओर रुख करते हैं। जलवायु परिवर्तन होने से कीटों के जीवन चक्रों में बदलाव आया है उनके जीवन में प्रजनन क्षमता बढ़ गई है। उसकी वजह से उनकी संख्या में बढोतरी हो रही है और हमारी फसलों पर इनका प्रकोप बढ़ रहा है। साथ ही में आज कल प्रयोग होने वाली फसलों की किस्में है वो भी इस बदलते पर्यावरण की

ISSN No. 2583-3316

वजह से अच्छे ढ़ग से नही चल पा रही हैं।

ग्रामीण आजीविका मुख्य तौर पर पशुपालन एवं कृषि पर ही निर्भर है और यह एक मुख्य व्यवसाय है। इस बीच जलवायु परिवर्तन पशुधन उत्पादन के लिए एक खतरा है क्योंकि इसका प्रभाव चारा, फसल और चारे की गुणवत्ता, पानी की उपलब्धता, पशु और दूध उत्पादन, पशुधन रोग, पशु प्रजनन और जैव विविधता पर पड़ता है।

साथ ही में भूमि उपयोग में परिवर्तन, फसल पद्धति और प्रणाली में बदलाव जैसे अधिक ऊँचाई वाले शीतोष्ण क्षेत्रों में नये बगीचे लगाने शुरु कर दीये गये हैं जोकि इन क्षेत्रों में सर्दी कम पड़ने व बर्फ से ढ़की जगह के खाली होने के कारण

सम्भव हुआ है। तापमान की वृद्धि से फसलें समय से पहले पक जाती है तथा फसल की गुणवत्ता व उत्पादन में कमी आ जाती है। वर्षा का समय पर न होने के कारण फसलों की बुवााई में देरी हो जाती है या फिर फसल काटने के समय ज्यादा वर्षा होने से भी फसल नष्ट हो जती है।

तो इस प्रकार से कहा जा सकता है कि कृषि जलवायु परिवर्तन से बहुत प्रभावित है और साथ ही में कृषि एक बहुत बड़ी परिभाषा है, जिसमें बागवानी एंव पशुपालन भी जुड़े है और यह तीनों क्षेत्र ही जलवायु परिवर्तन से प्रभावित है।

अनुकूलन तकनीकें

• सबसे पहले वैज्ञानिकों द्वारा जागरुकत्ता शिविर लगाकर किसानो को जागरुक करना।

• जैविक एवं समग्रित मिश्रित खेती।

• जलवायु परिवर्तन प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना।

• जल प्रतिरोधी या कम जल माँगने वाली फसलों का चयन करना।

• फसलों में सिंचाई प्रबन्धन की नवीनतम तकनीकें जैसे टपक सिचाई या फव्वारा विधि को अपनाना।

• जल प्रबन्धन जैसे पोली टैंक निर्माण, वर्षा जल संग्रहण/ संरक्षण ढाँचों का निर्माण करना।

• फसल उत्पादन में नयी तकनीकों का विकास।

• साथ ही फसल की प्रबन्धन प्रणाली है जिसमें ऐसे तरीकों का चुनाव करना, जो हमारे वातावरण में कम से कम प्रदूषण करें। जैसे

- फसल विविधिकरण और सही फसल चक्र अपनाना।
- फसलों में पानी उर्वरक डालने की सही मात्रा।
- फसल अवशेषों को पुनः मिट्टी में मिलाना।

• रोगों की निगरानी करना और कीटनाशक दवाईयों की जरुरत के अनुसार तथा सही मात्रा में उपयोग करना।

• जलवायु परिवर्तन से खरपतवार बढते हैं तो इन्हें खेतों से समय-समय पर निकाले और फसल में मल्चिंग (विछावन) का प्रयोग करें, जिससे जल और मट्टी का संरक्षण होगा।

• अधिक से अधिक फसलों का बीमा करवाना।

• मौसम सम्बंधित अग्रिम जानकारी के आधार पर अपनी फसल क्रियाओं को ढ़ालना।

• फसल संयोजन में परिवर्तनः मिश्रित खेती व इंटरक्रॉपिंग करना।

• बागवानी व वानिकी में विविधता लाना।

• कृषि वानिकी पद्धति को अपनाना।

• मिट्टी की जाँच करवाना की कौन से पोषक तत्वों की कमी है और उसके हिसाब से उर्वकर डालना।

• खाली जगहों पर पौधरोपण करना।

• जैव ईधन का इस्तेमाल करना।

• कीट प्रबन्धन में ऐसे तरीकों का इस्तेमाल करें, जो वातावरण को कम नुकसान पहुँचाये जैसे कि एकत्रित कीट प्रबन्धन जिसका मतलब है सभी तरीकों का मिला-जुला स्वरूप।

और खासकर मौसम पुर्वानुमान आधारित खेती करना जैसे कि ग्रामीण कृषि मौसम सेवा का लाभ उठना। जिसका उद्देश्य जलवायु परिर्वतन, मौसम पूर्वानुमान, मिट्टी और फसल की जानकारी को एकत्र और व्यवस्थित करके मौसम पूर्वानुमान के साथ जोड़ा जाये ताकि किसान को कृषि प्रंबधन में सहायता मिले और साथ में किसान जलवायु परिर्वतन के प्रभावों से अपना बचाव कर सकें।

निष्कर्ष

हिमाचल प्रदेश में जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभाव देखे जा रहे है, जिसमें फसल उत्पादकता, जल संसाधन और मृदा स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचा है। इसके अलावा फसल पद्धतियों में बदलाव और फसलों पर कीटों के हमले में भी वृद्धि देखी गई है। इससे ये प्रतीत होता है कि कृषि, बागवानी और पशुपालन जैसे तीन मुख्य क्षेत्रों का पतन हुआ है। लेकिन यदि जलवायु परिवर्तन प्रतिरोधी किसमों का चयन करना, मल्चिंग, इंटरक्रॉपिंग, फसल विवधिकरण, सही फसल चक्र अपनाना, एकीकृत कीट प्रबंधन अपनाना, कृषि-वानिकी पद्धति को अपनाना, बेहतर जल प्रबंधन और मौसम पूर्वानुमान आधार खेती करना जैसी अनुकूलन तकनीकों का उपयोग किया जाता है, तो जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों को कम किया जा सकता है।

सन्दर्भ

• हरीश भारती, प्रियंका शर्मा, अदिति पनाटू, एसएस रंधावा और निशांत ठाकुर (2021) जलवायु परिवर्तन के लिए कृषि का अनुकूलनः एक स्कोपिंग समीक्षा। जर्नल आफॅ रिसर्चदे बेड़े एथेनियम 11(10): 202

• अक्षय भटी,शोभा कुमारी और राम दीन कुमार (2018) भारत में बागवानी फसलों पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव-एक समीक्षा। बायोसाइंस जे में रूझान11(44): 1-5

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पूर्वी उत्तर प्रदेश में ग्रामीण आजीविका वृद्धि हेतु वृक्षों की भूमिका

अनुभा श्रीवास्तव* एवं प्रीतम कुमार बर्मन

आई.सी.एफ.आर.ई.–पारिस्थितिक पुनर्स्थापन केंद्र, प्रयागराज

पत्राचारकर्ता: anubhasri_csfer@icfre.org

परिचय

निर्दिष्ट 'वन' क्षेत्रों के बाहर लगे वृक्षों को वनों के अतिरिक्त भूमि पर लगे वृक्षों (टीओएफ) के रूप में वर्गीकृत किया गया है। परिभाषा के अनुसार भारत में टीओएफ वे सभी पेड़ हैं, जिनके तने की ऊँचाई 10 सेंटीमीटर या उससे अधिक हो गई है, तथा उन भूमि पर उपलब्ध हैं, जिन्हें वनों के रूप में अधिसूचित नहीं किया गया है। एफएओ ने टीओएफ को उन भूमियों पर उपलब्ध वृक्षों के रूप में परिभाषित किया है जिन्हें वन अथवा अन्य वन भूमि के रूप में परिभाषित नहीं किया गया है। भारत में टीओएफ, मुख्य रूप से निजी भूमि पर बढ़ रहे हैं जो उद्योग और घरेलू ईंधन के लिए लकड़ी का मुख्य स्रोत हैं। पिछले 5 द्विवार्षिक मूल्यांकनों में, देश के वृक्षावरण में वृद्धि की प्रवृत्ति दिखाई दी है। यह 90,844 वर्ग किमी (2011) से बढ़कर 95748 वर्ग किमी (2021) हो गया है, जो 4904 वर्ग किमी की दशकीय वृद्धि दर्शाता है है (एफएसआई रिपोर्ट 2011; 2021)। वन के बाहर के वृक्ष वे सभी वृक्ष हैं, जो आरक्षित वन क्षेत्र से अलग हैं, चाहे वे किसी भी प्रकार के पैच हों, जबकि वृक्षावरण का अर्थ है आरक्षित वन क्षेत्र को छोड़कर अन्य सभी वृक्ष कम से कम 1 हेक्टेयर पैच के क्षेत्र में उपलब्ध हों। भारत में कई सक्षम नीतियाँ और योजनायें हैं, जो कृषिवानिकी जैसे हस्तक्षेपों के माध्यम से टीओएफ को बढ़ाने के लिए मौद्रिक और गैर-मौद्रिक प्रोत्साहनों की एक श्रृंखला का निर्माण करती हैं। जंगलों के बाहर पेड़ उगाना भारत में एक महत्वपूर्ण पर्यावरणीय और आर्थिक अवसर प्रस्तुत करता है। इन पेड़ों में से लगभग 80 मिलियन हेक्टेयर 2040 तक 3.4 गीगाटन कार्बन डाइऑक्साइड-समकक्ष का अनुक्रमण कर सकता है, जिससे भारत को अपनी अंतर्राष्ट्रीय जलवायु प्रतिबद्धताओं को प्राप्त करने में मदद मिल सके। यह ग्रामीण भारत के लिए, विशेष रूप से गरीब और कमजोर समूहों के लिए खाद्य और आजीविका सुरक्षा का भी समर्थन कर सकता है (एफएसआई, 2021)। बढ़ती जनसँख्या और संसाधन उपयोग के कारण वर्तमान वनों पर बढ़ते दबाव को देखते हुए टीओएफ ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। वनों के विपरीत, टीओएफ सभी गैर-वन भूमि पर अलग-अलग घनत्व और विन्यास में मौजूद हैं, जो उन्हें एक महत्वपूर्ण संसाधन बनाता है। यह अनुमान लगाया गया है कि घरेलू और औद्योगिक उपयोग के लिए कुल लकड़ी की उपलब्धता का 90% से अधिक अब गैर-वन क्षेत्रों से विशेष रूप से कृषि भूमि और कुछ आयात से आता है।

यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट तथा पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा पाँच साल का संयुक्त प्रयास' ट्रीज़ आउटसाइड फॉरेस्ट्स इन इंडिया, सात राज्यो आंध्र प्रदेश, असम, हरियाणा, ओडिशा, राजस्थान, तमिलनाडु और उत्तर प्रदेश में लागू की जा रही है, जो टीओएफ क्षेत्र को 2.8 मिलियन हेक्टेयर तक बढ़ाना चाहती है। 420 मिलियन टन कार्बन डाई-ऑक्साइड के बराबर वृक्ष क्षेत्र आजीविका वृद्धि और पर्यावरण सेवाओं के साथ 13.1 मिलियन लोगों को लाभान्वित करता है (इक्राफ, 2022)। कृषिवानिकी अपनाने हेतु किसानों को प्रोत्साहित करने के लिए, प्राथमिक प्रसंस्करण और उद्यमिता विकास के लिए कौशल के साथ-साथ वर्तमान में केवल कुछ सॉफ्ट वुड प्रजातियों की तुलना में लकड़ी, बाँस, औषधीय, तिलहन, रेशम और लाख प्रजातियों के व्यापक स्तर पर प्रचार करने की आवश्यकता है। वर्ल्ड रिसोर्सेज इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया द्वारा टीओएफ क्षेत्र के लिए 50 मिलियन हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र की पहचान किया गया। आजीविका और पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं को बढ़ाते हुए भाग लेने वाले सात राज्यों में जंगलों के

बाहर पेड़ों के नीचे के क्षेत्र के विस्तार को बढ़ाने और तेज करने का प्रयास हो रहा है। 'ट्रीज़ आउटसाइड फॉरेस्ट्स इन इंडिया, स्थानीय समुदायों, सरकारों, नागरिक-समाज संगठनों, व्यवसायों और निवेशकों के साथ सहयोग की शक्ति का उपयोग करता है, जिससे जंगलों के बाहर वृक्ष क्षेत्र का विस्तार किया जा सके, क्षमता विकसित की जा सके, नीति गत परिवर्तनों को बढ़ावा दिया जा सके और स्थायी वित्त पोषण तंत्र बनाया जा सके।

ट्रीज़ आउट साइड फॉरेस्ट्स इन इंडिया के प्रमुख उद्देश्य

• संसाधन आधार बढ़ा कर, पेड़ों से प्राप्त उत्पादों को प्रमाणित करके और टिकाऊ और न्यायसंगत मूल्य श्रृंखलाओं को बढ़ावा देने, गुणवत्ता रोपण सामग्री को मानकीकृत करने और राज्य और राष्ट्रीय नीतियों को संरेखित करने के लिए उनके व्यापार को विनियमित करके वनों के बाहर वृक्ष क्षेत्र के विस्तार के लिए वातावरण को मजबूत करना।

• बिजनेस इनक्यूबेशन और एक्सटेंशन हब की स्थापना के माध्यम से पेड़-आधारित उद्यमों को बढ़ाने के लिए, व्यावसायिक सहायता और वित्तीय सेवाओं को बढ़ाकर, उच्च तकनीक, बड़े और मध्यम स्तर की नर्सरी के माध्यम से गुणवत्ता रोपण सामग्री में सुधार और कृषि प्रणालियों में पारिस्थितिक और आर्थिक वृक्ष प्रजातियों को स्थापित करने और बनाए रखने के लिए पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं सम्बन्धी योजनाओं के लिए वृक्ष क्षेत्र का विस्तार करना।

• वनों के बाहर वृक्ष तथा संबंधित उत्पादों के विस्तार के लिए तकनीकी जानकारी और विस्तार सेवाओं को बढ़ाकर गुणवत्ता और जानकारी के विस्तार में सुधार करना तथा वर्चुअल कॉल सेंटर और ऑनलाइन डैशबोर्ड के माध्यम से तकनीकी और बाजार से संबंधित जानकारी को बढ़ावा देना, खेती प्रणालियों और परिदृश्यों में पेड़ों के एकीकरण पर तकनीकी निर्णयों को सूचित करने के लिए स्मार्टफोन अनुप्रयोगों को बढ़ावा देना, और लक्षित राज्यों में विस्तार प्रभाव में तेजी लाने के लिए अनुसंधान और विस्तार करना (www.cifor-icraf.org)

प्राथमिक बिन्दु

• वृक्ष आधारित और कृषिवानिकी अनुसंधान और विस्तार को मजबूत करना, अर्थात अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं के समर्थन में वृद्धि करना।

• डिजिटल समर्थन सहित विस्तार और वित्तीय सहायता प्रणाली को मजबूत करना।

• गुणवत्ताप्रद पौध स्टॉक की उपलब्धता को सुलभ बनाने के लिए नर्सरी पंजीकरण एवं प्रमाणन को मजबूत बनाना।

• हितधारकों को औपचारिक रूप प्रदान करना।

• ट्रीज़ आउटसाइड फॉरेस्ट्स के लिए अनुकूल फसल और ढुलान नियम को लागू करना।

• मूल्य संवर्धन पर लकड़ी/लकड़ी आधारित कुटीर उद्योगों को कृषि आधारित दर्जा प्रदान करना।

मूल सिद्धांत

अभिव्यक्ति 'वनों के बाहर पेड़', जिसका भारत में सामाजिक वानिकी का एक मजबूत अर्थ है, सामान्यतः यह प्रयोग किया जाने वाला शब्द नहीं है। पर्यावरण और वन मंत्रालय के अंतर्गत काम करने वाली एफएसआई ने गैर-वन क्षेत्रों में पेड़ों को नामित करने के लिए गैर-वन क्षेत्र से परिभाषित किया है। इस शब्द में पारंपरिक या राजपत्रित संरक्षित वनों या वन भंडार के अतिरिक्त अन्य सभी क्षेत्र शामिल हैं। गैर-वन क्षेत्रों को आठ श्रेणियों में विभाजित किया गया है:

1. 0.1 हेक्टेयर (सामाजिक वानिकी) के अंतर्गत घरों के आस-पास और वुडलॉट की सीमा वाले पेड़
2. स्वाभाविक रूप से बढ़ रहे पेड़ या सांप्रदायिक या निजी भूमि पर वृक्षारोपण
3. 0.1 हेक्टेयर से अधिक ब्लॉक वृक्षारोपण
4. तालाबों में और उसके आसपास लगाए गए पेड़
5. सड़कों के किनारे पेड़
6. रेलवे की सीमा से लगे पेड़
7. नहरों के किनारे लगे पेड़
8. अन्य श्रेणियाँ जो उपरोक्त में नहीं हैं, जिनमें घरों के आस-पास वाले वृक्ष भी सम्मिलित हैं।

वनों के बाहर उपलब्ध वृक्षों के लाभ

यह सर्वविदित है कि ग्रामीण जनता को भोजन, लकड़ी और ईंधन प्रदान करने, कार्बन पृथक्करण, मिट्टी के कटाव की रोकथाम, जैव विविधता संरक्षण, मरुस्थलीकरण की जाँच, वन्यजीव गलियारों की स्थापना और माइक्रोक्लाइमेटिक स्थिरीकरण में टीओएफ की भूमिका काफी महत्वपूर्ण है। यह ग्रामीण जन के लिए भोजन, सामग्री, आय, रोजगार और आजीविका प्रदान करते हैं। साथ ही स्वच्छ हवा और पानी, जानवरों के लिए आवास और जलवायु परिवर्तन में सुधार जैसी महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ भी प्रदान करते हैं। वनों के बाहर के वृक्ष, वनों को बचाने में मदद कर सकते हैं। टीओएफ-आधारित लकड़ी और औषधीय उत्पाद, वनों से प्राप्त उत्पादों के प्रमुख विकल्प के रूप में उभर रहे हैं और जंगलों पर दबाव

को कम कर सकते हैं। कृषिवानिकी में टीओएफ द्वारा आजीविका सुरक्षा, छोटे और सीमांत किसानों के लिए जलवायु-उपयुक्त कृषि और उद्योगों को गुणवत्ता युक्त कच्चे माल की निरंतर आपूर्ति से प्रत्यक्ष लाभ होता है। लाभों को प्राप्त करने के लिए, लकड़ी आधारित और हर्बल उद्योग के साथ एक संरचित प्रयास अनिवार्य है, जिससे कागज की लुगदी, अखबारी कागज और लकड़ी जैसी बुनियादी चीजों के आयात पर वर्तमान निर्भरता कम हो जाती है।

कृषि वानिकी में वनों की अतिरिक्त भूमि पर वृक्ष

वर्तमान परिदृश्य में, कृषिवानिकी पारंपरिक फसलों के संयोजन में जंगलों के बाहर वृक्षों को अपनाने का एक मजबूत विकल्प है। कृषि के विविधीकरण के लिए फार्म और एग्रोफोरेस्ट्री को एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में स्वीकार किया गया है। पोपलर और यूकेलिप्टस क्लोन से जुड़े कृषि वानिकी मॉडल लाभप्रदता स्थापित करते हैं। शहरी परिदृश्य में पेड़ हवा को शुद्ध करने में मदद करते हैं और उनमें से कई में जहरीले रसायनों को अवशोषित करने की क्षमता भी होती है। कृषि वानिकी नीति 2014 और खेत के मेड़ों के पेड़ों के लिए सरकार की पहल न केवल तात्कालिक आवश्यकताओं को पूरा करेगी बल्कि परिदृश्य को भी बदल देगी। लकड़ी, चारा, ईंधन, आदि के एक साथ उत्पादन के माध्यम से आजीविका में सुधार के साथ-साथ मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार और बदलते जलवायु प्रभावों के शमन के संदर्भ में ऑन-फार्म पेड़ों के कई लाभों को महसूस किया गया है। कृषिवानिकी में इन वृक्षों को अपनाने के लिए भूमि की उपलब्धता के आकार, क्षेत्र में वृक्ष प्रजातियों की उपलब्ध मांग और आपूर्ति, विपणन सुविधाएँ, प्रजातियों के चयन, गुणवत्ता रोपण सामग्री के स्रोत, रोपण डिजाइन, लकड़ी और एनटीएफपी की कटाई, भंडारण आदि महत्वपूर्ण कदम है। सबसे महत्वपूर्ण कदम पेड़ों के वाणिज्यिक अंत उत्पादों का विपणन है, जो किसानों को अधिक पेड़ उगाने के लिए प्रोत्साहित करता है।

उत्तर प्रदेश में वनों के बाह्य क्षेत्र में वृक्ष-वर्तमान परिदृश्य

उत्तर प्रदेश तीन कृषि-जलवायु क्षेत्रों अर्थात मध्य गंगा के मैदानी क्षेत्र (क्षेत्र-IV), ऊपरी गंगा के मैदानी क्षेत्र (क्षेत्र-V) और मध्य पठार और पहाड़ी क्षेत्र (क्षेत्र-VII) के अंतर्गत आता है। घाटी क्षेत्रों में उपजाऊ और समृद्ध मिट्टी है। उत्तर प्रदेश सरकार के पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन विभाग और यूएस एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट (यूएसएआईडी) ने 31 जनवरी, 2023 को उत्तर प्रदेश में 'ट्रीज़ आउटसाइड फॉरेस्ट्स इन इंडिया' कार्यक्रम शुरू करने की घोषणा की, जो राज्य में पारंपरिक वनों के बाहर वृक्षों के क्षेत्र का तेज़ी से विस्तार करने के लिये किसानों, कंपनियों और अन्य निजी संस्थानों को एक साथ लाएगा। नई पहल कार्बन अनुक्रम को बढ़ाएगी, स्थानीय समुदायों का समर्थन करेगी और कृषि की जलवायु लचीलापन को मजबूत करेगी, जिससे वैश्विक जलवायु परिवर्तन शमन और अनुकूलन लक्ष्यों का समर्थन होगा।

उत्तर प्रदेश ने लंबे समय से वन क्षेत्रों के बाहर वृक्षों के आवरण में सुधार पर एक उच्च प्राथमिकता रखी है, जैसा कि जलवायु परिवर्तन पर अपनी राज्य कार्य योजना में और किसानों को कार्बन बाजारों से जोड़ने के अपने काम के माध्यम से कृषि वानिकी के एकीकरण या खेती प्रणालियों में पेड़ों के एकीकरण द्वारा प्रदर्शित किया गया है। टीओएफ कार्यक्रम राज्य की प्रगति पर आधारित होगा और कृषि प्रणालियों के लचीलेपन को बढ़ाने के लिए कृषि वानिकी का उपयोग करेगा, जबकि उत्तर प्रदेश में किसानों की आय में और वृद्धि भी करेगा। महत्वपूर्ण रूप से, टीओएफ पेड़-आधारित उद्यमों और कार्बन क्रेडिट की बिक्री को बढ़ावा देने और स्केल करने के लिए भारत के निजी क्षेत्र का लाभ उठाएगा, जिससे रोजगार पैदा करने और आय बढ़ाने में मदद मिलेगी। उत्तर प्रदेश में वर्तमान वृक्षावरण और टीओएफ को तालिका 1 में दर्शाया गया है।

इन पेड़ों का व्यापक रूप से उद्योगों में विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए उपयोग किया जाता है, उदाहरण के लिए, बांस का उपयोग मुख्य रूप से कागज उद्योगों में किया जाता है, बबूल का उपयोग टैनिंग सामग्री तैयार करने के लिए किया जाता है, गुटेल और सेमल माचिस की लकड़ी उद्योग में कार्यरत हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्र में किसान विभिन्न कृषि वानिकी प्रणालियों में यूकेलिप्टस, चिनार, मीलिया, आम, आँवला, सागवान, महोगनी आदि जैसे वाणिज्यिक मूल्य के टीओएफ को अपनाने

तालिका 1.उत्तर प्रदेश में वृक्षावरण और टीओएफ; स्त्रोत : एफएसआई रिपोर्ट (2021)

क्र.सं.	भौगोलिक क्षेत्र (वर्ग कि.मी.)	वृक्षावरण क्षेत्र (वर्ग कि.मी.)	वृक्षावरण (%)	वन क्षेत्र के बाहर पेड़ (वर्ग कि.मी.)	जंगलों के बाहर पेड़ (%)
1.	240924	7,421	3.08	13,096	5.44

के लिए आगे आ रहे हैं। तालिका 2 और 3 उत्तर प्रदेश के ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में शीर्ष प्रजातियों को दर्शाती है (एफएसआई, 2021).

राज्य ने अगले पाँच वर्षों में 175 करोड़ वृक्षारोपण का लक्ष्य रखा है और लकड़ी आधारित उद्योगों से जुड़ने वाली कृषि

तालिका 2. उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र में टीओएफ में शीर्ष 5 प्रजातियाँ

क्र.सं.	प्रजातियाँ	उपलब्धता (%)
1.	आम	30.25
2.	यूकेलिप्टस	18.52
3.	पॉप्लर	7.74
4.	नीम	4.90
5.	शीशम	4.88

तालिका 3. उत्तर प्रदेश के शहरी क्षेत्र में टीओएफ में शीर्ष 5 प्रजातियाँ

क्र.सं.	प्रजातियाँ	उपलब्धता (%)
1.	नीम	15.62
2.	आम	12.03
3.	यूकेलिप्टस	10.64
4.	सागौन	4.95
5.	विलायती बबूल	4.12

वानिकी नीतियों को विकसित करने की दिशा में भी काम कर रहा है। राज्य सरकार ट्रांजिट नियमों में सरलीकरण पर भी काम कर रही है। प्रत्येक आयुक्तालयों में एक हाई-टेक नर्सरी और प्रत्येक न्याय पंचायत में ग्राम-स्तरीय नर्सरी स्थापित करने के लिए प्रक्रिया की जाएगी। कृषिवानिकी प्रथाएँ न केवल जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए लाभदायक होंगी, साथ में किसानों की आय को दोगुना करने के लिए भी फायदेमंद होंगी (यूएसएआईडी, 2023)।

टीओएफ लगाना ग्रामीण आजीविका के लिए एक वरदान की तरह है क्योंकि एक तरह से वे अपनी दिन-प्रतिदिन की जरूरतों को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और दूसरी तरह से उन्हें लकड़ी के साथ-साथ एनटीएफपी के लिए वाणिज्यिक प्रजातियों की बिक्री से एक अच्छा लाभ मिलता है। यह राज्य के हरित आवरण को बढ़ाने में योगदान करते हैं और लकड़ी की मांगों को पूरा कर सकते हैं। कुछ वाणिज्यिक टीओएफ जो आजीविका सुधार के लिए फायदेमंद हैं, उन्हें चित्र 1में सूचीबद्ध किया गया है जो 12वाणिज्यिक प्रजातियों को जंगलों के बाहर पेड़ों के रूप में वर्णित करता है। यह स्पष्ट है कि तीन प्रजातियाँ, आँवला, नीम और सहजन एनटीएफपी के लिए व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। सहजन को पत्तियों के उद्देश्य के लिए इंटरक्रॉप के रूप में अपनाया जा सकता है क्योंकि इसकी पत्तियाँ सूखे और पाउडर के रूप में कई उद्योगों में बेची जाती हैं। इसी तरह आँवला फल, जो विटामिन सी का महत्वपूर्ण स्रोत हैं, खाद्य और औषधीय उद्योगों में उपयोग किए जाते हैं और किसानों के लिए लाभदायक हैं। नीम के बीज का उपयोग उद्योगों में व्यावसायिक रूप से भी किया जाता है। गम्हार और महोगनी इस क्षेत्र के लिए नई प्रजातियाँ हैं क्योंकि ये कृषि-जलवायु परिस्थितियों के अनुसार अच्छी तरह से अनुकूल हैं और बहुत अच्छा लाभ देते हैं। इस प्रकार, कृषिवानिकी में इन वाणिज्यिक वृक्ष प्रजातियों को अपनाने के लिए किसानों को प्रेरित करने के लिए उपयुक्त तकनीकी और विपणन सहायता प्रणाली के माध्यम से प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

चित्र 1: पूर्वी उत्तर प्रदेश में रोपण हेतु प्रमुख कृषि वानिकी वृक्ष

शीशम

बाँस

सागौन

गम्हार

पॉप्लर

आँवला

नीम

मीलिया

सहजन

यूकेलिप्टस

आम

महुआ

निष्कर्ष

टीओएफ ग्रामीण आजीविका और जैव विविधता संरक्षण के वैकल्पिक विकल्प के रूप में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। वनों के बाहर वृक्षों की पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ, कृषिवानिकी कार्यक्रमों के रूप में टीओएफ प्रारंभ करने की आवश्यकता पर जोर देती हैं। गाँव की सार्वजनिक भूमि पर कृषिवानिकी के रूप में टीओएफ उगाने की प्रथा ग्रामीणों के लिए वृक्ष उत्पादों-ईंधन की लकड़ी, चारा, फल/भोजन और स्थानीय चिकित्सा या कुछ नकदी के रूप में उपयोग के लिए सहायक हो सकती है। गाँवों में टीओएफ की बढ़ती संख्या निश्चित रूप से हमारे वनों की रक्षा करेगी, विशेष रूप से जो जंगल से जुड़े हैं क्योंकि स्थानीय लोगों की निर्भरता धीरे-धीरे जंगलों पर कम हो जाएगी। कम समय में उपज बढ़ाने और अच्छी गुणवत्ता के अंतिम उत्पादों के लिए, यूकेलिप्टस, गम्हार, पोपलर और मीलिया की गुणवत्ता रोपण सामग्री की उपलब्धता इस कार्य के लिए आवश्यक कदम है। सरकारी विभागों द्वारा छोटी वन नर्सरियों की स्थापना और उचित दरों पर पौधे उपलब्ध कराने से पेड़ उत्पादकों के लिए एक नया व्यावहारिक मार्ग खुलेगा।

संदर्भ

• इक्राफ (2022). भारत में वनों के बाहर के पेड़।

• एफएसआई रिपोर्ट (2011). वन सर्वेक्षण संस्थान, देहरादून।

• एफएसआई रिपोर्ट (2021). वन सर्वेक्षण संस्थान, देहरादून।

• कृषि वानिकी नीति (2014). कृषि वानिकी नीति, उत्तरप्रदेश, लखनऊ।

• यूएसएआईडी (2023).प्रेस विज्ञप्ति, टैगः चार्ज डी' एफ़ेयर्स ,यूएसएआईडी।

• www.cifor-icraf.org

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि में IoT स्मार्ट खेती की ओर एक कदम

अंजना गुप्ता* एवं आर. एल. राउत

कृषि विज्ञान केंद्र, बालाघाट, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: bloggersp2020@gmail.com

परिचय

कृषि में IoT (इंटरनेट ऑफ थिंग्स) एक तकनीक है, जो कृषि क्षेत्र में क्रांति ला रही है। इसके माध्यम से किसान अपने खेतों की निगरानी कर सकते हैं, मौसम की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं, सिंचाई को ऑटोमेट कर सकते हैं और फसल की गुणवत्ता में सुधार कर सकते हैं। आईओटी उपकरण जैसे सेंसर, ड्रोन और जीपीएस किसानों को उनके खेतों की स्थिति की जानकारी प्रदान करते हैं, जिससे वे सूचित निर्णय ले सकते हैं। इससे उत्पादकता में वृद्धि, लागत में कमी और जल संरक्षण होता है। आईओटी के कृषि अनुप्रयोगों में स्मार्ट फार्मिंग, मौसम पूर्वानुमान, सिंचाई प्रबंधन और पशु निगरानी शामिल हैं। यह तकनीक कृषि क्षेत्र को आधुनिक और स्मार्ट बना रही है।

इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) का हिंदी में मतलब "चीजों का इंटरनेट" है। यह एक ऐसी तकनीक है, जिसमें विभिन्न उपकरणों, सेंसरों, और डिवाइसों को इंटरनेट के माध्यम से एक-दूसरे से जोड़ दिया जाता है, जिससे वे डेटा का आदान-प्रदान कर सकते हैं और स्मार्ट तरीके से कार्य कर सकते हैं।

IoT के मुख्य तत्व

- **डिवाइसः** ये ऐसे उपकरण होते हैं जो डेटा कलेक्ट करते हैं, जैसे स्मार्टफोन, स्मार्टवॉच, सेंसर्स, आदि।
- **सेंसरः** ये डिवाइसों के अंदर लगे होते हैं जो भौतिक घटनाओं को मापते हैं, जैसे तापमान, गति, प्रकाश, आदि।
- **कनेक्टिविटीः** यह डेटा ट्रांसफर करने का माध्यम है, जिसमें वाई-फाई, ब्लूटूथ, और इंटरनेट शामिल है।
- **डेटा प्रोसेसिंगः** इकट्ठा किए गए डेटा को प्रोसेस करने के लिए सॉफ्टवेयर और क्लाउड सर्विसेस का उपयोग किया जाता है।
- **यूजर इंटरफेसः** इसके माध्यम से यूजर डेटा देख सकते हैं और उपकरणों को नियंत्रित कर सकते हैं।

IoT के उपयोग

- **स्मार्ट होम (Smart Home):** घर के उपकरणों को स्मार्ट तरीके से संचालित किया जा सकता है, जैसे लाइट्स, एसी, टीवी एवं पंखे आदि।
- **स्मार्ट सिटी (Smart City):** ट्रैफिक लाइट्स, पानी

की सप्लाई, और सार्वजनिक सेवाओं को बेहतर बनाने के लिए IoT का उपयोग किया जाता है।

• **स्वास्थ्य देखभालः** IoT के माध्यम से मेडिकल उपकरणों को मॉनिटर किया जा सकता है, जिससे मरीज की सेहत की जानकारी रियल-टाइम में मिलती रहती है।

• **कृषिः** खेतों में फसलों की देखभाल के लिए सेंसरों का उपयोग किया जाता है, जिससे पानी की बचत होती है और पैदावार बढ़ती है।

IoT की तकनीक ने हमारे जीवन को अधिक सुविधाजनक और स्मार्ट बना दिया है और आने वाले समय में इसका उपयोग और भी बढ़ेगा।

कृषि में इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) का उपयोग खेती को स्मार्ट, कुशल और लाभकारी बनाने के लिए किया जा रहा है। IoT तकनीक किसानों को उनके फसलों, मिट्टी, मौसम, और सिंचाई की स्थिति की जानकारी रियल-टाइम में प्रदान करती है, जिससे वे बेहतर और समय पर निर्णय ले सकते हैं।

कृषि में IoT के उपयोग

क) स्मार्ट सिंचाईः स्मार्ट सिंचाई एक आधुनिक कृषि तकनीक है, जो IoT की मदद से फसलों को सिंचाई के लिए आवश्यक जल की सही मात्रा और समय पर सुनिश्चित करती है। इसमें विभिन्न सेंसर, कनेक्टेड डिवाइस और स्वचालित प्रणाली का उपयोग होता है, जिससे किसानों को फसल की स्थिति, मिट्टी की नमी एवं मौसम की जानकारी आदि के आधार पर सही समय पर सिंचाई करने में मदद मिलती है।

स्मार्ट सिंचाई के लाभ

• **जल की बचतः** स्मार्ट सिंचाई सिस्टम में सेंसर द्वारा मिट्टी की नमी को मापा जाता है, जिससे फसलों को उतना ही जल मिलता है जितना फसलों को जल की आवश्यकता होती है। इससे जल का अपव्यय नहीं होता।

• **उत्पादन में वृद्धिः** फसलों को सही समय पर सही मात्रा में पानी मिलने से उनकी बढ़त अच्छी होती है और उत्पादन में वृद्धि होती है।

• **स्वचालित प्रणालीः** यह प्रणाली पूरी तरह से स्वचालित होती है, जिससे किसान को बार-बार फसल की स्थिति देखने की आवश्यकता नहीं होती।

• **पर्यावरण संरक्षणः** जल की बचत के साथ-साथ रासायनिक खाद और कीटनाशकों के उपयोग को भी नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। स्मार्ट सिंचाई में विभिन्न सेंसर, जैसे मिट्टी की नमी सेंसर, मौसम सेंसर आदि का उपयोग किया जाता है। ये सेंसर फसल की जरूरतों के अनुसार डेटा संग्रहित करते हैं और उस डेटा को क्लाउड में भेजते हैं। वहाँ से किसान को मोबाइल या कंप्यूटर के माध्यम से फसल की स्थिति की जानकारी मिलती है। इसके अलावा, स्मार्ट सिंचाई सिस्टम फसल की जरूरत के अनुसार पानी की आपूर्ति को स्वचालित रूप से नियंत्रित करता है।

ख) मिट्टी की निगरानी (Soil Monitoring): मिट्टी की निगरानी, स्मार्ट सिंचाई के लिए एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह प्रक्रिया किसानों को उनकी मिट्टी की स्थिति की जानकारी देने में मदद करती है, जिससे वे पानी, उर्वरक और अन्य संसाधनों का सही ढंग से उपयोग कर सकें।

मुख्य तत्व

• **सेंसर का उपयोगः** मिट्टी में नमी, तापमान, पीएच स्तर, और अन्य आवश्यक पोषक तत्वों का पता लगाने के लिए विभिन्न प्रकार के सेंसर का उपयोग किया जाता है।

• **डेटा संग्रहण और विश्लेषणः** सेंसर से एकत्रित डेटा को प्वज् प्लेटफॉर्म पर भेजा जाता है, जहाँ इसे विश्लेषित किया जाता है।

• **स्वचालित निर्णयः** विश्लेषण के आधार पर, सिस्टम स्वचालित रूप से सिंचाई को नियंत्रित कर सकता है, जिससे पानी की बर्बादी को कम किया जा सके।

• **रियल-टाइम अलर्ट्सः** किसान को रियल-टाइम अलर्ट्स मिलते हैं, जिससे वे अपने खेत की स्थिति के बारे में त्वरित निर्णय ले सकते हैं।

• **पानी की बचतः** मिट्टी की नमी के आधार पर स्वचालित सिंचाई के माध्यम से पानी की बचत होती है।

• **फसल की उपज में वृद्धिः** पोषक तत्वों और पानी की सही मात्रा प्रदान करने से फसल की उपज में वृद्धि होती है।

• **पर्यावरणीय लाभः** जल और उर्वरक का सही उपयोग पर्यावरण पर सकारात्मक प्रभाव डालता है।

मिट्टी की निगरानी की यह तकनीक किसानों को अधिक उत्पादकता प्राप्त करने और संसाधनों के सही उपयोग में मदद करती है, जिससे कृषि प्रक्रिया अधिक कुशल और लाभदायक बनती है।

ग) फसल स्वास्थ्य मॉनिटरिंग (Crop Health Monitoring): फसल स्वास्थ्य मॉनिटरिंग, एक ऐसी तकनीक है, जो किसानों को उनकी फसलों की स्थिति की सटीक जानकारी प्रदान करने के लिए डिजाइन की गई है। इसमें इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) सेंसर, ड्रोन और अन्य उन्नत तकनीकों का उपयोग किया जाता है।

फायदे

• **रोगों और कीटों का शीघ्र पता लगानाः** किसान प्रारंभिक स्तर पर ही फसल के रोगों और कीटों का पता लगा सकते हैं, जिससे समय पर इलाज संभव हो जाता है।

• **उपज में वृद्धिः** स्वस्थ फसलें बेहतर उत्पादन देती हैं, जिससे उपज में वृद्धि होती है।

• **संवेदनशील निर्णयः** फसल की स्वास्थ्य स्थिति के बारे में सटीक जानकारी होने से किसान समय पर सही निर्णय ले सकते हैं।

• **लागत में कमीः** इस प्रणाली से खेत में बर्बादी और अनावश्यक खर्च को कम किया जा सकता है।

फसल स्वास्थ्य मॉनिटरिंग तकनीक कृषि को अधिक कुशल, वैज्ञानिक और लाभदायक बनाती है, जिससे किसान बेहतर उत्पादन के साथ-साथ अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं।

• **मौसम की भविष्यवाणी (Weather Forecasting):** मौसम की भविष्यवाणी कृषि और दैनिक जीवन दोनों के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यह किसानों को अपनी फसल की सुरक्षा और बेहतर प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करती है। मौसम की भविष्यवाणी में तापमान, वर्षा, आर्द्रता, हवा की गति, और दिशा जैसी जानकारी शामिल होती है।

मुख्य तत्व

• **सेंसर और ड्रोन का उपयोगः** IoT फसलों की नमी, तापमान, पोषक तत्व स्तर, और अन्य आवश्यक पैरामीटर्स को सेंसर द्वारा मापते हैं।

• **ड्रोनः** ड्रोन का उपयोग खेतों की हवाई तस्वीरें लेने और फसलों की स्थिति का आकलन करने के लिए किया जाता है। ये तस्वीरें और डेटा विश्लेषण के लिए IoT प्लेटफॉर्म पर भेजी जाती हैं।

• **डेटा विश्लेषणः** सेंसर और ड्रोन से प्राप्त डेटा का विश्लेषण किया जाता है, ताकि फसलों की स्वास्थ्य स्थिति का पता लगाया जा सके। इसके माध्यम से फसलों में किसी भी प्रकार की बीमारी, कीट, या पोषक तत्व की कमी का पता लगाया जा सकता है।

• **रियल-टाइम निगरानीः** IoT सिस्टम से जुड़ी तकनीकों के माध्यम से किसान अपने स्मार्टफोन या कंप्यूटर पर रियल-टाइम डेटा देख सकते हैं और फसल की स्थिति के बारे में महत्वपूर्ण निर्णय ले सकते हैं।

• **प्राकृतिक आपदाओं की चेतावनीः** फसल स्वास्थ्य मॉनिटरिंग सिस्टम मौसम की स्थिति पर भी नजर रखता है और किसान को संभावित प्राकृतिक आपदाओं (जैसे ओला-वृष्टि, सूखा आदि) के बारे में पूर्व चेतावनी देता है।

घ) पूर्वानुमान में सहायक

ौसम पूर्वानुमान और अन्य सतर्कता प्रणाली के माध्यम से आपातकालीन स्थितियों का पूर्वानुमान लगाया जा सकता है, जिससे आवश्यक तैयारियाँ समय पर की जा सकती हैं।

इन निष्कर्षों के आधार पर, IoT तकनीक का उपयोग कृषि क्षेत्र में बड़ी संभावनाएं प्रदान करता है और खेती को अधिक स्मार्ट, कुशल और पर्यावरण के अनुकूल बना सकता है।

मुख्य तत्व

• **डेटा संग्रहः** सैटेलाइट्स और रडाररू सैटेलाइट्स और मौसम रडार, वातावरण की स्थिति की तस्वीरें और डेटा एकत्र करते हैं, जिससे मौसम की बदलती परिस्थितियों का सटीक आकलन किया जा सकता है।

• **मौसम स्टेशनः** स्थानीय मौसम स्टेशन भी तापमान, आर्द्रता, वायु दाब, और अन्य मौसम संबंधी डेटा को रिकॉर्ड करते हैं और इसे भविष्यवाणी के लिए भेजते हैं।

• **कंप्यूटर मॉडलिंगः** उन्नत कंप्यूटर मॉडल और सॉफ्टवेयर इस डेटा का विश्लेषण करते हैं और भविष्य के मौसम की स्थितियों का अनुमान लगाते हैं। यह मॉडल वायुमंडलीय

स्थितियों के विभिन्न संभावित परिदृश्यों को समझते हुए पूर्वानुमान तैयार करते हैं।

पूर्वानुमान के प्रकार

• **स्वल्पकालिक पूर्वानुमान (Short & Term Forecast):** यह भविष्यवाणी कुछ घंटों से लेकर एक या दो दिनों तक की होती है। इसमें तुरंत प्रभाव डालने वाले मौसम परिवर्तन जैसे वर्षा, तूफान आदि का अनुमान लगाया जाता है।

• **दीर्घकालिक पूर्वानुमान (Long & Term Forecast) :** इसमें हफ्तों, महीनों, या मौसम के बदलाव का पूर्वानुमान शामिल होता है, जो कृषि योजनाओं के लिए बेहद महत्वपूर्ण है।

• **IoT और स्मार्ट टेक्नोलॉजीः** स्मार्ट उपकरण अब IoT आधारित स्मार्ट उपकरण और सेंसर भी मौसम की जानकारी देने में मदद कर रहे हैं, जो किसानों को उनके मोबाइल या कंप्यूटर पर रियल-टाइम अपडेट प्रदान करते हैं।

फायदे

• **फसल प्रबंधन में सहायताः** मौसम की भविष्यवाणी से किसानों को यह पता चलता है कि कब बारिश होगी, कब सूखा पड़ सकता है, जिससे वे अपनी सिंचाई और बुवाई के कार्यक्रम को बेहतर ढंग से योजना बना सकते हैं।

• **प्राकृतिक आपदाओं की चेतावनीः** यह संभावित प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, तूफान, सूखा आदि के बारे में अग्रिम जानकारी देती है, जिससे किसानों को समय रहते सुरक्षा उपाय करने का मौका मिलता है।

• **उपज की सुरक्षाः** सही समय पर मौसम की जानकारी मिलने से फसल को होने वाले संभावित नुकसान को रोका जा सकता है, जिससे उत्पादन बढ़ता है और बर्बादी कम होती है।

• **लागत में कमीः** बेहतर मौसम पूर्वानुमान के आधार पर किसान फसलों के लिए सही समय पर खाद, कीटनाशक, और अन्य संसाधनों का उपयोग कर सकते हैं, जिससे लागत में कमी आती है।

• **मौसम की भविष्यवाणीः** विशेषकर कृषि क्षेत्र में, किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण उपकरण है, जो उन्हें सूचित निर्णय लेने में मदद करती है, जिससे उनकी उत्पादकता और सुरक्षा बढ़ती है। IoT उपकरण मौसम की जानकारी को वास्तविक समय में एकत्र करते हैं और किसानों को मौसम के बदलावों की जानकारी देते हैं।इससे किसानों को फसल की बुवाई, कटाई और अन्य कृषि कार्यों की योजना बनाने में मदद मिलती है।

ड़) गोदाम प्रबंधन (Warehouse Management): गोदाम प्रबंधन (Warehouse Management) का मतलब होता है गोदाम या वेयरहाउस में वस्तुओं और सामग्री के

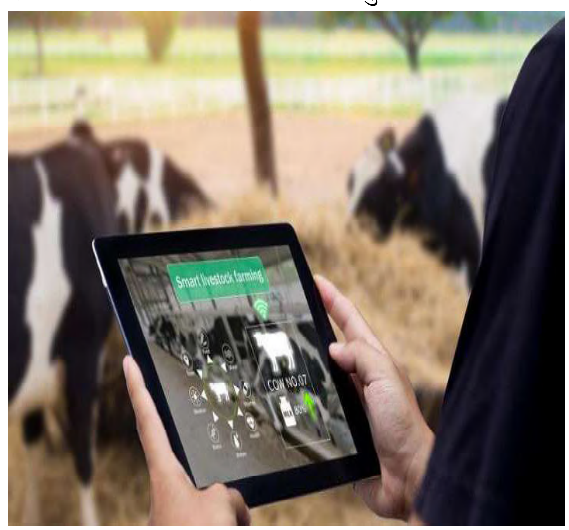

संग्रहण, संगठन और वितरण की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करना। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना होता है कि गोदाम में वस्तुएं सही तरीके से संग्रहीत हों, उनका ट्रैकिंग ठीक से हो, और समय पर वितरण किया जा सके।

मुख्य तत्व

• **संग्रहण और संगठनः** वस्तुओं को उचित स्थान पर संग्रहित करना और व्यवस्थित करना, ताकि उन्हें आसानी से पाया और पहुँचाया जा सके।

• **इन्वेंट्री प्रबंधनः** वस्तुओं की सूची और मात्रा का सही तरीके से ट्रैकिंग करना, ताकि स्टॉक की कमी या अधिकता न हो।

• **आदेश पूर्तिः** ग्राहकों या अन्य विभागों से आए आदेशों को समय पर और सही तरीके से पूरा करना।

• **प्रवेश और निकासी प्रबंधनः** गोदाम में वस्तुओं के आगमन और निकासी की प्रक्रिया को प्रबंधित करना।

• **सुरक्षाः** गोदाम में सामग्री की सुरक्षा सुनिश्चित करना और चोरी या नुकसान से बचाव के उपाय करना।

• **टेक्नोलॉजी का उपयोगः** आधुनिक तकनीकों जैसे कि बारकोडिंग, RFID और वेयरहाउस मैनेजमेंट सिस्टम (MS) का उपयोग करके प्रक्रियाओं को स्वचालित और दक्ष बनाना।

• गोदाम प्रबंधन एक महत्वपूर्ण व्यवसायिक कार्य है जो आपूर्ति श्रृंखला के सुचारू संचालन के लिए आवश्यक है।

• IoT तकनीक से गोदामों में भंडारित अनाज और अन्य उत्पादों की स्थिति, तापमान और नमी, आदि को मॉनिटर किया जा सकता है,।

• इससे भंडारण में होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है और उत्पाद की गुणवत्ता बनाए रखी जा सकती है।

च) पशुपालन (Livestock Monitoring): पशुपालन (Livestock Monitoring) का मतलब होता है मवेशियों और अन्य पशुओं की देखभाल, निगरानी और प्रबंधन की प्रक्रिया। इसका उद्देश्य पशुओं के स्वास्थ्य, उत्पादन और जीवनस्तर को बेहतर बनाना होता है। यहाँ कुछ मुख्य पहलु हैं जो पशुपालन के अंतर्गत आते है।

• **टेक्नोलॉजी का उपयोगः** पशुपालन में आधुनिक तकनीकों जैसे कि ट्रैकिंग सिस्टम, वेयरलेस सेंसर्स, और डेटा एनालिटिक्स का उपयोग करके पशुओं की गतिविधियों और स्वास्थ्य की निगरानी करना।

• पशुपालन में इन पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, पशुओं की भलाई और उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है।

• IoT का उपयोग पशुओं के स्वास्थ्य और उनके खानपान को मॉनिटर करने के लिए भी किया जा रहा है।

• इससे पशुओं की बेहतर देखभाल संभव हो पाती है और दूध उत्पादन या अन्य उत्पादकता में वृद्धि होती है।

फायदे

• **संसाधन प्रबंधन में सुधारः** IoT सेंसर और डिवाइसेस के माध्यम से जल, ऊर्जा, और अन्य संसाधनों का सटीक प्रबंधन किया जा सकता है, जिससे जलवायु की स्थितियों के अनुसार संसाधनों का बेहतर उपयोग सुनिश्चित होता है।

• **फसल उत्पादन में वृद्धिः** सही समय पर डेटा प्राप्त करने और विश्लेषण करने की सुविधा से फसलों की वृद्धि और उत्पादन को अनुकूलित किया जा सकता है। इससे उच्च गुणवत्ता और अधिक मात्रा में फसलें उगाई जा सकती हैं।

• **समय की बचत और कार्य दक्षताः** स्वचालित प्रणालियाँ और स्मार्ट उपकरणों के उपयोग से खेती के काम को जल्दी और अधिक प्रभावी तरीके से किया जा सकता है, जिससे समय और श्रम की बचत होती है।

• **बीमारियों और कीटों की निगरानीः** IoT डिवाइसेस की मदद से फसलों की स्वास्थ्य स्थिति और कीटों के हमलों की शीघ्र पहचान की जा सकती है, जिससे समय पर उपचार किया जा सकता है और फसल की गुणवत्ता बनाए रखी जा सकती है।

• **पशुपालन में सुधारः** IoT का उपयोग पशुओं की स्वास्थ्य स्थिति, आहार, और गतिविधियों की निगरानी के लिए किया जा सकता है, जिससे पशुपालन में सुधार और उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।

• **डेटा-संचालित निर्णय लेने में मददः** IoT उपकरणों से प्राप्त डेटा का विश्लेषण करके किसानों को बेहतर निर्णय लेने में मदद मिलती है, जो कृषि प्रक्रियाओं की प्रभावशीलता को बढ़ाता है।

• **पर्यावरणीय प्रभाव में कमीः** सटीक संसाधन प्रबंधन और कीटनाशकों के नियंत्रित उपयोग से पर्यावरणीय प्रभाव को कम किया जा सकता है, जिससे सतत कृषि को बढ़ावा मिलता है।

निष्कर्ष

स्मार्ट खेती का उद्भव कृषि पद्धतियों में एक परिवर्तनकारी बदलाव का प्रतीक है, जिसका कृषि के भविष्य पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। यह अधिक सटीक डेटा और अधिक कनेक्टेड सिस्टम के साथ, किसान अपनी फसलों के बारे में बेहतर, अधिक सूचित निर्णय लेने में सक्षम हैं, जिसके परिणामस्वरूप बेहतर उपज और कम बर्बादी होती है। इसलिए ऐसी प्रणाली का होना पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है जो हमारी बढ़ती खाद्य आवश्यकताओं को पूरा कर सके। स्मार्ट खेती कृषि कार्यों को अनुकूलित करने, उत्पादकता बढ़ाने और पारंपरिक खेती की असंख्य चुनौतियों से निपटने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण के रूप में उभरी है। यह अधिक टिकाऊ, कुशल और लचीले कृषि क्षेत्र की दिशा में एक आदर्श बदलाव की शुरुआत करता है। जैसे-जैसे हम स्मार्ट खेती प्रौद्योगिकियों की क्षमता का लाभ उठाना जारी रखते हैं और उन्हें मुख्यधारा की कृषि पद्धतियों में एकीकृत करते हैं, हम बढ़ी हुई उत्पादकता, बढ़ी हुई लाभप्रदता और उन्नत पर्यावरणीय प्रबंधन के नए अवसरों को अनलॉक कर सकते हैं, जिससे खेती के लिए एक उज्जवल और अधिक टिकाऊ भविष्य सुनिश्चित हो सके।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कीवी फल

कल्लोल कुमार परामानिक*, ए. के. शुक्ला, जीतेन्दर कुमार, संतोष वटपाड़े एवं मधु पटियल
आई. सी. ए. आर-आई. ए. आर. आई, रीजनल स्टेशन, शिमला
पत्राचारकर्ता: kallolpramanick1964@gmail.com

परिचय

कीवी फल (ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड) या चीनी करौदा, जीनस एक्टिनिडिया में जंगली लता की कई प्रजातियों की खाद्य बेरी है। *एक्टिनिडिया डेलिसिओसा* किस्म 'हेवर्ड' का फल अंडे का आकार, लंबाई में 5-8 सेमी (2.0-3.1 इंच) और व्यास में 4.5-5.5 सेमी (1.8-2.2 इंच) होता है। इसमें एक पतली, रेशेदार, खट्टी लेकिन खाने योग्य हल्की भूरी त्वचा और हल्के हरे या सुनहरे गुदे के साथ छोटे, काले खाद्य बीज होते हैं। फल में एक नरम बनावट होती है, जिसमें एक मीठा और अनोखा स्वाद होता है। 2017 में, चीन ने कीवी के कुल विश्व का 50% उत्पादन किया है। 1904 की नर्सरी कैटलॉग में शुरुआती किस्मों का वर्णन किया गया था। 1962 में, न्यूजीलैंड के उत्पादकों ने इसे निर्यात विपणन के लिए 'कीवीफ्रूट' कहना शुरू किया, न्यूजीलैंड ऑस्ट्रेलिया में 'कीवी' शब्द का अर्थ कीवी पक्षी से है। कीवी फ्रूट को 1974 में व्यावसायिक रूप से विश्वभर में अपनाया गया, तब से जीनस एक्टिनिडिया सभी व्यावसायिक रूप से उगाया गये है, यह हरे कीवी फ्रूट के एक आम नाम बन गया है। कीवी उन कुछ हालिया परिचयों में से है, जो भारत के उप हिमालयी क्षेत्र में अपनी जबरदस्त व्यावसायिक क्षमता के कारण लोकप्रियता में आगे हैं।

भारत में, कीवी को पहली बार बैंगलोर के लाल बाग गार्डन (1960) में एक सजावटी पेड़ के रूप में लगाया गया था, इसकी कली खिल नहीं पायी थी। बाद में खेती के उद्देश्य से इसे 1963 में यूएसए से आईएआरआई, क्षेत्रीय स्टेशन, शिमला (एच. पी.) में लगाया गया था। व्यापक अनुसंधान और विकास के समर्थन के साथ भारत में पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी वाणिज्यिक खेती को बढ़ाया गया है जहाँ इसकी शीत तापमान की आवश्यकता होती है।

कीवी मध्य और पूर्वी चीन का मूल फल है। सोंग राजवंश के दौरान 12 वीं शताब्दी में कीवीफ्रूट का पहला रिकॉर्ड किया गया विवरण मिलता है। 20 वीं शताब्दी की शुरुआत में, कीवी की खेती चीन से न्यूजीलैंड तक फैल गई, जहाँ पहले वाणिज्यिक वृक्षारोपण हुआ। कीवी फल द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान न्यूजीलैंड में तैनात ब्रिटिश और अमेरिकी सैनिकों के साथ लोकप्रिय हो गया और 1940 और 1950 के दशक के दौरान न्यूजीलैंड में, कीवी फल व्यावसायिक रूप से व्यवहार्य खेती, कृषि प्रथाओं, भंडारण और विपणन के विकास के माध्यम से एक कृषि वस्तु बन गया।

कीवी या चीनी करौदा न्यूजीलैंड, इटली, अमेरिका, चीन, जापान, ऑस्ट्रेलिया, फ्रांस, चिली और स्पेन में व्यापक रूप से उगाया जाता है। कीवी फल का उच्च पोषक और औषधीय महत्व है। यह विटामिन बी, सी और फॉस्फोरस, पोटेशियम और कैल्शियम जैसे खनिजों का एक समृद्ध स्रोत है। कीवी फ्रूट को सलाद या मिठाई में अन्य फलों के साथ ताजा या संयुक्त रूप से खाया जाता है। इसका उपयोग स्क्वैश और शराब की तैयारी के लिए भी किया जाता है। भारत में, कीवी ज्यादातर हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, जम्मू-कश्मीर, सिक्किम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, नीलगिरि की पहाड़ियों और केरल की पहाड़ियों में उगायी जाती है, जिसमें 4 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में 12 मीट्रिक टन उत्पादन होता है। 2017 में, कीवी का वैश्विक उत्पादन 4.04 मिलियन टन था, जिसमें चीन दुनिया

के कुल उत्पादन का 50% करता था। इटली, न्यूजीलैंड, ईरान और चिली अन्य प्रमुख उत्पादक देश है। कीवी के पौधे का उचित प्रशिक्षण और छँटाई के साथ एक आदर्श स्थिति, उपज 25 टन/ हेक्टेयर और अधिक हो जाती है।

कीवी फल के पोषक तत्व

कीवी छोटे फल होते हैं, जो बहुत स्वाद और स्वास्थ्य लाभदायक होते हैं। उनका हरा गूदा मीठा और स्वादिष्ट होता है। यह विटामिन सी, विटामिन के, विटामिन ई, फोलेट और पोटेशियम जैसे पोषक तत्वों से भी भरपूर होता है। इसमें सारे एंटी-ऑक्सिडेंट हैं और फाइबर का एक अच्छा स्रोत हैं।

कीवी फल की त्वचा पूरी तरह से खाने योग्य होता है और घने पोषक तत्व फल को और भी अधिक पौष्टिक बनाता है। एक हालिया अध्ययन से पता चलता है कि केवल गूदा खाने की तुलना में फल की त्वचा के साथ खाने से फाइबर ज्यादा मिलता है।

कच्चे कीवी फल में एक्टिनिडैन (एक्टिनिडिन) भी होता है, जो पाचन सहायता के रूप उपयोगीं भी होता है। एक्टिनिडैन कच्चे कीवी फल को दूध या किसी अन्य डेयरी उत्पादों वाली मिठाई में उपयोग के लिए अनुपयुक्त है क्योंकि एंजाइम दूध प्रोटीन को पचाता है। चूँकि एक्टिनिडेन प्रोटीन को पचा देता है, जिससे मिठाई या तो द्रवीभूत हो जाती है या जमने से रोक देती है इसलिए कच्चे कीवी फल का प्रयोग मिठाइयों के बनाने में नहीं किया जाता है।

कीवी फल की त्वचा फ्लेवोनॉयड एंटी-ऑक्सिडेंट्स का एक अच्छा स्रोत है। कीवी के बीज के तेल में औसतन 62% अल्फा-लिनोलेनिक एसिड यह एक ओमेगा-3 फैटी एसिड होता है, जो संभावित रूप से रक्त के थक्कों के जोखिम को कम करता है। इसमें विटामिन ई और थोड़ी मात्रा में विटामिन ए और पोटेशियम भी होता है। कीवी फल के गूदे में कैरोटिनॉयड्स होते हैं, जैसे कि प्रोविटामिन ए, बीटा-कैरोटीन, ल्यूटिन और ज़ेक्सैंथिन।

ग्लूकोज और फ्रुक्टोज का अनुपात 1:1 पाया जाता है, इसलिए मधुमेह के रोगी के लिए भी फल का सेवन करने की सलाह दी जाती है। कीवी फल में साइट्रिक, मैलिक, क्विनिक एसिड पाये जाते हैं। 30 अन्य पिगमेंट के साथ क्लोरोफिल और कैरोटेनॉयड्स, फल के गूदे को हरे रंग का रंग प्रदान करते हैं।

100 ग्राम की मात्रा में, हरी कीवी फल 61 कैलोरी ऊर्जा प्रदान करता है, 83% पानी और 15% कार्बोहाइड्रेट होता है, जिसमें नगण्य प्रोटीन और वसा होता है। यह विटामिन सी (112% DV) और विटामिन K (38% DV) में विशेष रूप से समृद्ध (दैनिक मूल्य, DV का 20% या अधिक) है, इसमें विटामिन ई (10% DV) मामूली है। गोल्ड कीवी में लगभग समान पोषण मूल्य होता है, हालांकि केवल 100 ग्राम मात्रा (194 DV,) में विटामिन सी की उच्च मात्रा होती है। फलों में कैल्शियम, ताँबा, लोहा, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, जस्ता की भी अच्छी मात्रा होती है।

कई वैज्ञानिकों का मानना है कि सोडियम-टू-पोटेशियम अनुपात हृदय स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। कीवीफ्रूट में यह अनुपात बेहद अनुकूल है। फलों में विटामिन सी की उच्च मात्रा इसे एक प्रभावी प्रतिरक्षा बूस्टर बनाती है। कीवी का नियमित सेवन अच्छे नेत्र स्वास्थ्य को सुनिश्चित करता है, जो कि मैक्यूलर डिजनरेशन को रोकता है। कीवी फल में पर्याप्त मात्रा में इनोसिटोल होता है, जो कि अवसाद के इलाज का एक शानदार तरीका है।

कीवीफ्रूट में पाया जाने वाला एक्टिनिडेन बच्चों सहित कुछ व्यक्तियों के लिए एलर्जी का कारण हो सकता है। सबसे आम लक्षण, खुजली और मुँह की दर्द हैं, सबसे आम गंभीर लक्षण के रूप में घबराहट के साथ एनाफिलेक्सिस/ तीव्रग्राहिता हो सकता है। यह उन लोगों के लिए एलर्जी का काम करता है जिन्हें पपीता और पाइनएप्पल लेटेक्स से एलर्जी है।

जीनस एक्टिनिडिया में लगभग 60 प्रजातियाँ शामिल हैं। उनके फल काफी परिवर्तनशील होते हैं, हालांकि अधिकांश को उनकी उपस्थिति और आकार के कारण आसानी से कीवीफ्रूट के रूप में पहचाना जाता है। फलों की त्वचा का आकार, बालों का रंग और रंग भिन्न होता है। फल के गूदे का रंग, रस, बनावट और स्वाद में भिन्न होता है। कुछ फल बेजोड़ होते हैं, जबकि अन्य का स्वाद अधिकांश व्यावसायिक खेती की तुलना में बेहतर होता है। सबसे अधिक बिकने वाली कीवीफ्रूट, एद डेलिसिओसा (फजी व रुईदार कीवीफ्रूट) से ली गई है। आम तौर पर खाई जाने वाली अन्य प्रजातियों में एद चिनेंसिस (गोल्डन कीवीफ्रूट), एद कोरिएसिया (चीनी अंडे का आँवला), एद अरगुटा (हार्डी कीवीफ्रूट), एद कोलोमिक्टा (आर्कटिक कीवीफ्रूट), एद मेलानेंड्रा (बैंगनी कीवीफ्रूट), एद बहुभुज (चांदी की बेल) और एद पुरपुरिया (हार्दिक लाल कीवीफ्रूट)।

भारत में खेती की जाने वाली मुख्य कीवी किस्में हैं

भारत में कीवी की खेती के लिए मुख्य रूप से इन किस्मो का इस्तेमाल किया जाता है, जिसका विस्तारपूर्वक वर्णन निम्न्वत

है- एबॉट, एलीसन, ब्रूनो, हेवर्ड, मोंटी, मटुआ और टोमुरी।

एबॉटः यह एक प्रारंभिक फूल और प्रारंभिक परिपक्व वाली किस्म है। फल घने बालों से ढंके मध्यम आकार के होते हैं। वे कम एस्कॉर्बिक एसिड मात्रा और मध्यम अनुमापनीय अम्लता के साथ स्वाद में बहुत मीठे होते हैं।

एलीसनः फल एबॉट से मिलता जुलता है, सिवाय इसके कि यह उसकी लंबाई के अनुपात में थोड़ा चौड़ा होता है। इसके फूलों की पंखुड़ियों को मार्जिन के साथ अतिव्यापी और समेटा जाता है। यह एक प्रारंभिक पकने वाला और स्वाद में मीठा होता है इन किस्मो में एस्कॉर्बिक एसिड और टिट्रेटेबल एसिडिटी कम होती है। यह किस्म माध्यम वर्गी पहाड़ो व निचले स्तर के पहाड़ो वाले झेत्र के लिए सबसे अनुकूल है।

ब्रूनोः इस किस्म को तुलनात्मक रूप से कम द्रुतशीतन अवधि की आवश्यकता होती है। फल तने के सिरे की ओर आकार में लम्बे होते हैं। वे सभी किस्मो में सबसे लंबे होते हैं। फल गहरे भूरे रंग के होते हैं, जिनमें घने, छोटे और चमकीले बाल होते हैं, जिसमे एस्कॉर्बिक एसिड सबसे अधिक होता हैं। फल अधिक मात्रा में लगते है।

हेवर्डः दुनिया में अब तक सबसे लोकप्रिय, हेवर्ड द्विवार्षिक के साथ कम फलो के लगने के प्रवृत्ति के कारण तुलनात्मक हैं। फल व्यापक और सपाट है, लंबाई के संबंध में बहुत व्यापक है। सबसे बड़ी कोलुमेला (कीवी के केंद्रीय कोर के लिए प्रयुक्त शब्द) यह उच्च चीनी और कम एस्कॉर्बिक एसिड मात्रा के साथ स्वाद में बेहतर है। इसके लिए तुलनात्मक रूप से अधिक निम्न तापमान की आवश्यकता होती है।

मोंटीः यह देर से फूलने वाली किस्म है लेकिन फल की परिपक्वता देर से नहीं होती है। फल एबॉट और एलीसन के समान ही होता हैं। अच्छे आकार के फल प्राप्त करने के लिए हाथ से फूलों की छाँट करना चाहिए। उच्च अम्लता और मध्यम चीनी मात्रा के साथ फलन अच्छा होता है।

टोमुरीः यह विशेष रूप से हेवार्ड और मोंटी के लिए तथा सभी किस्मो के लिए एक अच्छा परागणकर्ता है, जो देर से फूलने वाली कीवी है। फूल आमतौर पर पाँच के समूह में दिखाई देते हैं।

मटुआः इसका उपयोग विभिन्न कीवी की खेती के लिए परागणक के रूप में भी किया जाता है।

अन्य किस्मः कुएँ में, विल्किंग सुपर, औतरि (इटली), चिको (अमेरिका) हैं।

नई किस्मः हॉर्ट -16 या गोल्डन कीवीफ्रूट (एद अचिनेंसिस) एक चिकनी भूरे रंग की त्वचा, ज़प्री लिमिटेड एनजेड द्वारा गोल्डन पीला गूदे के साथ, ज़ेस्प्री गोल्ड के रूप में विपणन किया गया।

एन्ज़ा रेड (हांग यांग चीनी किस्म का चयन): इसकी जीवन कल कम होता है।

शीर्ष स्टारः हैवार्ड की हेयरलेस कली म्यूटेशन कली किस्म है।

किस्म विल्किन सुपर-एः बहुत बड़े आकार के फल के लिए प्रसिद्ध है।

कम से कम शीतघण्टो वाली किस्मेः एल्मवुड, विंसेंट, समर कीवी-हेवर्ड एक्स समर 4605, मॉन्ट कैप।

एक्टीनीडीए अगुताः एक सजावटी बेल और जापान में छोटे आकार के फल के लिए लोकप्रिय है।

किस्म इस्सल (सेल्फ फर्टाइल) जंबो (बोल्ड साइज़), अकनसन्या।

एक्टिनिडिया प्यूपुरियाः लाल त्वचा, लाल गूदा, एर्गुता के करीबी रिश्तेदार।

निष्कर्ष

कीवी बेल 4-5 साल की उम्र में पैदावार करना शुरू कर देती है जबकि व्यावसायिक उत्पादन 7-8 साल की उम्र में शुरू होता है। कटाई की अवधि क्षेत्र से क्षेत्र में भिन्न होती है। तापमान में भिन्नता के कारण फल पहले कम ऊँचाई पर और बाद में उच्च ऊँचाई पर परिपक्व होते हैं। सोलन के तहत (एच.पी.) परिस्थितियों मे फलों की खेती सितंबर के मध्य से अक्टूबर के तीसरे सप्ताह तक की जा सकती है जबकि शिमला के अंतर्गत फलों की पैदावार अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के अंतिम सप्ताह तक की जाती है। अरुणाचल प्रदेश में दिसंबर से जनवरी का समय चरम पर होता है। कीवी के लिए टी एस एस (कुल घुलनशील ठोस पदार्थ) 6.2% आदर्श है। लेकिन देरी से उनकी भंडारण क्षमता बिगड़ जाती है। कटाई के बाद, उनकी सतह पर पाए जाने वाले कठोर बालों को हटाने के लिए फलों को मोटे कपड़े से रगड़ा जाता है। फलों को बाजार तक पहुँचाया जाता है। इसके बाद, वे दो सप्ताह में अपनी दृढ़ता खो देते हैं और खाद्य बन जाते हैं। औसतन, कीवी उपज 50 से 100 कि.ग्रा. फल/बेल से भिन्न होती है। ट्रेलिस पर कीवी सात वर्षों के बाद लगभग 25 टन/हेक्टेयर का उत्पादन करती है।

❖❖

ABOUT THE SOCIETY

Father of Nation Mahatma Gandhi's concept of rural development meant self-reliance, and least dependence on outsiders. India is an agrarian country and about 65% of our population lives in rural areas. But unfortunately, most of us do not have any idea about the extent of poverty and the real conditions of rural India.

With the purpose of serving the agricultural fraternity and farming community the Society for Advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors (SAAHAS) was founded in 2020 (under Society Registration Act, 1860). Among multifarious ways of serving farming community we are involved in training of the farmers by organising technology dissemination programmes in villages, guiding them to adopt good agricultural practices involving planned crop management. It helps in reducing farm base losses and motivating them to become farmer level entrepreneur rather than a simple producer. It involves initiating skill based knowledge to the student of agriculture, horticulture and allied sectors to encourage them to serve the farmers in the best possible ways.

SAAHAS calls us to look into the genuine problems of farmers and address those issues for their betterment in the arena of Agriculture, horticulture and allied sectors. Besides agriculture, horticultural crop production has been given a major focus by Govt. of India in future crop diversification, improving livelihood through doubling farmers' income, economic opportunities through export and job opportunities. While good beginning is made, much is to be achieved in different areas in agro-horticulture sector.

Apart from that, SAAHAS helps developing the culture to involve more number of women in farming, processing of crops and value addition thereof for higher returns in terms of total income. SAAHAS eagerly involves with the farmers and agriculture entrepreneur to motivate them for introducing hi-tech farming, which includes growing of high value horticultural crops in hydroponics, aeroponics, polyhouse, net house and greenhouse. The society has geared up its activities to take up the challenges of biotic and abiotic stresses, emerging needs of quality seeds and planting material and reducing cost of production.

There are several government and non-government organisations intended of farmer's welfare; still there is dire need for more involvement and attachment with the farmers. Our society's noble initiative can ensure diminishing of the persistent gap between agro-technocrats, scientists with the needy farmers. We not only ensure that the farmers choose right variety of right crop, better nutrient management through diagnosis recommended system and pest diagnosis but we also help them to sale their produce at premium rates. There is a major issue of chemical residues in food, soil and ecology which is also a big concern of the century. The Society also aims to motivate the farmers either for minimal use of chemical inputs or total adoption of organic farming. Consultancy, training, awareness programs, national and international seminars and symposia and technical services are the prime activities of the SAAHAS.

Society for advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors publishes peer reviewed scientific journal, 'Journal of Applied Agriculture and Life Sciences (JAALS)', biannually since January 2020 focusing on articles, research papers and short communications of both basic and applied aspect of original research in all branches of Agriculture, horticulture and other allied sciences. To apprise the scientists and all those who are working in the field of Agriculture, horticulture and allied sectors about recent scientific advancement is the aim of the Journal.